MAED 604 Semester III

दूरस्थ शिक्षा

Distance Education

शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा

अध्ययन बोर्ड			
प्रोफेसर जे0के0 जोशी निदेशक शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी ,उत्तराखण्ड	**प्रोफेसर एन0 एन0 पाण्डेय(सदस्य)** शिक्षा संकाय एम० जे० पी० रुहेलखंड, विश्वविद्यालय, बरेली, उत्तरप्रदेश	**प्रोफेसर गिरिजेश कुमार (सदस्य)** शिक्षा संकाय एम० जे० पी० रुहेलखंड, विश्वविद्यालय, बरेली, उत्तरप्रदेश	**प्रोफेसर रोमेश वर्मा(सदस्य)** शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी ,उत्तराखण्ड
डॉ0 दिनेश कुमार सहायक प्रोफेसर उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 रजनी रंजन सिंह सहायक प्रोफेसर उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	डॉ0 प्रवीण कुमार तिवारी सहायक प्राध्यापक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	सुश्री ममता कुमारी सहायक प्रोफेसर उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड
डॉ0 कल्पना पांडे लखेड़ा सहायक प्राध्यापक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	श्रीमती मनीषा पंत परमर्शदाता उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	श्री सिद्धार्थ पोखरियाल संविदा शिक्षक उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	

पाठ्यक्रम संयोजक एवं संपादक	इकाई संयोजक एवं संपादक
डॉ0 दिनेश कुमार सहायक प्रोफेसर शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	**सुश्री ममता कुमारी** सहायक प्रोफेसर शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, उत्तराखण्ड

इकाई लेखन	इकाई संख्या	इकाई लेखन	इकाई संख्या
डॉ० अजय अत्री, सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, ICDEOL, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला, हिमाचल प्रदेश	1, 2.	श्री राजेश शर्मा, सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, ICDEOL, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला, हिमाचल प्रदेश	3
डॉ० कुलदीप सिंह कटोच, सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, ICDEOL, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला, हिमाचल प्रदेश	4, 5.	श्री चमन लाल बंगा, सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, ICDEOL, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला, हिमाचल प्रदेश	6, 7.

ISBN-13 - 978-81-928871-5-9

समस्त लेखों/पाठों से सम्बंधित किसी भी विवाद के लिए सम्बंधित लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का जूरिसडिक्शन हल्द्वानी (नैनीताल) होगा।

कापीराइट: उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय प्रकाशन वर्ष: जुलाई 2012 पुनः प्रकाशन- 2022

संस्करण: सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति

प्रकाशक: निदेशालय, अध्ययन एवं प्रकाशन

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139, (नैनीताल)

MAED-604 Semester III

दूरस्थ शिक्षा
Distance Education

इकाई सं०	इकाई का नाम	पृष्ठ सं०
1	दूरस्थ शिक्षा: अर्थ, विशेषताएं व कार्य क्षेत्र	1-22
2	दूरस्थ शिक्षा: लक्ष्य, उद्देश्य, आवश्यकता एंव महत्ता	23-37
3	स्वतंत्र भारत में दूरवर्ती शिक्षा का विकास-वर्तमान परिक्षेप में दूरवर्ती शिक्षा की परिस्थिति	38-54
4	दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में केन्द्र सरकार, राज्य सरकार जनसंचार व गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका	55-73
5	दूरस्थ शिक्षा की गुणवत्ता आश्वासन, प्राथमिकताएं तथा चुनौतियां	74-88
6	दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन	89-118
7	दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों की विशेषताएं और समस्याएं	119-141

इकाई-1 दूरस्थ शिक्षा: अर्थ, विशेषताएं व कार्य क्षेत्र

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 दूरस्थ शिक्षा का अर्थ
1.4 दूरस्थ शिक्षा के अंग
1.5 दूरस्थ शिक्षा की परिभाषाएं
1.6 दूरस्थ शिक्षा की विशेषताएं
1.7 दूरस्थ शिक्षा का कार्य क्षेत्र
1.8 प्रासंगिक शब्दावली की व्याख्या
1.8.1 शिक्षा प्रणाली के विभिन्न प्रकार
1.8.2 दूरस्थ शिक्षा तथा पत्राचार शिक्षा
1.8.3 दूरस्थ शिक्षा तथा मुक्त शिक्षा
1.9 महत्वपूर्ण सूचना
1.10 सारांश
1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.12 संदर्भ ग्रंथ व कुछ उपयोगी पुस्तकें
1.13 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

दूरस्थ शिक्षा आज पूरे विश्व में अत्यन्त लोकप्रिय होती जा रही है। डॉ0 सत्यभूषण (1990) इस सम्बन्ध में लिखते हैं, कि पिछले चार दशकों में पूरी दुनिया के विकसित, विकासशील तथा समाजवादी, सभी तरह के देशों में दूरस्थ शिक्षा की अभूतपूर्व, वृद्धि हुई है। इस क्षेत्र में सीमान्त गतिविधि से व्यापक प्रवृति की ओर होने वाला यह परिवर्तन कई कारणों से हैः नामांकन में अत्यधिक वृद्धि के बावजूद सार्वजनिक वृद्धि में कमी, आबादी का जो तबका शिक्षा से वंचित रहा है शिक्षा तक पहुँचने की उसकी बढ़ती चेतना, वे प्रौद्योगिक परिवर्तन जिनके कारण वर्तमान श्रमशक्ति को कुशलता का आभास हुआ है और इसलिए उनको फिर से कुशल बनाया जाना जरूरी है। इसके अलावा शुद्धता संख्या की चुनौती तथा ज्ञान और कौशल के प्रसार की पूर्ति भी उस पारस्परिक वितरण व्यवस्था की क्षमता से बाहर लगती है जो अध्यापक के सामने बैठकर कक्षा में अध्ययन जैसी प्रणाली पर ही पूरी तरह आधारित है यह परिवर्तन अभूतपूर्व है। यह परिवर्तन शिक्षा के क्षेत्र में अनेक नये संम्प्रत्ययों को जन्म दे रहा है। पूरा देश, देश के नागरिक इस व्यवस्था का स्वागत कर रहे हैं। अनेक

संस्थान अपने परम्परागत शिक्षण के साथ-साथ दूरस्थ शिक्षा को भी एक पूरक व्यवस्था के रूप में स्वीकार कर रहे हैं। परम्परागत शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षक विषय के निकट रहकर शिक्षा प्रदान करता है। प्रक्रिया में शिक्षक को छात्रों के समक्ष उपस्थित होना पड़ता है। इसके अलावा एक ही समय में एक साथ सभी छात्रों को एक स्थान पर एकत्रित होना पड़ता है। परन्तु अधिक जनसंख्या वाले देशों में ऐसी संस्थागत परम्परागत व्यवस्था कायम करना कठिन है। अतः दूरस्थ शिक्षा वर्तमान शैक्षिक परिस्थितियों में एक नव-विकसित प्रत्यय है। यह एक अभिनव प्रयोग है। यह अनौपचारिक शिक्षा का एक अंग है। इसमें शिक्षक तथा छात्र का सम्बन्ध दूर का होता है। इसमें शिक्षक दूर होते हुए भी शिक्षा को सीखने वाले के द्वार पर भेजता है। इस प्रत्यय या अवधारणा को दूरस्थ शिक्षा कहते हैं। अनेक सामाजिक, आर्थिक तथा तकनीकी कारणों से शिक्षा प्रदान करने की इस परम्परागत प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस हुई जिसके परिणाम स्वरूप दूरस्थ शिक्षा की गैर परम्परागत उपागम सामने आई।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई में हमारा प्रयास है कि आपको दूरस्थ शिक्षा के अर्थ तथा इसके विभिन्न अंगों से परिचित करा दें। दूरस्थ शिक्षा की समुचित परिभाषा तक पहुँचने के लिए हमने इस क्षेत्र के विभिन्न विचारकों के विचार आपके लिए प्रस्तुत किए हैं जो इसकी विशेषताओं को समझाने में भी मदद करेंगे। साथ ही हमने दूरस्थ शिक्षा के कार्य क्षेत्रों व इससे जुड़ी शब्दावली व दूरस्थ शिक्षा से इनके सम्बन्धों तथा दूरियों को बताने का प्रयास किया है। जिससे दूरस्थ शिक्षा से सम्बन्धित भ्रान्तियों को दूर किया जा सकेगा और दूरस्थ शिक्षा की अवधारणा व कार्यक्षेत्रों को स्पष्ट रूप से समझा जा सकेगा।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1. दूरस्थ शिक्षा के अर्थ को बता पाएंगे।
2. दूरस्थ शिक्षा के विभिन्न अंगों की व्याख्या कर सकेंगे।
3. दूरस्थ शिक्षा को परिभाषित कर सकेंगे।
4. दूरस्थ शिक्षा की विशेषताओं के बारे में जान पाएंगें।
5. दूरस्थ शिक्षा के कार्य क्षेत्रों का वर्णन कर सकेंगे।
6. दूरस्थ शिक्षा व पत्राचार शिक्षा में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे।
7. दूरस्थ शिक्षा व मुक्त शिक्षा में भी अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे।

1.3 दूरस्थ शिक्षा का अर्थ

जैसा कि नाम से स्पष्ट है, दूरस्थ शिक्षा से अभिप्राय दूर बैठकर शिक्षा देने अथवा दूरी बनाकर शिक्षा प्रदान करने से है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि दूरस्थ शिक्षा वह शिक्षा है जिसमें शिक्षा देने वाले तथा शिक्षा प्राप्त करने वाले के बीच दूरी बनी रहती है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक तथा छात्रों के मध्य प्रत्यक्ष रूप से मौखिक

शब्दों का संचार नहीं हो पाता है। दूरस्थ शिक्षा, शिक्षक और छात्रों के मध्य निम्नांकित प्रकार की दूरियों की ओर संकेत करती है-

i. शिक्षक और छात्रों के मध्य स्थान की दूरी (भौतिक दूरी)।
ii. पाठ्य /अधिगम सामग्री के निर्माण और उसके सम्प्रेषण में समय के अन्तराल की दूरी।
iii. पाठ्य या अधिगम सामग्री के सम्प्रेषण तथा उसे पढ़ने और सीखने के बीच की दूरी।

शिक्षण और अधिगम की प्रक्रिया में उपयुक्त प्रस्तुत दूरियों के कारण ही इस प्रकार की शिक्षा को दूरस्थ -शिक्षा कहा जाता है। परम्परागत शिक्षा प्रणाली में शिक्षा देने वाले अर्थात् अध्यापक तथा शिक्षा प्राप्त करने वाले अर्थात् छात्र के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। इसमें अध्यापक अपने सम्मुख बैठे छात्रों को शिक्षा प्रदान करता है। परन्तु इस स्थिति के विपरीत दूरस्थ शिक्षा में अध्यापक तथा छात्र एक दूसरे से विलग रहते हैं। अध्यापक विभिन्न प्रकार के सम्प्रेषण माध्यमों से छात्रों तक ज्ञान पहुँचाता है।
दूरस्थ शिक्षा अनौपचारिक शिक्षा की आधुनिक प्रणाली है। यह पत्राचार कोशों ; सम्पर्क कार्यक्रमों, जन संचार के साधनों आदि के द्वारा प्रदान की जाती है। दूरस्थ शिक्षा में प्रचार, गृहअध्ययन, मुक्त शिक्षण, परिसर युक्त अध्ययन आदि निहित है। इस कारण दूरस्थ शिक्षा के लिये दूरस्थ अधिगम ; स्कूल के बाहर शिक्षा आदि संज्ञाएँ प्रयुक्त की जाती हैं। दूरस्थ शिक्षा मानवीय समाज, तत्कालीन, भविष्य व वर्तमान से सम्बन्धित है।

वर्तमान परिस्थितियों के अनुरूप दूरस्थ -शिक्षा औपचारिक निर्देशित शिक्षण संस्थानों से उचित है। व्यक्ति विद्यालय में ही शिक्षा प्राप्त नहीं करता बल्कि परिवार, समाज, समुदाय, राज्य, धर्म अन्य संस्थाओं से भी शिक्षा प्राप्त करता है। दूरस्थ शिक्षा, शिक्षण-अधिगम् की प्रक्रिया को समाहित करते हुए एक विस्तृत अर्थ वाला शब्द है। यह अनौपचारिक व अंशौपचारिक शिक्षा है। दूरस्थ -शिक्षा में कक्षा की अभिप्रेरणा अध्यापक व शिष्य दोनों में अनुपस्थित है। दूरस्थ शिक्षा, शिक्षा की वह प्रणाली है जो विद्यार्थियों को दूरस्थ से प्रदान की जाती है। इस प्रणाली में दो तत्व महत्वपूर्ण हैः

i. अध्यापक की अप्रत्यक्ष सहभागिता।
ii. अध्यापक की परिवर्तित भूमिका।

दूरस्थ शिक्षा के द्वारा 'शिक्षा सभी तक पहुंचें की धारणा हमारे समक्ष आती है। दूरस्थ शिक्षा की आधुनिक अवधारणा से प्रौढ़ शिक्षा एंव जीवनपर्यन्त शिक्षा के साथ ही पत्राचार पाठ्यक्रम का विचार हमारे समक्ष आया है। दूरस्थ शिक्षा मूलतः ऐसे बालकों एवं प्रौढ़ों के लिये है जो विभिन्न कारणों से नियमित रूप से औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके और नहीं कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में इस शिक्षा का सम्बन्ध शिक्षा को उन व्यक्तियों के द्वार पर पहुँचाना है जो किन्हीं विशेष कारणों से औपचारिक शिक्षा का लाभ प्राप्त करने से वंचित रह जाते हैं या प्राप्त करने में असमर्थ हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. दूरस्थ शिक्षा से आप क्या समझते हैं ?

1.4 दूरस्थ शिक्षा के अंग

निःसन्देह संगठन तथा संरचना की दृष्टि से दूरस्थ शिक्षा एक व्यापक शिक्षा प्रणाली है। संचार साधनों की सहायता से दूरस्थ शिक्षा प्रणाली अध्यापक तथा छात्रों के बीच की दूरी को मिटाती है। इस कार्य में दूरस्थ शिक्षा निम्न साधनों की सहायता लेती हैः-

i. **मुद्रित सामग्री**- दूरस्थ शिक्षा में प्रयुक्त की जाने वाली मुद्रित सामग्री से अभिप्राय विशेष रूप से तैयार की गई छपी हुई सामग्री से है। इसे छात्रगण अपनी इच्छा तथा उपलब्ध समय को ध्यान में रख कर पढ़ते हैं। इसके अंतर्गत स्वतः शिक्षण के पाठ, अध्ययन निर्देशिका, पत्रिकाएं तथा पुस्तकें आती हैं।

ii. **रेडियो तथा दूरदर्शन प्रसारण**- रेडियो तथा दूरदर्शन प्रसारण दूरस्थ शिक्षा में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा प्रभावी साधन के रूप में कार्य कर सकते हैं। इनसे छात्र अपने पाठ्यक्रम से सम्बन्धित ज्ञान घर बैठे ही सीख सकते हैं। एक साथ अनेक स्थानों के छात्रों को रेडियो व दूरदर्शन प्रसारण से शिक्षा दी जा सकती है। कुछ देशों में तो शैक्षिक प्रसारणों के लिए विशेष चैनलों का प्रावधान किया गया है। भारत में भी कुछ विश्वविद्यालय इस ओर अग्रसर हैं।

iii. **श्रव्य-दृश्य सामग्री-** रेडियो तथा दूरदर्शन प्रसारणों के अतिरिक्त भी अन्य श्रव्य-दृश्य साधनों का प्रयोग दूरस्थ शिक्षा में किया जाता है। स्लाइड, चलचित्र, वीडियो कैसेट, आडियो कैसेट, आदि इसमें आते हैं। छात्र इन्हें घर मंगवा कर इनकी सहायता से ज्ञानार्जन कर सकते हैं। अध्ययन केन्द्रों पर भी इनका प्रयोग किया जाता है।

iv. **कम्प्यूटर** – कम्प्यूटर आज के युग का एक अत्यंत उपयोगी साधन बन चुका है। दूरस्थ शिक्षा में भी कम्प्यूटर एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। कम्प्यूटर आधारित शिक्षण का प्रयोग दूरस्थ शिक्षा में किया जाता है। कम्प्यूटर आधारित शिक्षण में छात्र को अपनी त्रुटियों व शंकाओं के निराकरण के अधिक अवसर मिलते हैं। छात्र कम्प्यूटर साफटवेयर मंगवा कर व अपने कम्प्यूटर की सहायता से घर बैठे शिक्षा प्राप्त कर सकता है।

v. **अध्ययन केन्द्र-** विभिन्न प्रकार की सामग्री को अध्ययन करते समय छात्रों के मस्तिष्क में अनेक प्रकार की कठिनाइयां व जिज्ञासाएं आ सकती हैं। इनके निराकरण के लिए अध्ययन केन्द्रों पर छात्रों तथा शिक्षकों/सलाहकारों का प्रत्यक्ष सम्पर्क कराया जाता है। इन अध्ययन केन्द्रों पर छात्र अपनी समस्याओं के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। ये अध्ययन केन्द्र पुस्तकालय, प्रयोगशाला, तथा श्रव्य-दृश्य साधनों से युक्त होते हैं।

अभ्यास प्रश्न

2. अध्ययन केन्द्र दूरस्थ शिक्षा का अभिन्न अंग है,व्याख्या कीजिए।

1.5 दूरस्थ शिक्षा की परिभाषाएं

विभिन्न लोगों ने अपने ज्ञान, बोध और दृष्टिकोण से अलग-अलग ढंग से दूरस्थ शिक्षा को परिभाषित किया है। इसलिए ऐसी कोई परिभाषा नहीं बताई जा सकती है जिस में सभी अर्थ और स्वगुणार्थ शामिल हों। यद्यपि यह कठिन है कि ऐसी परिभाषा हो जो सभी को मान्य हो फिर भी विभिन्न व्यक्तियों ने दूरस्थ शिक्षा की कुछ परिभाषाएं दी हैं। ये परिभाषाएं दूरस्थ शिक्षा के अर्थ व अवधारणा का व्यापक चित्रण करती हैं।आइए, इन परिभाषाओं पर संक्षिप्त टिप्पणी करके देखें क्योंकि ये विस्तृत पक्ष को प्रस्तुत करती है जो दूरस्थ शिक्षा का अंग है।

- वेडमेयर ने अपनी कृतियों में मुक्त अधिगम, दूरस्थ शिक्षा और स्वतंत्र अध्ययन जैसे शब्दों का प्रयोग किया है परन्तु वह अंतिम शब्द स्वतंत्र अध्ययन का प्रयोग निरंतर करता है जिसमें अध्यापक और अध्येता अपने-अपने अनिवार्य कार्य और उत्तरदायित्व एक दूसरे से अलग रह कर पूर्ण करते हैं और वे विभिन्न साधन द्वारा सम्पर्क करते हैं। स्वतन्त्र अध्ययन का उद्देश्य विश्वविद्यालय के छात्रों को कक्षा के अनुपयुक्त स्थान तथा प्रारूप से मुक्त करना है तथा विश्वविद्यालय से बाहर के छात्रों को उनके अपने वातावरण में अध्ययन करते रहने के अवसर प्रदान करना होता है। इस प्रकार से छात्रों में स्वतः निर्धारित अधिगम की क्षमता विकसित होती रहती है।

ध्यान दीजिए, यहां दो प्रकार के स्वतंत्र अध्ययन का सुझाव दिया गया है। एक तो वह अध्येता जो विश्वविद्यालय के परिसर में कक्षा में नियमित रुप में आने की आवश्यकता अनुभव नहीं करता और दूसरे वह अध्येता जो परिसर में नहीं है और अपने आप अध्ययन करते हैं परन्तु यह दोनों प्रकार के अध्येता शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य की व्यापक अवधारणा के अधीनस्थ हैं। इसलिए संयुक्त राज्य अमरीका में स्वतंत्र अध्ययन नामक अभिव्यंजना का महत्व और इसे व्यापक रुप में पत्राचार शिक्षादूरस्थ शिक्षा के लिए प्रयोग में लाया जाता है।

- मूरे (1972 और 1973) दूरस्थ शिक्षा के विशिष्ट लक्ष्यों के प्रति अधिक स्पष्ट है। उसके अनुसार दूरस्थ शिक्षा को शैक्षिक विधियों के एक कुल के रुप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें शिक्षण व्यवहार अधिगम व्यवहार से पृथक संपादित होते हैं। उन व्यवहारों समेत जो मुखाभिमुख स्थिति में अध्येता की उपस्थिति में संपादित होते हैं तथा जिसमें अध्यापक और अध्येता के बीच छपी हुई सामग्री, इलैक्ट्रानिक्स यांत्रिक और अन्य साधनों से संप्रेषण होता रहता है।

उनकी परिभाषा में दूरस्थ शिक्षा के तीन लक्षण दिखाई देते हैं

1. शिक्षण व्यवहार अधिगम व्यवहार से पृथक रहता है (उदाहरणार्थ, पत्राचार पाठ्यक्रम)

2. मुखाभिमुख शिक्षण और अधिगम प्रणाली का अंग है (उदाहरणार्थ, सम्पर्क कार्यक्रम),
3. अधिगम और शिक्षण को प्रभावित करने के लिए इलैक्ट्रानिक्स और अन्य साधन प्रयोग में लाए जाते हैं (उदाहरणार्थ, श्रव्य और वीडियो कैसट प्रयोग किए जाते हैं),

इसमें से प्रथम दो लक्षण वहीं हैं जो वेडमेयर ने बताए हैं। यदि हम वेडमेयर के कथन को विभिन्न विधियों द्वारा सम्प्रेषण करने को समझे तो वह भी वेडमेयर की परिभाषा में आता है। वेडमेयर समाज विज्ञान पर बल देता है तो मूरे सम्प्रेषणात्मक (शैक्षणिक) पक्ष पर बल देता है।

- फिलिप कौम्बस तथा मन्जूर अहमद के अनुसार-"पहले से स्थापित (चल रही परम्परागत) औपचारिक शिक्षा के क्षेत्र से बाहर चलने वाली सुसंगठित शैक्षिक प्रणाली को दूरस्थ शिक्षा कहा जाता है। यह एक स्वतन्त्र प्रणाली के रूप में अथवा किसी बड़ी प्रणाली के अंग के रूप में सीखने वालों के एक निश्चित समूह को निश्चित शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये मदद देती है"।
- दोहमैन के अनुसार (1967) ''दूरस्थ शिक्षा उचित रूप में आत्म् अध्ययन के रूप में संगठित है जिसमें विद्यार्थियों की काउंसलिंग, अधिगम सामग्री का प्रस्तुतीकरणतथा विद्यार्थियों का पर्यवेक्षण व शिक्षकों के उतरदायित्व सम्मिलित हैं"।

उन्होंने दूरस्थ शिक्षा को यह कह कर परिभाषित किया है कि यह स्व-अध्ययन का व्यवस्थित स्वरुप है जिसमें विद्यार्थी को उपबोधन देना, अध्ययन सामग्री को प्रस्तुत करना और उसकी सफलता का निरीक्षण अध्यापकों की टीम द्वारा होता है जिसमें प्रत्येक अध्यापक का एक उत्तरदायित्व होता है। यह संचार के विभिन्न साधनों द्वारा दूर तक पहुँचाई जा सकती है।यह परिभाषा स्व-अध्ययन के महत्त्व को बल देती है। दूरस्थ शिक्षा के इस लक्षण पर वेडमेयर दूरस्थ शिक्षा, शिक्षा को उपभोक्ता तक पहुंचाने में सहायता करती है।
अब हम दूरस्थ शिक्षा प्रक्रिया को सैद्धांतिक पक्ष के रूप में परिभाषित करेंगे।

- पीटर्ज (1973) के अनुसार- ''दूरस्थ शिक्षा अप्रत्यक्ष अनुदेशन की विधि है जिसमें शिक्षक तथा शिक्षार्थी में भौगोलिक एवं भावात्मक पृथकता रहती है, जबकि शिक्षा की मुख्य धारा में शिक्षक एवं छात्र का कक्षा में सम्बन्ध सामाजिक नियमों पर आधारित रहता है और दूरस्थ शिक्षा में यह सम्बन्ध प्रौद्योगिक नियमों पर आधारित होता है"।

पीटर्स कहते हैं कि दूरस्थ शिक्षा ज्ञान व कौशल देने और अभिरूचियां पैदा करने का तरीका है जो श्रम विभाजन के तर्कसंगत प्रयोग और संगठनात्मक सिद्धान्तों के साथ तकनीकी साधनों का विशेष रूप से प्रयोग होता है जिससे उच्च स्तर की शिक्षा सामग्री बनाई जाती है; जिसके माध्यम से बहुत से छात्रों को अलग-2 स्थानों पर पढ़ाना सम्भव हुआ है। यह शिक्षण अधिगम का एक औद्योगिक स्वरूप है।
पीटर्स की परिभाषा रोचक है क्योंकि तकनीकी साधनों के प्रयोग के अतिरिक्त जन शिक्षा की प्रकृति को बल देती है जिससे कि दूरस्थ शिक्षा औद्योगिक समाज का रूप प्राप्त करती है। यह भी संभव है कि दूरस्थ शिक्षा औद्योगिक समाज की नई और विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप हो और जहां सभी गतिविधियों यहां तक कि शिक्षा भी समय के अनुरूप हो।

- मालकम आदिशेषैया (1981) के अनुसार- ''दूरस्थ शिक्षा का तात्पर्य उस शिक्षण प्रक्रिया से है, जिसमें स्थान और समय के आयाम शिक्षण और अधिगम के मध्य हस्तक्षेप करते हैं"।
- होल्मबर्ग (1981) ने दूरस्थ शिक्षा को परिभाषित करते हुए कहा है कि ''दूरस्थ शिक्षा अध्ययन के अनेक प्रकारों में से एक है जो कक्षा में अपने छात्रों के साथ उपस्थित अध्यापकों के निरंतर तात्कालिक निरीक्षण से रहित है तथा जिनमें वे सभी शिक्षण विधियां समाहित रहती हैं जिनमें मुद्रण, यांत्रिक अथवा इलेक्ट्रानिक तकनीकों के द्वारा शिक्षण किया जाता है"।

होल्मबर्ग के द्वारा दी गई परिभाषा से स्पष्ट है कि दूरस्थ शिक्षा एक व्यापक प्रत्यय है जिसमें शिक्षा प्रदान करने की कई विधियां समाहित हो सकती हैं परन्तु दूरस्थ शिक्षा में अध्यापक तथा छात्र के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध का अभाव रहता है एवं इस प्रकार की शिक्षा अधिगम प्रक्रिया को सुचारू ढंग से प्रभावी बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के सम्प्रेषण साधनों का प्रयोग करती है।होल्मवर्ग की परिभाषा में जो रोचक बात है वह है कि दूरस्थ शिक्षा को एक व्यवस्थित शैक्षिक कार्यक्रम के रूप में देखा जा रहा है।

आइए, अब हम कीगन की परिभाषा को देखें जिसने दूरस्थ शिक्षा की विभिन्न परिभाषाओं के भिन्न-भिन्न पक्षों को एक सूत्र में बांधा है।

- कीगन (1986) ने दूरस्थ शिक्षा की व्यापक परिभाषा दी है जिसमें सभी आवश्यक तत्व शामिल है। वह दूरस्थ शिक्षा को परिभाषित करते हुए कहता है कि यह शिक्षा का वह रूप है जिसकी निम्नलिखित विशेषताएं है:
  1. अधिगम प्रक्रिया में पूरे समय अध्यापक और अध्येता का अर्द्ध स्थाई पृथक्करण होता है। इस प्रकार यह परम्परागत प्रत्यक्ष (आमने-सामने) शिक्षा से भिन्नता दिखलाता है।
  2. योजना और अधिगम सामग्री के तैयार करने और छात्रों की सहायता सेवा पर शैक्षिक संगठन का प्रभाव होता है और यह ही निजी अध्ययन और (टीच योरसैल्फ कार्यक्रम) स्व अध्ययन में अंतर करता है।
  3. तकनीकी माध्यमों, छपी हुई सामग्री, श्रव्य वीडियों या कम्प्यूटर; अध्यापक और अध्येता में सम्पर्क बनाते हैं और पाठ्यक्रम की विषय वस्तु को आगे बढाते हैं।
  4. द्विमार्गी सम्प्रेषण की व्यवस्था होती है ताकि छात्र लाभ उठा सके या संवाद आरंभ कर सके। यह ही शिक्षा के अन्य तरीकों से भिन्नता प्रदान करता है।
  5. अर्द्धस्थाई रूप से अधिगामि; समूह अधिगम प्रक्रिया से पूरे समय अलग रहता है जिसके परिणामस्वरूप उन्हें व्यक्तिगत रूप में पढ़ाया जाता है, समूह में नहीं।

कीगन ने दूरस्थ शिक्षा की अनेक परिभाषाओं का विश्लेषण करने के बाद होल्मबर्ग के द्वारा प्रस्तुत की गई परिभाषा को सर्वाधिक उपयुक्त स्वीकार किया।

- जी॰ रामा रेड्डी (1988) ने दूरस्थ शिक्षा को ''एक प्रवर्तनकारी अपारम्परिक तथा अरूढ़ प्रणाली के रूप में शिक्षा परिसरों में तथा शिक्षा परिसरों से बाहर अध्ययनरत दोनों प्रकार के छात्रों की

आवश्यकता पूरी करने वाला बताया है। वे आगे कहते हैं कि बुनियादी तौर पर दूरस्थ शिक्षा प्रणाली का जोर छात्र तथा शिक्षक के अलगाव पर है जिससे छात्रों को स्वायत्त रूप से सीखने का अवसर मिलता है। दोनों के मध्य जो भी माध्यम हो उसके द्वारा परस्पर संचार स्थापित किया जाता है, जैसे- डाक या इलैक्ट्रॉनिक प्रेषण, टेलीफोन, टेलीफैक्स, व टेली आदि।

- डा॰ कुलश्रेष्ठ के शब्दों में ''दूरस्थ शिक्षा व्यापक तथा अनौपचारिक शिक्षा की एक विधि है जिसमें दूर-दूर स्थानों पर बैठे छात्र, शैक्षिक तकनीकी द्वारा प्रायोजित विकल्पों में से किन्हीं निश्चित विकल्पों का प्रयोग करते हुये शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति कर लेते हैं। ये विकल्प निम्न प्रकार के हो सकते हैं- (1) भली भांति संचित स्व-अनुदेशन सामग्री, (2) पुस्तकों, सन्दर्भों तथा शोध पत्रिकाओं (जर्नल्स) के सैट, (3) चार्ट, माडल, पोस्टर तथा अन्य दृश्य सामग्री, (4) टेलीविजन/रेडियो प्रसारण (5) टेलीकौनफ्रेंसिंगआदि।

दूरस्थ शिक्षा को विभिन्न विद्वानों ने परिभाषित करने के प्रयास किए हैं। दूरस्थ शिक्षा के भिन्न-भिन्न पहलुओं पर बल दिए जाने के कारण दूरस्थ शिक्षा की परिभाषाओं में अन्तर दृष्टिगोचर होता है।अन्त में, हम कह सकते हैं कि दूरस्थ शिक्षा में छात्रों को शिक्षकों के आमने-सामने बैठकर व्याख्यान सुनने का अवसर नहीं मिलता है अन्यथा इसमें खुले अधिगम को सम्प्रेषण माध्यमों या शिक्षा तकनीकी के द्वारा सीखने वालों तक पहुंचाया जाता है। दूरदर्शन की सहायता से भी शिक्षक छात्रों तक पहुंचकर शिक्षा प्रदान कर सकता है। इसके अन्तर्गत शिक्षक छात्र अन्तः क्रिया एक पक्षीय होती है। इस प्रकार दूरस्थ शिक्षा का प्रमुख ध्येय खुले अधिगम के लिए परिस्थिति उत्पन्न करना है।

अभ्यास प्रश्न

3. कीगन ने दूरस्थ शिक्षा की अनेक परिभाषाओं का विश्लेषण करने के बाद किसकी परिभाषा को सर्वाधिक उपयुक्त स्वीकार किया।

1.6 दूरस्थ शिक्षा की विशेषताएं

दूरस्थ शिक्षा ने अनौपचारिक रुप से सार्थक शिक्षा की अवधारणा को सशक्त बनाया है, जीवनोपयोगी शिक्षा तथा कौशल के विकास के जीवन के रहन-सहन को सुधारने तथा जीवनोपयोगी करने में सार्थक शिक्षा के महत्व को बढ़ाया है। यही कारण है कि सार्थक शिक्षा तथा दूरस्थ शिक्षा, चोली दामन के रुप में उभरे हैं। कीगन ने दूरस्थ शिक्षा की अनेक परिभाषाओं का विश्लेषण करने के बाद होल्मबर्ग के द्वारा प्रस्तुत की गई परिभाषा को सर्वाधिक उपयुक्त स्वीकार किया। होल्मबर्ग के द्वारा दी गई परिभाषा से स्पष्ट है कि दूरस्थ शिक्षा एक व्यापक प्रत्यय है जिसमें शिक्षा प्रदान करने की कई विधियां समाहित हो सकती हैं परन्तु दूरस्थ शिक्षा में अध्यापक तथा छात्र के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध का अभाव रहता है एवं इस प्रकार की शिक्षा अधिगम प्रक्रिया

को सुचारू ढंग से प्रभावी बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के सम्प्रेषण साधनों का प्रयोग करती है। दूरस्थ शिक्षा की प्रमुख विशेषताएं निम्नवत हैं-

1. **शिक्षक-छात्र विभेद**- दूरस्थ शिक्षा में प्रायः सभी सामग्री पूर्व संचित होती है। इस सामग्री में सम्पूर्ण निर्देश होते हैं। इन निर्देशों के अनुसार छात्र अपनी तैयारी करता है। क्योंकि औपचारिक शिक्षा की तरह गुरु-शिष्य के आमने-सामने होने वाली अवधारणा इसमें नहीं होती ।
2. **कार्यक्रम विभेद**- दूरस्थ शिक्षा में शिक्षण अधिगम की सामग्री की संरचना तथा तैयारी इस ढंग से करनी पड़ती है जिससे औपचारिक शिक्षा की कार्य प्रणाली तथा कार्यक्रम का भेद स्पष्ट हो जाये। निजी अध्ययन - स्वयं अपने को सिखाओ आदि कार्यक्रम इस विभेद के उदाहरण हैं।
3. **शैक्षिक प्रौद्योगिकी**- इसमें शैक्षिक तकनीकी के विभिन्न माध्यमों; जैसे मुद्रित तथा अमुद्रित दोनों प्रकार के माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। प्रौद्योगिकी के विकसित उपकरणों, का उपयोग शिक्षा के क्षेत्र में किया जाने लगा है। मुद्रित सामग्री, दृश्य-श्रव्य साधन, दूरदर्शन, आकाशवाणी, कम्प्यूटर आदि शिक्षक, पाठ्यक्रम तथा छात्र को जोड़ते हैं।
4. **दोतरफी संवाद व्यवस्था**- दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक तथा छात्रों का सम्बन्ध आमने-सामने का नहीं होता। इससे अधूरापन अनुभव होता है। अतः सम्पर्क कार्यक्रम से दोतरफी संवाद व्यवस्था की गई है।
5. **व्यक्तिगत अध्ययन-** दूरस्थ शिक्षा में सामूहिक शिक्षा के अवसर कम तथा व्यक्तिगत अध्ययन के अवसर अधिक होते हैं। सम्पर्क सत्र में सामूहिकता का विकास होने की सम्भावनायें बढ़ जाती हैं।
6. **औद्योगीकृत विशेषता**- दूरस्थ शिक्षा में औद्योगीकरण का प्रभाव स्पष्ट लक्षित है। इससे व्यक्ति या छात्र की रुचि वैयक्तिक विकास में होती है। इसलिए निजी अध्ययन में छात्र रुचि लेता है।
7. **अंश-औपचारिक शिक्षा** - दूरस्थ शिक्षा अंश औपचारिक शिक्षा पद्धति है जिसे पत्राचार-शिक्षा, मुक्त शिक्षा, मुक्त अधिगम, मुक्त शिक्षण, मुक्त विश्वविद्यालय आदि भी कहा जाता है।
8. **शिक्षार्थी-केन्द्रित** – दूरस्थ शिक्षा शिक्षार्थी-केन्द्रित होती है। यह शिक्षार्थी की आवश्यकताओं एवं सुविधा पर केन्द्रित होती है। शिक्षार्थी अपनी गति एवं सुविधा के अनुसार सीखता है और उसे विषयों के चयन में भी स्वतन्त्रता होती है।इसमें स्व-अध्ययन पर अधिक बल दिया जाता है।
9. **लचीलापन-** प्रवेश प्राप्त करने की योग्यताओं के दृष्टिकोण से दूरस्थ शिक्षा लचीली होती है। इस दृष्टिकोण से भी यह लचीली है कि एक कोर्स कई निश्चित वर्षों में समाप्त किया जा सकता है।
10. **अप्रत्यक्ष शिक्षा**- दूरस्थ शिक्षा अप्रत्यक्ष शिक्षा-पद्धति है क्योंकि इस में आमने-सामने शिक्षा प्रदान नहीं की जाती। शिक्षार्थी अपने अध्यापकों तथा सहपाठियों से अलग रहता है। अध्यापक और विद्यार्थियों में केवल डाक द्वारा सम्पर्क रहता है।
11. **दूरस्थ शिक्षा** जन-शिक्षा की पद्धति है। यह शिक्षा को उन लाखों लोगों के पास ले जाती है जो किसी संस्था में नियमित रूप से शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके।
12. **जन-माध्यम-** इसमें रेडियो, दूरदर्शन, वीडियों, कम्प्यूटर, पत्राचार आदि जन-माध्यमों का उपयोग अध्यापक व छात्र के बीच सम्बन्ध स्थापित करने के लिए किया जाता है।

13. **आसान पहुँच**-दूरस्थ शिक्षा ऐसे क्षेत्रों में भी पहुंच जाती है जहां कोई स्कूल तथा कालेज नहीं होता। देश के सुदूर क्षेत्रों तक इस की पहुंच है। यह उन लोगों को भी प्राप्त हो सकती है जो शारीरिक एवं मानसिक बाधाओं के कारण शिक्षा-संस्थाओं में नियमित रूप से शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते।
14. **डिग्री या डिप्लोमा आवश्यक नहीं**- दूरस्थ -शिक्षा किसी डिग्री या डिप्लोमा के लिये हो भी सकती है और नहीं भी हो सकती।
15. **कम खर्चीली**-दूरस्थ शिक्षा पर खर्चा भी ज्यादा नहीं होता। अतः यह कम खर्चीली है।
16. **पर्यवेक्षण नहीं** – दूरस्थ शिक्षा में तात्कालिक पर्यवेक्षण शिक्षक द्वारा नहीं होता है।
17. **व्यक्ति आधारित**- दूरस्थ शिक्षा सामाजिक आधारित नहीं व्यक्ति आधारित होती है। इसमें अधिगम सामग्री की तैयारी तथा उसके सम्प्रेषण पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
18. **द्विमार्ग सम्प्रेषण-** इसमें द्विमार्गी सम्प्रेषण का प्रविधान किया जाता है जिससे छात्र अध्यापकों से सम्बन्ध करके अपनी कठिनाईयों का निवारण कर सकें।
19. **समान्तर प्रणाली** – यह एक समान्तर अंशकालिक प्रणाली है जिसमें व्यस्कों को डिप्लोमा, डिग्रियाँ प्राप्त करने के अवसर प्राप्त होते हैं।
20. **स्वयं सीखने की विधि** – दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थी आत्म-निर्भर रहता है क्योंकि उसे स्वयं सीखना पड़ता है।
21. **प्रभावशाली-** दूरस्थ शिक्षा मनोवैज्ञानिक के साथ समाजशास्त्रीय रूप से भी प्रभावशाली है।
22. **लोकतान्त्रिक**- दूरस्थ शिक्षा प्रकृति में लोकतान्त्रिक है क्योंकि देश के सभी लोग अपनी शैक्षणिक इच्छाओं की पूर्ति इस प्रणाली द्वारा कर सकते हैं।
23. **संस्थागत नहीं-** यह शिक्षा स्थान, काल, आदि से सम्बन्धित नहीं होती है। दूरस्थ शिक्षा संस्थागत नहीं होती है वरन् पत्राचार, प्राइवेट अध्ययन, परिसर मुक्त, गृह अध्ययन;स्वतंत्र अध्ययन आदि के रूप में प्रदान की जाती है।
24. इस शिक्षा में बहु-आयामी पाठ्यक्रमों का समावेश होता है।
25. इस प्रणाली में छात्रों को अधिगम शुरू करने और खत्म करने की अपनी क्षमता के अनुसार स्वतन्त्रता होती है।

अभ्यास प्रश्न

4. दूरस्थ शिक्षा के सम्पर्क कार्यक्रमों की महत्ता पर प्रकाश डालिए।

1.7 दूरस्थ शिक्षा का कार्य-क्षेत्र

दूरस्थ शिक्षा ने परम्परागत/रूढिगत संस्थाओं में पत्राचार शिक्षा के रूप में अपना सूत्रपात किया और शिक्षण के साधन के रूप में छपी हुई सामग्री का प्रयोग किया। आज दूरस्थ शिक्षा संस्थाएं स्वतंत्र स्वायत्त संगठन के रूप में उभरी है जैसा कि मुक्त विश्वविद्यालय बहु-माध्यमी के द्वारा मुक्त शिक्षा दे रहे हैं। दूरस्थ शिक्षा जैसे

रूढिवादी/परम्परागत शिक्षा के पूरक और सम्पूरक रूप में देखा जाता था आज वह वैकल्पिक रूप में उभर कर सामने आई है और यह परम्परागत शिक्षा के समान्तर माध्यम के रूप में कार्य कर रही है।

हमारे देश में दूरस्थ शिक्षा मुख्य रुप से दो रुपों में चल रही है- पत्राचार शिक्षा और खुली शिक्षा। अभी तक दोनों का क्षेत्र माध्यमिक एवं उच्च स्तर की शिक्षा व्यवस्था तक सीमित है, (जैसे राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय और मुक्त विश्वविद्यालय)। इनके द्वारा प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था नहीं की जा रही है। इनके अतिरिक्त अन्य अभिकरणों द्वारा दूर संचार के माध्यमों से जिन शैक्षिक कार्यक्रमों का प्रसारण हो रहा है वे प्रौढ़ शिक्षा और जन शिक्षा तक सीमित हैं।

जहाँ तक माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था की बात है पत्राचार शिक्षा और खुली शिक्षा दोनों के द्वारा माध्यमिक स्तर (कक्षा 9 तथा 10) की व्यवस्था तो सम्पूर्ण रुप से की जा रही है परन्तु उच्च माध्यमिक (कक्षा 11तथा 12) शिक्षा की व्यवस्था पत्राचार प्रणाली द्वारा तो केवल कला एवं वाणिज्य वर्ग की शिक्षा की जा रही है जबकि खुली शिक्षा द्वारा सम्पूर्ण रुप से की जा रही है। यही स्थिति उच्च शिक्षा की व्यवस्था के क्षेत्र में है- पत्राचार शिक्षा द्वारा केवल कला एवं वाणिज्य और प्रबन्ध शिक्षा की व्यवस्था की जा रही है जबकि खुली शिक्षा द्वारा इनके साथ-साथ विज्ञान, व्यावसायिक एवं तकनीकि शिक्षा की व्यवस्था की जा रही है। खुले विश्वविद्यालयों द्वारा तो अनेक नए-नए पाठ्यक्रम भी चलाए जा रहे हैं और साथ ही प्रौढ़ शिक्षा, सतत् शिक्षा और जन शिक्षा की व्यवस्था में भी सहयोग किया जा रहा है। संचार और शैक्षिक प्रौद्योगिकी के विकास से दूरस्थ शिक्षा प्रणाली समग्र रूप से विकसित हुई है जिसके फलस्वरूप प्रवेश, समानता और शिक्षा का स्तर बढ़ा है। वर्तमान में दूर शिक्षा उन लोगों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता रखती है:

1. जो परम्परागत शिक्षा में प्रवेश नहीं पा सके।
2. जो शैक्षिक सुविधाओं से वंचित रहे।
3. जो परम्परगत संस्थाओं में अपनी शिक्षा जारी नहीं रख सके।
4. जो लोग बेरोजगार है और अपनी शिक्षा जारी नहीं रख सके।
5. जो लोग बेरोजगार है और अपनी शिक्षा को घर पर जारी रखना चाहते हैं।
6. जो व्यावसायिक प्रशिक्षण और अनुकूलन करने के इच्छुक हैं।
7. जो अपनी सामान्य शिक्षा, व्यवसायिक या तकनीकी शिक्षा परम्परागत प्रणाली से बाहर जारी रखना चाहते हैं।
8. जो लोग भौतिक, आर्थिक, भौगोलिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हैं।
9. जो लोग संगठित या असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं।

यह समान रूप से व्यवसायी प्रशिक्षण और अन्य मानव संसाधनों की आवश्यकताओं और शिक्षा, उद्योग, स्वास्थ्य और कल्याण, इंजीनियरिंग और प्रौद्योगिक, कृषि आदि सभी क्षेत्रों की मांग को पूरा कर सकती है। आज अधिकतर देशों के कई दूरस्थ शिक्षा संस्थानों द्वारा विभिन्न प्रकार के पाठयक्रम चलाए जा रहे हैं और सभी आयु वर्ग के कई करोड़ विद्यार्थी लाभ उठा रहे हैं।

दूरस्थ शिक्षा जीवन पर्यन्त विभिन्न शैक्षिक आवश्यकताओं और विभिन्न वर्ग के लोगों की आकांक्षाओं को पूरी करने की क्षमता रखती है और इस प्रकार अधिगमोमुख समाज बनाने का मार्ग प्रशस्त करती है।

अभ्यास प्रश्न

5. दूरस्थ शिक्षा के कार्य क्षेत्र की व्याख्या कीजिए।

1.8 प्रासंगिक शब्दावली की व्याख्या

यह इस इकाई का अन्तिम भाग हैं। हम आपको इसे ध्यान से पढ़ने की सलाह देना चाहेंगे। इस परिचर्या में हम शिक्षा प्रणाली के अनेक प्रकारों के बारे में बताना चाहते हैं व इनसे जुड़ी हुई कुछ शब्दावली के बारे में विवेचन करेंगे। यहां पर कुछ रोचक क्रियायें प्रस्तावित की गई हैं जो कि आपको भी निभानी हैं।

1.8.1 शिक्षा प्रणाली के विभिन्न प्रकार

आइए, एक सरल क्रिया द्वारा हम इस भाग को शुरू करते हैं। हमारे देश की शिक्षा प्रणाली को प्रदर्शित करती हुई तीन विभिन्न पठन-पाठन क्रियाओं को नीचे उद्घाटित किया गया है। इन स्थितियों को ध्यानपूर्वक पढ़ें।

स्थिति 1: यह कक्षा में पठन-पाठन की स्थिति है। अध्यापक पूर्वनिर्धारित पाठ्यक्रम को पढ़ाने के लिए उत्तरदायी है। अध्यापक संप्रेषण के लिए मौखिक विधि का इस्तेमाल करता है। यह ऐसी स्थिति है जहां विद्यार्थी अपने अध्यापक व सहपाठियों के साथ अंतःक्रिया करता है व अध्यापक द्वारा सुझाए प्रयोगों एवम् विभिन्न क्रियाओं को निभाता है। विद्यार्थी इस प्रक्रिया के दौरान अपने प्रश्नों, जिज्ञासाओं का समाधान भी अपने अध्यापक से पा लेता है। इस प्रकार की पठन-पाठन स्थिति पूर्णतया अध्यापक नियंत्रित होती है।

स्थिति 2: यह पठन-पाठन की वह स्थिति है जिसमें अध्यापक व विद्यार्थी के बीच में आमने -सामने का सम्पर्क नहीं है। उनके मध्य पत्राचार द्वारा ही सम्पर्क होता है। इस स्थिति में मुद्रित पाठ ही विद्यार्थी के सीखने के माध्यम होते है।

स्थिति 3: यह पठन-पाठन की अन्य तरह की प्रणाली है जहां अमुद्रित शिक्षण माध्यम जैसे कि रेडियो टी. वी. (रेडियोवीक्षन) दूरभाष परिकलक, कम्पयूटरइलैक्ट्रानिक एवं अन्य विद्युतचलित माध्यमों द्वारा विद्यार्थी को मुद्रित सामग्री के साथ सहायता पहुंचाई जाती है। इसके अतिरिक्त यह अमुद्रित माध्यम विद्यार्थी के साथ द्विआयमी संपर्क के लिए भी उपयुक्त है।

अभ्यास प्रश्न

6. शिक्षा की उन तीन प्रणालियों के नाम लिखें जो कि आपने समझी है।

वस्तुतः प्रयुक्त-अधिगम तकनीक तथा लगाये गये प्रतिबन्ध के आधार पर शिक्षा प्रणाली को अनेक प्रकारों में बांटा जा सकता है। शिक्षण अधिगम तकनीक के आधार पर शिक्षा प्रणाली तीन प्रकार की हो सकती हैं-

i. शिक्षण नहीं केवल स्व-अध्ययन पर आधारित स्वयं शिक्षा
ii. विभिन्न सम्प्रेषण साधनों के द्वारा संचालित शिक्षण-अधिगम पर आधारित दूरस्थ शिक्षा
iii. आमने-सामने बैठकर शिक्षण-अधिगम पर आधारित परम्परागत शिक्षा ।

इसके विपरीत शिक्षा प्रणाली में लगाये गये विभिन्न प्रतिबन्धों के आधार पर शिक्षा प्रणाली दो प्रकार की हो सकती है-

i. प्रवेश, उपस्थिति, पाठ्य-विषय, परीक्षा, अध्ययन स्थान तथा अध्ययन समय आदि से सम्बन्धित कठोर प्रतिबन्धों से युक्त परम्परागत शिक्षा, तथा
ii. प्रवेश, उपस्थिति, पाठ्य-विषय, परीक्षा, अध्ययन स्थान तथा अध्ययन समय आदि के लिए लचीलता व उदार प्रतिबन्धों वाली मुक्त शिक्षा।

- **स्वयं शिक्षा ; में किसी भी प्रकार के प्रतिबन्धों का प्रश्न ही नहीं उठता है।**

उपरोक्त द्वि-मार्गी वितरण के आधार पर कुल छह प्रकार की शिक्षा प्रणाली हो सकती हैं। ये छह प्रकार हैं-

1. **परम्परागत औपचारिक शिक्षा-** कठोर प्रतिबन्ध तथा आमने सामने बैठकर शिक्षण अधिगम।
2. **अनौपचारिक शिक्षा-** शिथिल व उदार प्रतिबन्धों से युक्त आमने-सामने बैठकर शिक्षण अधिगम वाली शिक्षा।
3. **दूरस्थ शिक्षा -** प्रतिबन्ध कठोर अथवा शिथिल हो सकते हैं परन्तु सम्प्रेषण तकनीकों के द्वारा शिक्षण अधिगम वाली शिक्षा ।
4. **पत्राचार शिक्षा-** कठोर प्रतिबन्ध तथा डाक प्रणाली के द्वारा शिक्षण-अधिगम प्रदान करने वाली शिक्षा । पत्राचार शिक्षा को परम्परागत शिक्षा भी जाना जाता है। यह प्रिन्ट सामग्री व डाक द्वारा भेजी जाती है। कोठारी आयोग की सिफारिश पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने विश्वविद्यालयों में पत्राचार शिक्षा की सुविधा प्रदान की। पत्राचार कोर्स सबसे पहले दिल्ली विश्वविद्यालय में शुरू किया गया था। ग्लाइटर और वेडिल के अनुसार: ''पत्राचार शिक्षा, अनुदेशन और शिक्षा की एक ऐसी सुगठित व्यवस्था है जिसमें पाठ डाक द्वारा प्रेषित किये जाते हैं। पत्राचार शिक्षा की सम्पूर्ति दूर संचार के माध्यमों द्वारा तथा आमने सामने बैठकर दी जाने वाली शिक्षा द्वारा की जाती है। ओ॰ मैकाण्जी और पी॰ रिगबाए के अनुसार; ''पत्राचार संस्थान अनुदेशन की वह विधि है जिसमें पत्राचार का अर्थ संस्थान में अध्यापक व विद्यार्थी के बीच सम्प्रेषण से है''।पत्राचार शिक्षा में मुद्रित या टाइप की गई पाठ्यसामग्री डाक द्वारा दूर दराज के क्षेत्रों में रहने वाले छात्र-छात्राओं को प्रेषित की जाती है।

5. **मुक्त शिक्षा -** शिथिल प्रतिबन्ध तथा सम्प्रेषण तकनीकों के द्वारा शिक्षण अधिगम वाली शिक्षा प्रदान करने वाली शिक्षा। मुक्त शिक्षा अथवा मुक्त अधिगम वह शिक्षा है जो मुक्त विश्वविद्यालयों द्वारा प्रदान की जाती है। इससे अभिप्राय है कि ऐसी शिक्षा जिसमें परम्परागत कक्षा के कमरे न हों। वर्तमान में पत्राचार संस्थान के साथ मुक्त विश्वविद्यालय दूरस्थ शिक्षा को प्रदान करने में भूमिका अदा कर रहे हैं। पत्राचार संस्थाएं परम्परागत विश्वविद्यालयों से सम्बन्धित है जहाँ पाठ्यक्रम, परीक्षा व नियम परम्परागत विश्वविद्यालयों द्वारा निर्देशित होते हैं।
6. **स्वंय शिक्षा -** शिक्षक नहीं वरन् स्वयं के प्रयासों से अधिगम वाली शिक्षा।

1.8.2 दूरस्थ शिक्षा तथा पत्राचार शिक्षा

यद्यपि 'दूरस्थ शिक्षा' शब्द 'पत्राचार शिक्षा' से विकसित हुआ है परन्तु दूरस्थ शिक्षा का प्रत्यय पत्राचार शिक्षा से कुछ भिन्न है। वस्तुतः दूरस्थ शिक्षा का प्रत्यय पत्राचार शिक्षा से अधिक व्यापक व विस्तृत है। दूरस्थ शिक्षा के प्रत्यय में पत्राचार शिक्षा समाहित है। दूरस्थ शिक्षा के समान पत्राचार शिक्षा भी औपचारिक परम्परागत शिक्षा संस्थाओं में उपस्थित होने में असमर्थ छात्रों को शिक्षा प्रदान करने की प्रणाली है। परन्तु पत्राचार शिक्षा में जहां केवल डाक प्रणाली का प्रयोग शिक्षक व शिक्षार्थी के बीच सम्बन्ध स्थापित करने के लिए किया जाता है वहीं दूरस्थ शिक्षा में डाक प्रणाली के साथ-साथ रेडियो दूरदर्शन व कम्प्यूटर आदि अन्य सम्प्रेषण माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। पत्राचार शिक्षा को प्रायः परम्परागत शिक्षा का एक विस्तार माना जाता है जिसमें छात्रों को पाठ मौखिक न देकर मुद्रित रूप में दिये जाते हैं। परन्तु दूरस्थ शिक्षा में बहु-माध्यम शिक्षा प्रणाली का उपयोग किया जाता है। पत्राचार के द्वारा प्रायः परम्परागत विषयों की सामान्य शिक्षा ही दी जाती है जबकि दूरस्थ शिक्षा प्रणाली का प्रयोग व्यवसायिक प्रशिक्षण व उच्च स्तरीय सतत शिक्षा के लिए भी किया जाता है। यहां यह बात ध्यान में रखने की है कि पत्राचार शिक्षा तथा दूरस्थ शिक्षा दोनों में ही कभी-कभी सम्पर्क कार्यक्रमों का आयोजन शिक्षण-अधिगम को पुष्ट करने के लिए किया जाता है। सम्पर्क कार्यक्रमों में छात्रगण अल्पावधि के लिए अध्यापकों के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आकर अपनी कठिनाइयों का निवारण करते हैं तथा भावी अध्ययन हेतु आवश्यक मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं।

1.8.3 दूरस्थ शिक्षा तथा मुक्त शिक्षा

विगत कुछ समय से मुक्त शिक्षा तथा मुक्त अधिगम जैसे शब्दों का शिक्षा के क्षेत्र में प्रयोग किया जाने लगा है। ये शब्द दूरस्थ शिक्षा के अंग के रूप में भी स्वीकार नहीं किया जा सकता है। ये दोनों परस्पर भिन्न उपागम हैं। अर्थ, स्वरूप तथा व्यवसाय की दृष्टि से इनमें पर्याप्त अन्तर पाया जाता है। मुक्त शिक्षा स्व अध्ययन के अधिक समीप है। इसमें शिक्षार्थी को पर्याप्त स्वतन्त्रता होती है। मुक्त शिक्षा प्रणाली में प्रवेश के नियम, पाठ्यक्रम की अवधि, नियमों आदि में काफी लचीलता होती है। इसमें संस्था की व्यवस्था तथा नियन्त्रण कठोर न होकर, शिक्षार्थी की परिस्थिति तथा आवश्यकता के अनुरूप शिथिल अथवा उदार होते हैं। मुक्त शिक्षा प्रणाली में पारम्परिक शिक्षा प्रणाली के विभिन्न प्रतिबन्ध जैसे- प्रवेश प्रतिबन्ध, उपस्थिति प्रतिबन्ध, पाठ्यक्रम प्रतिबन्ध, परीक्षा प्रतिबन्ध आदि उदार होते हैं। दूरस्थ शिक्षा मुक्त भी हो सकती है तथा परम्परागत भी हो सकती है। इसी प्रकार से सामान्य शिक्षा प्रणाली परम्परागत भी हो सकती है अथवा किसी हद तक मुक्त भी हो सकती है।

यहां यह संकेत करना उचित ही होगा कि यद्यपि दूरस्थ शिक्षा, पत्राचार शिक्षा तथा मुक्त शिक्षा व्यवस्था में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को संचालित करने में मुख्यतः सम्प्रेषण साधनों का ही प्रयोग किया जाता है फिर भी छात्रों की कठिनाइयों को दूर करने के लिए उन्हें परामर्श देने के लिए तथा सन्दर्भ सामग्री का अध्ययन सुलभ कराने की दृष्टि से इनमें सम्पर्क कार्यक्रमों का आयोजन भी किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

7. पत्राचार शिक्षा तथा मुक्त शिक्षा से आप क्या समझते हैं?

1.9 महत्त्व पूर्ण सूचना

इस भाग में हम आपको कुछ अनसुलझे प्रश्नों के साथ छोड़ते है। इन प्रश्नों को ध्यान में रखते हुए आप इन्हें कार्यशालाओं;सम्पर्क कार्यक्रमों में अध्यापकों से पूछ सकते हो और अपने सहयोगी प्रतिभागियों के साथ भी विचार विमर्श कर सकते हो।

अभ्यास प्रश्न

8. क्या कोई संस्थान और मुक्त विश्वविद्यालय पूर्णतयाः मुक्त हो सकता है? आप का इस बारे में क्या विचार है?

क्या आप किसी मुक्त विद्यालय से परिचित हो जिसे कि पूर्णतया मुक्त परिभाषित किया जा सके? आप इस चरण पर एक अन्य क्रिया कर सकते हो।

क्रिया: किसी एक मुक्त विश्वविद्यालय या दूरस्थ शिक्षण संस्थान को चुने जिससे आप परिचित हो इनके द्वारा उपलब्ध कराये जाने वाले किसी कार्यक्रम को चुनें। विश्लेषण करें कि मुक्त विश्वविद्यालय सही में मुक्त शिक्षा उपलब्ध करा रहा है या नहीं।

ध्यान रखें:-

आपका विश्लेषण निम्न प्रश्नों को ध्यान में रखते हुए हो;

i. क्या कोई व्यक्ति आसानी से उस विश्वविद्यालय का विद्यार्थी बन सकता है? क्या आयु, योग्यता, अनुभव इत्यादि यहां प्रवेश लेने के लिए जरूरी हैं?
ii. क्या विद्यार्थी विषयवस्तु व लक्ष्यों को निश्चित करने के लिए स्वतंत्र है? क्या वह किसी भी विषय को चुन सकता/सकती है?

3. क्या विद्यार्थी शिक्षण अधिगम की विधियों को निश्चित करने के लिए स्वतंत्र है?

4. क्या विद्यार्थी अपनी मूल्यांकन प्रणाली निर्धारित करने के लिए स्वतंत्र है? आप इसमें और प्रश्न भी जोड़ सकते हो। अधिक जानकारी के लिए आगे में दिये गये उदाहरणों को देखे।

हमारे अवलोकन पर एक संक्षिप्त नोट

हमने यह अवलोकन किया है कि अधिकतर मुक्त विश्वविद्यालय कुछ विशेष कार्यक्रमों में प्रवेश के लिए कुछ शर्तें निर्धारित करते हैं। कुछ कार्यक्रमों में विद्यार्थियों के पास विषय चुनने की भी स्वतंत्रता नहीं होती है। एक पाठ्यक्रम के भीतर, विद्यार्थी विषयवस्तु का चुनाव नहीं कर सकते। उन्हें पाठ्यक्रम लिखने वालों द्वारा सुझाए लक्ष्यों में ही करने की सीमित छूट होती है। पाठ्यक्रम का मूल्यांकन दोनों तरीकों (सतत् मूल्यांकन व पाठयक्रम के अंत में परीक्षा) द्वारा होता है व विद्यार्थी को इन दोनों में अपनी सही भूमिका निभानी पड़ती है। अधिकतर मुक्त विश्वविद्यालयों में विद्यार्थी अपनी इच्छानुसार सीखने के लिए पूरी तरह मुक्त होता है।

शैक्षणिक परामर्श व शिक्षकीय के दौरान उपस्थिति वैकल्पिक है। परन्तु अभ्यास, संगोष्ठियों इत्यादि के दौरान उपस्थिति अनिवार्य हो सकती है। कुछ स्थितियों में विद्यार्थी अपना कार्यक्रम जब वे चाहें तब शुरू कर सकते हैं। परन्तु कुछ परिस्थितियों में वे ऐसा नहीं कर सकते क्योंकि सत्र की शुरूआत व अंत का समय पूर्णनिर्धारित होता है।

कुछ उदाहरण

- **प्रवेश के दौरान रियायत**

क. **उम्र:** मुक्त अधिगम प्रणाली में किसी विशेष कार्यक्रम में प्रवेश के लिए निम्न आयु सीमा तो है पर यहां पर अधिकतम आयु सीमा पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। उदाहरण के तौर पर, राजन जिन्होंने 10+2 जून 2000 में पास (उत्तीर्ण) की है, स्नातक उपाधि के लिए या तो किसी परम्परागत संस्थान में प्रवेश लेगा या किसी मुक्त अधिगम संस्थान में। परन्तु यदि राजन स्नातक में वर्ष 2000 के दौरान प्रवेश न ले पाये और यही एक वर्ष के पश्चात करना चाहे तो वह परम्परागत शिक्षण प्रणाली के तहत ऐसा नहीं कर पायेंगे जबकि मुक्त अधिगम संस्थान में वह उसी स्नातक उपाधि के लिए कभी भी प्रवेश पा सकता है।

ख. **योग्यता:** शिक्षा की परम्परागत प्रणाली में नामांकन की क्षमता सीमित होती है। इसलिए विद्यार्थियों द्वारा प्राप्तांकों की प्रतिशतता/श्रेणियों के आधार पर प्रवेश पर प्रतिबन्ध लग जाता है। उदाहरणतया कुछ संस्थानों में केवल वही विद्यार्थी प्रवेश पाने के योग्य होते हैं जिनके 80% अंक हो। मुक्त अधिगम प्रणाली में अधिकतर कार्यक्रमों में इस तरह का कोई प्रतिबन्ध नहीं होता। कुछ व्यवसायिक कार्यक्रमों जैसे अधिकलक, अभियांत्रिकी, चिकित्सा इत्यादि में कुछ प्रतिबन्ध हो सकते हैं क्योंकि इस तरह के कार्यक्रमों में विद्यार्थी को इससे जुड़ी हुई चीजों का पूर्व ज्ञान व अनुभव होना जरूरी है।

ग. **समय व स्थान में रियायत**

क) मुक्त अधिगम प्रणाली में विद्यार्थी अपनी सुविधा अनुसार पढ़ने का स्थान निर्धारित करते हैं। उदाहरण के लिए शिवानी ने मुक्त विश्वविद्यालय के एम.बी.ए.कार्यक्रम में प्रवेश लिया। इग्नू का यह केन्द्र बैंगलौर में स्थित था। किसी कारणवश उसे बैंगलौर बीच में ही छोड़ना पड़ा व भोपाल में बसना पड़ा। इस हालत में शिवानी क्या करती? क्या वह अपने अध्ययन को छोड़ देती? यदि वह परम्परागत विश्वविद्यालय की विद्यार्थी होती तो उसे निश्चित ही अध्ययन छोड़ना पड़ता क्योंकि परम्परागत शिक्षण प्रणाली उसे क्षेत्र के बाहर अध्ययन को जारी रखने की अनुमति नहीं देती। परन्तु मुक्त अधिगम प्रणाली में यह संभव है। इस स्थिति में शिवानी ने अपने प्रमाणपत्र बेंगलौर क्षेत्र से भोपाल क्षेत्र के मुक्त विश्वविद्यालय में स्थानांतरित किये व अपना कार्यक्रम समय पर समाप्त किया। मुक्त शिक्षा में विद्यार्थी अपनी शिक्षा अपनी सुविधा के अनुसार जारी रख सकता है। समय व स्थान की मुक्त विश्वविद्यालय में कोई पाबन्दी नहीं होती।

ख) शिवम ने इग्नू के स्नातक उपाधि कार्यक्रम में प्रवेश लिया था वह प्रथम वर्ष के अन्त तक श्रेणी की सभी परीक्षाएं पास नहीं कर पाये। उन्होंने द्वितीय वर्ष में प्रवेश लिया (जैसे कि प्रणाली ने करने की आज्ञा दी) और शेष श्रेणियों को द्वितीय वर्ष की श्रेणियों के साथ पूरा किया।

घ. इस प्रणाली में विद्यार्थी एक वर्षीय कार्यक्रम को एक वर्ष से ज्यादा समय में पूरा कर सकते हैं। अन्य शब्दों में विद्यार्थी अपनी क्षमता के अनुसार किसी कार्यक्रम को पूरा कर सकते हैं।

- **विषयों के चुनाव में रियायत**

मुक्त अधिगम प्रणाली में विद्यार्थी अपनी इच्छानुसार विषयों का चुनाव कर सकता है। उदाहरण के लिए इग्नू बी.ए. व बी.कॉम. कार्यक्रमों के तहत विद्यार्थी 70 विषयों की सूची से अपने इच्छानुसार विषय चुन सकता है कुछ मुक्त विश्वविद्यालयों जैसे इग्नू में बी.ए. स्नातक को एम.सी.ए. जैसे कार्यक्रमों में भी प्रवेश का प्रावधान है।

इसी तरह से अब बताओ कि क्या मुक्त अधिगम पूर्णतया मुक्त हो सकता है ?

इस चरण पर हम आपको एक क्रिया करने के लिए कहेंगे। क्या आप एक पूरी तरह से मुक्त अधिगम प्रणाली की कल्पना कर सकते हो ?

अभ्यास प्रश्न

9. इससे पहले की आप आगे बढ़ें, एक पूर्णतः मुक्त अधिगम प्रणाली कैसी होनी चाहिए; के बारे में संक्षिप्त नोट लिखें।

1.10 सारांश

इस इकाई में हमने दूरस्थ शिक्षा के अर्थ, उसकी विशेषताओं; उसके कार्य क्षेत्र व उससे जुड़ी शब्दावली के बारे में विचार विमर्श करने की कोशिश की है। अब आप जब इस इकाई को पढ़ चुके हैं तब आप महसूस कर रहे होंगे कि दूरस्थ शिक्षा को परिभाषित करना आसान नहीं है। इसके बावजूद इस शब्द का कोई एक अर्थ नहीं है। दूरस्थ शिक्षा, शिक्षा का वह प्रकार है जिसमें एक लम्बी शारीरिक दूरी अध्यापक व छात्र में होती है। दूरस्थ शिक्षा के साथ निम्नलिखित शब्द सम्बन्ध रखते हैः

(1) सतत् शिक्षा (2) पत्राचार शिक्षा (3) पत्राचार द्वारा सीखना

(4) पत्राचार शिक्षण (5)दूरस्थ शिक्षा (6) दूरस्थ अधिगम

(7) दूरस्थ शिक्षण (8) गृह अध्ययन (9) अनौपचारिक शिक्षा

(10) अंशौपचारिक शिक्षा (11)जीवन पर्यन्त शिक्षा (12) खुली शिक्षा

(13)मुक्त शिक्षा (14) दूर शिक्षा (15) सुदूर शिक्षा

इकाई के इस भाग में हमने दूरस्थ शिक्षा की प्रासंगिक शब्दावली का भी संक्षेपण प्रस्तुत किया है। हमारे संक्षेपण प्रस्तुत करने का उद्देश्य यह है कि आप केवल दूरस्थ शिक्षा के अर्थ, उसकी विशेषताओं व उसके कार्य क्षेत्र ही न जाने अपितु उसकी शब्दावली को भी स्पष्ट रूप से समझ सकें।

1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. दूरस्थ शिक्षा से अभिप्राय दूर बैठकर शिक्षा देने अथवा दूरी बनाकर शिक्षा प्रदान करने से है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि दूरस्थ शिक्षा वह शिक्षा है जिसमें शिक्षा देने वाले तथा शिक्षा प्राप्त करने वाले के बीच दूरी बनी रहती है। शिक्षण और अधिगम की प्रक्रिया में उपयुक्त प्रस्तुत दूरियों के कारण ही इस प्रकार की शिक्षा को दूरस्थ शिक्षा कहा जाता है। यह पत्राचार कोर्सों\ सम्पर्क कार्यक्रमों, जन संचार के साधनों आदि के द्वारा प्रदान की जाती है। दूरस्थ शिक्षा, शिक्षण अधिगम् की प्रक्रिया को समाहित हुए एक विस्तृत अर्थ वाला शब्द है। यह अनौपचारिक व अंशौपचारिक शिक्षा है।
2. विभिन्न प्रकार की सामग्री को अध्ययन करते समय छात्रों के मस्तिष्क में अनेक प्रकार की कठिनाइयां व जिज्ञासाएं आ सकती हैं। इनके निराकरण के लिए अध्ययन केन्द्रों पर छात्रों तथा शिक्षकों/सलाहकारों का प्रत्यक्ष सम्पर्क कराया जाता है। इन अध्ययन केन्द्रों पर छात्र अपनी समस्याओं के संबंध में जानकारी कर सकते हैं। ये अध्ययन केन्द्र पुस्तकालय, प्रयोगशाला, तथा श्रव्य-दृश्य साधनों से युक्त होते हैं।
3. कीगन ने दूरस्थ शिक्षा की अनेक परिभाषाओं का विश्लेषण करने के बाद **होल्मबर्ग** की परिभाषा को सर्वाधिक उपयुक्त स्वीकार किया होल्मबर्ग

4. दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक तथा छात्रों का सम्बन्ध आमने सामने का नहीं होता। इससे अधूरापन अनुभव होता है। दूरस्थ शिक्षा में कभी-कभी सम्पर्क कार्यक्रमों का आयोजन शिक्षण अधिगम को पुष्ट करने के लिए किया जाता है। सम्पर्क कार्यक्रमों में छात्रगण अल्पविधि के लिए अध्यापकों के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आकर अपनी कठिनाइयों का निवारण करते हैं तथा भावी अध्ययन हेतु आवश्यक मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं। अतः सम्पर्क कार्यक्रम से दोतरफी संवाद व्यवस्था की गई है।
5. दूरस्थ शिक्षा जैसे रूढ़िवादी/परम्परागत शिक्षा के पूरक ओर सम्पूरक रूप में देखा जाता था आज वह वैकल्पिक रूप में उभर कर सामने आई है और यह शिक्षा के समान्तर माध्यम के रूप में कार्य कर रहा है। अभी तक दूरस्थ शिक्षा का क्षेत्र माध्यमिक एवं उच्च स्तर की शिक्षा व्यवस्था तक सीमित है, इनके द्वारा प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था नहीं की जा रही है। इनके अतिरिक्त अन्य अभिकरणों द्वारा दूर संचार के माध्यमों से जिन शैक्षिक कार्यक्रमों का प्रसारण हो रहा है वे प्रौढ़ शिक्षा, और जन शिक्षा तक सीमित हैं। दूरस्थ शिक्षा जीवन पर्यन्त विभिन्न शैक्षिक आवश्यकताएं और विभिन्न वर्ग के लोगों की आकांक्षाएं पूरी करने की क्षमता रखती है और इस प्रकार अधिगमोमुख समाज बनाने का मार्ग प्रशस्त करती है।
6. पहले अनुच्छेद (स्थिति 1) में बतायी गयी शिक्षा की प्रणाली परंपरागत शिक्षण प्रणाली है। दूसरे अनुच्छेद में (स्थिति 2) "पत्राचार शिक्षण प्रणाली" के बारे बताया गया है व "दूरस्थ शिक्षा" जिसे कभी-कभी 'मुक्त शिक्षा' भी कहा जाता है, को तीसरे अनुच्छेद (स्थिति 3) में बताया गया है। अंतिम दो शिक्षण प्रणालियां (पत्राचार शिक्षा व दूरस्थ शिक्षा) अपरंपरागत शिक्षा के अच्छे उदाहरण है। दूरस्थ शिक्षा एवं पत्राचार शिक्षा भारत में बड़े पैमाने पर जानी जाती है। शिक्षा के अपरम्परागत माध्यम लोकतान्त्रिक शिक्षा के अच्छे माध्यम हैं।
7. पत्राचार शिक्षा में व्यवस्थित अनुदेश होता है और शिक्षा छपी हुई सामग्री द्वारा होती है जो कि अध्येता को डाक द्वारा भेजी जाती है। इसमें चाहे प्रत्यक्ष सम्पर्क की शिक्षण अधिगम के लिए व्यवस्था हो अथवा न हो। दूर शिक्षा में बहु माध्यम, छपी हुई सामग्री, श्रव्य, वीडियो, रेडियो, टी. वी. टेलीफोन, कम्प्यूटर आदि और प्रत्यक्ष सम्पर्क का प्रयोग किया जाता है।
8. मुक्त शिक्षा एक ऐसा दार्शनिक विचार है जो मुक्तता का समर्थन, प्रवेश संबंधी योग्यताओं में शिथिलता, पाठयक्रम के चयन में लचीलापन, अध्येता की सुविधा और गति के अनुसार अधिगम अनुदेशन के लिए बहुमाध्यमों का प्रयोग आदि के रूप में करता है। दूर शिक्षा एक ऐसा साधन है जो मुक्त हो भी सकता है नहीं भी।

हमारे अवलोकन तथा दिए गए उदाहरणों को ध्यान रखकर उत्तर दें।

9. सम्पर्क कार्यक्रमों में अध्यापकों से पूछ सकते हो और अपने सहयोगी प्रतिभागियों के साथ भी विचार विमर्श कर सकते हो।
    1. रॉन्ट्री (1992) के अनुसार एक पूर्णतः मुक्त शिक्षा प्रणाली की निम्न विशेषताएं होनी चाहिए;

i. आप जो भी सीखना चाहें, आप अपनी आवश्यकतानुसार, सही कीमत पर सीखने योग्य होंगे।

ii. आप इसे जब सीखना चाहते हो, जहां सीखना चाहते हो, वैसे ही आप इसे अपनी क्षमतानुसार पाओगे।

iii. आप अपने लक्ष्य स्वयं निर्धारित करने में सक्षम होंगे। साथ ही आप विषय वस्तु व इसके क्रम को भी निर्धारित कर सकेंगे। इस प्रणाली में आप यह भी निर्धारित कर सकते हो कि आपकी अधिगम किस तरह से मूल्यांकित की जाए।

iv. आप यह भी निर्धारित कर सकेंगे कि आप किस तरह सीखना चाहते हो उदाहरणतः अकेले या दूसरों के साथ, क्रियाओं द्वारा या चलचित्र द्वारा सैद्धान्तिक विधि या अभ्यास द्वारा और कौन आपकी सहायता करे व किस प्रकार करें।

आप अपने द्वारा लिखे नोट को रॉन्ट्री (1992) द्वारा दी गई विशेषताओं से मिला सकते हो। आप अपने सहयोगियों, प्रतिभागियों से भी इनका विचार-विमर्श कर सकते हो।

1.12 संदर्भ ग्रंथ व कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. Anupama Singhal & S.P. Kulshestha (2012): Essential of Education Technology, Aggarwal Publication, Patna.
2. Dayal Pyari (2011). Theory and Distance Education: At a Glance, presented at 5th International Conference on Distance Learning and Education, IPCSIT Vol.12
3. Faure, E.,et. al.(1972): Learning to be: The Education of the World Today and Tomorrow, UNESCO, Paris.
4. Gupta, S.P. (2004): History, Development and Problems of Indian Education, Sarda pustak Bhavan, Allahbad
5. Holmberg, B. (2003) Distance Education in Essence: An overview of theory and practice in the early 21st century (2nd Edition). Centre for Distance Education, University of Oldenburg.
6. Holmberg,B. (1981): Satus and Trends of Distance Education, Kogan Page, London.
7. Keegan, D. (1996) The Foundations of Distance Education. London: Croom Helm.
8. Mishra, S. (2004) Enabling technologies for the disabled. International Journal of Disability Studies , I (2). 114-117

9. Moisey, Susan D. (2004) Students with Disability in Distance Education - Characteristics, Course Enrollment and Completion, and Support Services. Journal of Distance Education , II (1), 73-91.
10. Moore, M. G. (1973): Toward a theory of independent learning and teaching. Journal of Higher Education, 4, 661-679.
11. Moore, M. G. (1993) Theory of transactional distance. In Dr. Keegan (Ed.), Theoretical Principles of Distance Education , 22-38. New York: Routledge.
12. Moore, M.G.,(1972): "Learning Autonomy: The Second Dimension of Independent Learning", Convergence, pp.576-587.
13. Morgan, C. & O'Reilly, M. (1999) Assessing Open and Distance Learners . London: Kogan Page.
14. Mugride, (ed.) (1992) Distance Education in Single and Dual Mode Universities .Vancouver: Commonwealth of Learning.
15. Open and Distance Learning: Theory and Practice , Training Module for Academic Counsellors , IGNOU, New Delhi.
16. Patterson, C.H. (1959) Counselling and Psychotherapy: Theory and practice . New York: Harper.
17. Peters, O. (2002) Distance Education in Transition: New Trends and Challenges. Centre for Distance Education, University of Oldenburg.
18. Sharma, R.A. (1995). Distance Education: Theory, Practice and Research.
19. STRIDE (1995): Es-311: Growth and Philosophy of Distance education: block 2, Philosophical Foundations, IGNOU, New Delhi.
20. STRIDE (2008): ES-311 Growth and Philosophy of Distance Education, Block -1 Socio- Academic Issues, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi
21. STRIDE (2008): ES-311 Growth and Philosophy of Distance Education, Block -5: Growth and Innovations: Glimpses-II, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi
22. STRIDE (2008): ES-311 Growth and Philosophy of Distance Education, Block -4 Growth and Innovations : Glimpses-I, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi

23. STRIDE (2008): ES-311 Growth and Philosophy of Distance Education, Block -3 Growth and Present Status, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi
24. Tait, A. and Mills, R. (Eds.) (2007) Rethinking learner support in distance education: Change and continuity in an international context. London: Routledge, pp. 64
25. UNESCO (1976): Draft Recommendations on the development of Adult Education, Paris.
26. Wedemeyer, C.A. (1977): "Independent Study" in Knowles, A.S.(eds.), The International Encyclopedia of higher education, North- Eastern University, Boston, pp. 5. 2114-2132
27. Growth and Present Status, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi
28. STRIDE (2008): ES-311 Growth and Philosophy of Distance Education, Block -2 Philosophical Foundations, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi
29. Tait, A. and Mills, R. (Eds.) (2007) Rethinking learner support in distance education: Change and continuity in an international context. London: Routledge, pp. 64
30. UNESCO (1976): Draft Recommendations on the development of Adult Education, Paris.
31. Wedemeyer, C.A. (1977): "Independent Study" in Knowles, A.S.(eds.), The International Encyclopedia of higher education, North- Eastern University, Boston, pp. 5. 2114-2132

1.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. दूरस्थ शिक्षा की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. दूरस्थ शिक्षा का अर्थ स्पष्ट कीजिए। दूरस्थ शिक्षा के विभिन्न अंगों का वर्णन कीजिए।

इकाई-2 दूरस्थ शिक्षा: लक्ष्य, उद्देश्य, आवश्यकता एंव महत्ता

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 दूरस्थ शिक्षा के लक्ष्य
2.4 दूरस्थ शिक्षा के उद्देश्य
2.5 दूरस्थ शिक्षा की गुणवत्ता के लिए सुझाव
2.6 दूरस्थ अधिगमकर्ता कौन होता है ?
2.7 दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्ता
2.8 सारांश
2.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.10 संदर्भ ग्रंथ व कुछ उपयोगी पुस्तकें
2.11 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। यह विकास का मूलाधार है। किसी भी राष्ट्र का विकास शिक्षा के अभाव में असम्भव है चाहे वह राष्ट्र कितने ही प्राकृतिक संसाधनों से आच्छादित क्यों न हो। आज के बदलते परिवेश में परिवर्तन की धारा ने शिक्षा को विशेष रूप से प्रभावित किया है। जहाँ एक ओर मानवीय सम्बन्धों में बदलाव आया है, वहीं विज्ञान के बढ़ते चरण ने शिक्षा की दशा व दिशा दोनों ही परिवर्तित किए हैं। वैज्ञानिक आविष्कारों से प्रत्येक क्षेत्र में युगान्तकारी परिवर्तन हुए हैं। मनुष्य ने तकनीकी उन्नति के माध्यम से स्वयं का जीवन उन्नत किया है। सम्पूर्ण विश्व में वैश्वीकरण व मुक्त अर्थव्यवस्था का बोलबाला है। अब प्रश्न यह उठता है कि परिर्वतन की इस आँधी में क्या प्रत्येक व्यक्ति का मानसिक, सामाजिक व आर्थिक विकास हुआ है? यदि नहीं तो इसमें सुधार की क्या सम्भावना तलाशी जाए? शिक्षा ही वह साधन है जिसके द्वारा व्यक्ति के जीवन स्तर को ऊँचा उठाया जा सकता है। शिक्षा की व्यवस्था इस प्रकार होनी चाहिए कि निम्नतम से निम्नतम व्यक्ति भी इसके द्वारा लाभान्वित हो सके और वैश्वीकरण के इस दौर में अपनी भूमिका निश्चित कर सके। छात्र व छात्राओं की वर्तमान पीढ़ी में कुछ अभूतपूर्व परिवर्तन देखे जा सकते हैं। वे विद्यालयी शिक्षा को तो सहर्ष स्वीकार करते है, परन्तु इसके बन्धनों से परे शिक्षा की उपेक्षा भी करने लगे हैं। इस दौर में दूरस्थ शिक्षा द्वारा विकास की सम्भावनाएँ तलाशी जा रही हैं।

दूरस्थ शिक्षा , शिक्षा की वह प्रणाली है जिसमें शिक्षक तथा शिक्षु को स्थान-विशेष अथवा समय-विशेष पर मौजूद होने की आवश्यकता नहीं होती। यह प्रणाली, अध्यापन तथा शिक्षण के तौर-तरीकों तथा समय-निर्धारण के साथ-साथ गुणवत्ता संबंधी अपेक्षाओं से समझौता किए बिना प्रवेश मानदंडों के संबंध में भी उदार है। दूरस्थ शिक्षा एक बहुत अच्छे उद्देश्य को लेकर आरम्भ की गयी थी । हमारे देश के एक वर्ग की आर्थिक स्थिति और उसके शिक्षा जारी रखने की ललक ने इसका जन्म दिया था । फिर इसमें तकनीकी शिक्षा और व्यावसायिक शिक्षा को भी जगह दे दी गयी । जब तक ये संस्थान सीमित थे इनकी गुणवत्ता पर संदेह नहीं किया जा सकता था । भारत की मुक्त तथा दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में राज्यों के मुक्त विश्वविद्यालय, शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाएं तथा विश्वविद्यालय शामिल हैं तथा इसमें दोहरी पद्धति के परंपरागत विश्वविद्यालयों के पत्राचार पाठयक्रम संस्थान भी शामिल हैं। यह प्रणाली, सतत शिक्षा, सेवारत कार्मिकों के क्षमता-उन्नयन तथा शैक्षिक रूप से वंचित क्षेत्रों में रहने वाले शिक्षुओं के लिए गुणवत्तामूलक तर्कसंगत शिक्षा के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। शैक्षिक क्षेत्र में दूरस्थ शिक्षा एक नवाचार तथा नई प्रवृति के रूप में विगत कुछ दशकों से प्रचलित है। जनसंख्या विस्फोट, संसाधनों की सीमितता तथा शिक्षा की आवश्यकता ने दूरस्थ शिक्षा को लोकप्रिय बना दिया। दूरस्थ शिक्षा, शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है। यह उन छात्रों के लिए एक वरदान है जो परम्परागत प्रकृति की औपचारिक शिक्षण संस्थाओं में अध्ययन नहीं कर सकते। कर्मचारीगण, मजदूर, विकलांग, गृहणियां आदि दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करके लाभान्वित हो सकते हैं। निर्धनों, निर्जन क्षेत्रों तथा सुदूर प्रदेशों में रहने वालों तक दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से शिक्षा का प्रकाश पहुँचाया जा सकता है। वर्तमान समय में दूरस्थ शिक्षा को एक अत्यंत महत्वपूर्ण शैक्षिक उपागम स्वीकार किया गया है।

इस इकाई में हमारा प्रयास है कि आपको दूरस्थ शिक्षा के लक्ष्य, उद्देश्यों और इसकी गुणवत्ता के लिए दिये गए सुझावों से अवगत कराएं। साथ में ये भी बताए कि दूरस्थ अधिगमकर्ता कौन है और आधुनिक समय में दूरस्थ शिक्षा की क्या आवश्यकता व महत्ता है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. दूरस्थ शिक्षा के लक्ष्य बता पाएगें।
2. दूरस्थ शिक्षा के उद्देश्यों को बता पाएगें।
3. दूरस्थ शिक्षा की गुणवत्ता के लिए सुझाव दे पाएगें।
4. दूरस्थ अधिगमनकर्ताओं की सूची बना पाएगें।
5. दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्ता की व्याख्या विस्तार से कर पाएगें।

2.3 दूरस्थ शिक्षा का लक्ष्य

शिक्षा बालक के सर्वांगीण विकास की ओर इंगित करती है, जिसके लिए पूर्व में चल रही शिक्षा व्यवस्था में कुछ आमूल-चूल परिवर्तन करने होगें, क्योंकि वर्तमान सूचना प्रौद्योगिकी के युग में बालक पुरानी शिक्षा व्यवस्था से वैश्वीकरण के सम्प्रत्यय को प्राप्त नही कर सकेगा। एक नये युग में प्रवेश जैसी धारणा को ध्यान में रखकर उसके पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों, मूल्यांकन व्यवस्था तथा उसको प्रदान किये जाने वाले अनुभवों को एक नया स्वरूप प्रदान करना होगा, जिससे आने वाली समस्याओं का समाधान वह स्वयं कर सके। उच्चतर शिक्षा में विस्तार, उत्कृष्टता और समावेशन के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए मुक्त और दूरस्थ शिक्षा तथा मुक्त शैक्षिक संसाधनों का विकास अनिवार्य है। दूरस्थ शिक्षा की स्थिति पर दृष्टिपात करने से हम यह पाते हैं कि समूचे विश्व में अधिकांश विकासशील देशों ने मुक्त विश्वविद्यालयों की जरूरत महसूस की है। भारत एक विशाल देश है जहाँ जनसांख्यिकीय विस्फोट होने का अर्थ यह है कि उच्चतर शिक्षा को संगत आबादी की वृद्धि के साथ बने रहना होगा। भारत में उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में बहुत गहरा संकट है। दूरस्थ शिक्षा का लक्ष्य सब के लिए गुणात्मक शिक्षा प्रदान करना है। गुणात्मक दूरस्थ शिक्षा के लिये :

i. दूरस्थ अधिगमकर्ता के शैक्षिक कार्यों को संपूर्ण कराने के लिए गुणात्मक पाठ्यक्रम उपलब्ध कराना।
ii. संकाय, समय व स्थान इत्यादि की बाधाओं को परे रख कर विद्यार्थियों का किसी भी दूरस्थ पाठ्यक्रम में प्रवेश बढ़ाना।
iii. दूरस्थ शिक्षा में दक्ष एवं विशेषज्ञ संकाय की सेवाओं का अधिकतम लाभ उठाना।
iv. दूरस्थ शिक्षा में मूल्य परख-निर्देशन के लिए तकनीकी का अधिकतम प्रयोग करना।
v. दूरस्थ अधिगमनकर्ता की निर्देशनात्मक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए दूरस्थ विश्वविद्यालयों में नामांकन बढ़ाना।

विश्वविद्यालयों में उपलब्ध स्थानों की संख्या के दृष्टि से उच्चतर शिक्षा के लिए मौजूदा अवसर हमारी आवश्यकता के हिसाब से बिल्कुल पर्याप्त नही हैं। इतना ही नही उच्चतर शिक्षा के स्तर में जबरदस्त सुधार की आवश्यकता है। भारत जैसे देशों में प्रति व्यक्ति आय कम है, अशिक्षा का स्तर भी अधिक है यहाँ भाषा, जीवन शैली व संस्कृति का बहुतायत है। उच्चतर शिक्षा में मुक्त और दूरस्थ शिक्षा का मौजूदा आकार और हिस्सा महत्वपूर्ण है फिर भी जीवनपर्यन्त अधिगम की दृष्टि से यह अत्यन्त छोटा है। विभिन्न इलेक्ट्रानिक माध्यमों का शिक्षा शास्त्रीय प्रयोग अभी भी बहुत सीमित है। इसे विस्तृत करने की जरूरत है। यदि सूचना प्रौद्योगिकी के सशक्त माध्यम से जैसे-इण्टरनेट , इलेक्ट्रानिक मेल, फैक्स व टेलीकोंफ्रेंसिंग का भरपूर प्रयोग किया जाय तो औपचारिक शिक्षा की अपेक्षा दूरस्थ शिक्षा पर व्यय भार भी कम होगा तथा शिक्षा की गम्भीर चुनौतियों का सामना करने में दूरस्थ शिक्षा निश्चित रूप से सक्षम होगी।

अभ्यास प्रश्न

1. दूरस्थ शिक्षा से सभी के लिए गुणात्मक शिक्षा का लक्ष्य कैसे प्राप्त होगा ?

2.3 दूरस्थ शिक्षा के उद्देश्य

हमारे देश में दूरस्थ शिक्षा का शुभारम्भ 1962 में पत्राचार शिक्षा से हुआ था और वह भी उच्च शिक्षा के केवल कला एवं विज्ञान पाठ्यक्रमों की शिक्षा से अतः उस समय पत्राचार शिक्षा के जो उद्देश्य निश्चित किए गए थे, आज अपने में अपूर्ण हैं। वर्तमान में हमारे देश में दूर शिक्षा की व्यवस्था कई रुपों में हो रही है- जैसे की पत्राचार शिक्षा, खुली शिक्षा और जन संचार के माध्यमों से प्रौढ़ शिक्षा, सतत् शिक्षा एवं जन शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रमों का प्रसारण। परम्परागत औपचारिक शिक्षा व्यक्तिगत मौखिक सम्प्रेषण पर आधारित होने के कारण समाज के एक वर्ग विशेष तक ही सीमित रही है। विभिन्न सम्प्रेषण साधनों पर आधारित होने के कारण दूरस्थ शिक्षा के उद्देश्य अधिक व्यापक हो जाते हैं। वर्तमान में हमारे देश भारत में दूरस्थ शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. विद्यार्थियों तक स्कूल/कालेज पहुंचाना या उपयोगी शिक्षा को विद्यार्थियों के घर तक पहुंचाना।
2. शिक्षा विशेषकर उच्चतर शिक्षा के व्यापक अवसरों का मार्ग प्रशस्त करना।
3. कुशल एवं कम-खर्चीली शिक्षा प्रक्रिया प्रदान करना।
4. उन व्यक्तियों को शिक्षा सुविधायें प्रदान करना जो अपने ज्ञान को बढ़ाना चाहते हैं और अपनी व्यवसायिक कुशलता को सुधारना चाहते हैं।
5. उन सभी योग्यता प्राप्त एवं इच्छुक व्यक्तियों को उच्च-शिक्षा की प्राप्ति के अवसर प्रदान करना जो किन्हीं व्यक्गित एवं आर्थिक कारणों से कालेज/विश्वविद्यालय में नियमित रूप से दाखिला नहीं ले सके।
6. शिक्षित व्यक्तियों को उन के वर्तमान रोजगार में बाधा उत्पन्न किये बिना, ज्ञान-विकास के लिये अवसर प्रदान करना।
7. सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े व्यक्तियों को शिक्षित एवं समाज के उपयोगी नागरिक बनने में सहायता प्रदान करना।
8. शिक्षा प्रदान करने के कार्य में तकनीकी विकास तथा संचार माध्यमों का उपयोग करना।
9. देश के भिन्न-भिन्न स्थानों तक मानव जाति द्वारा अर्जित ज्ञान को पहुँचा कर उनके जीवन स्तर को उन्नत बनाना।
10. अधिक शिक्षार्थी को कम व्यय में शिक्षित करना अर्थात शिक्षा को लागत प्रभावी बनाना।
11. शिक्षा प्राप्ति के प्रथम अवसर का लाभ न उठा पाने वाले व्यक्तियों को शिक्षा का दूसरा अवसर प्रदान करना।
12. निर्जन तथा विषम स्थानों पर रहने वालों को शिक्षा के अवसर सुलभ कराना।

13. कार्यरत व्यक्तियों तथा घर पर ही रहने वाली गृहणियों को आगे शिक्षा जारी रखने के अवसर प्रदान करना।
14. शैक्षिक अधि-संरचना की सीमाओं को ध्यान में रखकर जनसमुदाय को शिक्षित करने का विकल्प प्रस्तुत करना।
15. औपचारिक शिक्षा संस्थाओं पर छात्रों के दबाव को कम करने का प्रयास करना।
16. शिक्षा प्राप्ति के अवसर सभी को उपलब्ध कराने के राष्ट्रीय लक्ष्य को पूरा करना।
17. जो बच्चे, युवक अथवा प्रौढ़ किसी कारण से माध्यमिक एवं उच्च स्तर की औपचरिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर पा रहें, उनकी इस स्तर की शिक्षा की व्यवस्था करना।
18. काम में लगे स्त्री-पुरुषों के लिए उनकी इच्छा एवं आवश्यकतानुसार शिक्षा की व्यवस्था करना।
19. बीच में पढ़ाई छोड़ने वाले, आगे की शिक्षा प्राप्त करने के इच्छुक और व्यवसायिक एवं तकनीकी शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों की सतत् शिक्षा की व्यवस्था करना।
20. देश के सभी बच्चों, युवकों और प्रौढ़ों को शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर सुलभ कराना।
21. सीखने वालों के लाभ तथा उत्थान के लिये उनके ज्ञान को समृद्ध बनाना।
22. सीखने वालों को उनकी रूचियों से सम्बन्धित विभिन्न क्षेत्र में हुए वर्तमान विकास एवं सुधारों से अवगत कराना।
23. सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े व्यक्तियों को समाज का उपयोगी नागरिक बनने में सहायता प्रदान करना।

दूरस्थ शिक्षा द्वारा किसी राष्ट्र के दूर-दराजों में रहने वाले लोगों को शिक्षित किया जाता है। इससे उन सब के लिए शिक्षा के अवसर सुलभ किये जाते हैं जो किसी भी कारण शिक्षा प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं और जिनमें शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा हो। दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च व्यवसायिक व तकनीकी सब प्रकार की शिक्षा सुलभ कराते हैं। दूरस्थ शिक्षा द्वारा उन लोगों की शिक्षा की भी व्यवस्था की जाती है जो किसी काम-धन्धे में लगे होते हैं। इस प्रकार 'काम के साथ शिक्षा और शिक्षा के साथ काम' में दूरस्थ शिक्षा सहायक होती है।दूरस्थ शिक्षा के द्वारा जीवन पर्यन्त शिक्षा अथवा सतत् शिक्षा की व्यवस्था भी है। इससे वास्तविक जीवन की शिक्षा जानकारियां प्रदान की जाती हैं। दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम के द्वारा सीखने वालों को अपने-अपने स्थान पर अपनी योग्यता तथा क्षमता के अनुसार सीखने के अवसर प्राप्त होते हैं। उन्हें विद्यालयों की चार दीवारी में प्रवेश करने की आवश्यकता नहीं। दूरस्थ शिक्षा की व्यवस्था पत्राचार, आकाशवाणी प्रसारण, टेपरिकार्डर कैसेट्स, दूरदर्शन के कार्यक्रम व वीडियो कैसेट्स द्वारा की जाती है। इसमें विविधता तथा रोचकता बनी रहती है। दूरस्थ शिक्षा की पाठ्य-सामग्री एंव शिक्षण-विधियों के क्षेत्र में निरन्तर शोध एवं परिवर्तन होते रहते हैं जो सदैव उपयोगी रहते हैं। दूरस्थ शिक्षा की व्यवस्था के फलस्वरूप औपचारिक शिक्षा केन्द्रों-विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में प्रवेश दबाव कम हो जाता है। इस क्षेत्र में किए गए शोधों में यह भी पता चलता है कि राज्य द्वारा दूरस्थ शिक्षा पर प्रति व्यक्ति व्यय, औपचारिक शिक्षा पर प्रति व्यक्ति व्यय से कम होता है।

अभ्यास प्रश्न

2. दूरस्थ शिक्षा के उद्देश्यों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।

ध्यान दें :

i. शिक्षा एक जीवन पर्यन्त प्रक्रिया है।
ii. कोई भी व्यक्ति इतना बूढ़ा, इतना बड़ा या इतना छोटा नहीं होता कि किसी भी समय सीख न सके।
iii. कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं होता कि नई विधियां, नये विचार एवं नई अवधारणायें न सीख सके।
iv. किसी भी व्यक्ति की किसी स्कूल, कालेज, विश्वविद्यालय या किसी अन्य संस्था में दाखिल होने की अयोग्यता उस की शिक्षा-प्राप्ति में बाधक नहीं है।
v. सभी प्रौढ़ व्यक्ति शिक्षा प्राप्त न करने की हानि के प्रति सचेत होते हैं। जो सचेत नहीं उन्हें सचेत किया जाना चाहिए।

संक्षेप रूप में कहा जा सकता है कि दूरस्थ शिक्षा का दर्शन इस बुनियादी विश्वास पर आधारित है कि व्यक्ति महत्त्वपूर्ण है और उसे-भौगोलिक स्थिति, आर्थिक अवस्था, सामाजिक अवस्था, आयु, लिंग आदि के भेद-भाव के बिना-अपने सुधार एवं विकास के अवसर मिलने चाहिए।

2.4 दूरस्थ शिक्षा की गुणवत्ता के लिए सुझाव

i. सामग्री क्षेत्रीय भाषा में तैयार होनी चाहिए।
ii. मुद्रक गुणात्मक होना चाहिए।
iii. आवश्यकता आधारित कोर्स चुनने चाहिए।
iv. अध्ययन केन्द्र यथास्थान पर होना चाहिए।
v. विद्यार्थियों के लिए उचित आवास व्यवस्था होनी चाहिए।
vi. सामग्री उचित समय पर प्रेषित होनी चाहिए।
vii. एसाइनमैन्ट का उचित समय पर मूल्यांकन होना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

3. दूरस्थ शिक्षा की गुणवत्ता के लिए सुझाव दें।

हमारे समाज में विभिन्न वर्ग है जिन्हें की उच्च शिक्षा की आवश्यकता है। हमारे शिक्षा की परम्परागत प्रणाली में कई तरह के अवरोधों के चलते बहुत से लोग उच्च शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। मनुष्य अपनी निजी समस्यायें सुलझाने में तो सफल हो सकता है परन्तु अपनी शिक्षा आगे बढ़ाने में सफल नहीं हो सकता क्योंकि

हमारी परम्परागत शिक्षा प्रणाली यह करने की आज्ञा नहीं देती। ये व्यक्ति दूरस्थ शिक्षा का लाभ उठा सकते हैं। निम्न वर्गों के व्यक्ति दूरस्थ अधिगमकर्ता बन सकते हैं।

a. वे व्यक्ति जो सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं और जहां उच्च-शिक्षा की संस्थायें नहीं हैं।
b. वे व्यक्ति जो आर्थिक कठिनाइयों के कारण औपचारिक शिक्षा जारी नहीं रख सके।

2. वे व्यक्ति जो प्रेरणा के अभाव में अपनी शिक्षा पूरी नहीं कर सके परन्तु अब अपनी शिक्षा पूरी करने के लिये प्रेरित हैं।
3. वे व्यक्ति जिन को नियमित कालेज में दाखिला नहीं मिल सकता या जो नियमित कालेज में पढ़ना नहीं चाहते।
4. कार्यरत व्यक्ति जिन को आर्थिक अथवा अन्य कारणों से छोटी आयु से नौकरी करनी पड़ी और जो अपनी शैक्षिक योग्यताओं में वृद्धि करना चाहते हैं या अपने ज्ञान का नवीनीकरण चाहते हैं।
5. वे व्यक्ति जो अपने व्यवसाय को आधुनिकतम ज्ञान से सम्पन्न करने के लिये अतिरिक्त प्रशिक्षण चाहते हैं।
6. सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों से सम्बन्धित व्यक्ति।
7. वे व्यक्ति जो कालेज/विश्वविद्यालय के शिक्षण विभाग में प्रवेश प्राप्त नहीं कर सके।
8. विकलांग व्यक्ति।
9. सेवा-मुक्त व्यक्ति जो व्यस्त रहने के लिये अध्ययन जारी रखना चाहते हैं।

दूरस्थ शिक्षा ऊपर दी गई श्रेणियों के लोगों को अपनी शिक्षा जारी रखने का मौका देती है।
इकाई के इस भाग में हमने दूरस्थ शिक्षा की गुणवत्ता के लिए सुझावों के साथ यह भी बताया है कि दूरस्थ अधिगमकर्ता कौन होते हैं। हमारा उद्देश्य यह है कि आप केवल दूरस्थ शिक्षा के उद्देश्यों व दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्ता को ही न जाने अपितु उससे जुड़े तथ्यों को भी स्पष्ट रूप से समझ सकें।

अभ्यास प्रश्न

4. मुक्त व दूरस्थ शिक्षा में दी गई रियायतों के आधार समाज के उन विभिन्न वर्गों की सूची बनाइए जो कि इस तरह की शिक्षा प्रणाली के भाग बन सकते हो।

2.6 दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्ता

सार्वजनिक साक्षरता भारत जैसे सभी विकासशील देशों का लक्ष्य है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए उन्हें शिक्षा के क्षेत्र में कम खर्चीले साधनों की तलाश रहती है और दूरस्थ शिक्षा इस तलाश का अंत है।यदि हम प्रत्येक कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या इसलिए नहीं बढ़ा सकते क्योंकि उस के चारों ओर दीवारें हैं, यदि हम उच्च

शिक्षा की संस्थाओं की संख्या इसलिए नहीं बढ़ा सकते क्योंकि इस में बहुत अधिक व्यय होगा, तो इसका एक ही रास्ता है कि कक्षाओं की चार दीवारी को तोड़ दिया जाए और प्रत्येक गांव तथा छोटे कस्बे में

कॉलेज खोलने की आवश्यकता को समाप्त कर दिया जाए। इस प्रकार की व्यवस्था दूरस्थ शिक्षा ही दे सकती है। मनचाहे कॉलेज में एडमिशन न मिलने या फिर अन्य कारणों से कॉलेज में दाखिला नहीं होने पर दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से पढ़ाई संभव है। आप भी इस माध्यम को अपनाकर अपने भविष्य को सुरक्षित कर सकते हैं। देश के विश्वविद्यालयों में रेगुलर कोर्स में दाखिले की प्रक्रिया और अड़चनों ने पत्राचार माध्यम को अब बहुत लोकप्रिय बना दिया है। छात्रों की एक बड़ी तादाद मजबूरी में या मनपसंद ढंग से पढ़ने के लिए इस माध्यम की ओर तेजी से कदम बढ़ा रही है। क्लास और हर दिन की हाजिरी के झंझट से मुक्त होकर पढ़ने की आजादी देने वाला यह माध्यम अब देश के कई विश्वविद्यालयों में मौजूद है।

यूँ तो किसी देश में दूर शिक्षा की बड़ी आवश्यकता है परन्तु भारत में इसकी अपेक्षाकृत और अधिक आवश्यकता है। विभिन्न विकसित देशों में दूरस्थ शिक्षा की अवधारणा का उदय मुख्यतः लोगों की नई आकांक्षाओं को पूरा करने के लिये हुआ है। ये आकांक्षायें ज्ञान-विस्फोट, जनसंख्या-विस्फोट तथा आवश्यकताओं के विस्फोट के कारण पैदा हुई हैं। निम्नलिखित तथ्य दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्ता को रेखांकित करते हैं :

1. **राष्ट्र की प्रगति-** देश की जनशक्ति का आधुनिकता ज्ञान तथा कौशल के सम्पर्क में रखकर ही उसका सदुपयोग राष्ट्रहित में किया जा सकता है। आज जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण सम्पूर्ण जनसंख्या को शिक्षित नहीं किया जा सकता, परन्तु सुदूर शिक्षा के द्वारा व्यक्तियों को शिक्षा के अनौपचारिक माध्यम से शिक्षित कर राष्ट्रीय प्रगति के लिये तैयार किया जा सकता है।
2. **संवैधानिक दायित्व की पूर्ति के लिए**- भारत के संविधान में शिक्षा को नागरिकों का मूल अधिकार माना गया है यह प्रत्येक नागरिक का लोकतांत्रिक अधिकार है और एक सामाजिक मांग है । इस अधिकार का वे प्रयोग तभी कर सकते हैं जब सबको शिक्षा सुलभ हो। शिक्षा अब कुछ चुने हुए लोगों का विशेषाधिकार नहीं रही। औपचारिक शिक्षा द्वारा हम शिक्षा को सर्वसुलभ नहीं बना पा रहे थे, उसी की पूर्ति के लिए हमें दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता है।
3. **ज्ञान का विस्फोट** – ज्ञान का विकास, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के कारण बहुत तेजी से हो रहा है। प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति ज्ञान के इस विकास की तुलना में अपने को अपूर्ण पाता है। अपनी अपूर्णता को पूरा करने के लिये उसे सुदूर शिक्षा का सहारा लेना आवश्यक है। औपचारिक शिक्षा पद्धति इतनी कठोर एवं खर्चीली है कि तेजी से हो रहे परिवर्तनों को अपने में समाहित नहीं कर पा रही। परिणामस्वरूप स्कूलों एवं कालेजों में प्राप्त किया गया ज्ञान शीघ्र ही पुराना हो जाता है। दूरस्थ शिक्षा द्वारा ज्ञान को आधुनिकतम बनाये रखने में सहायता मिलती है।
4. **जनसंख्या विस्फोट** –जनसंख्या में निरन्तर हो रही वृद्धि के कारण विद्यार्थियों की संख्या बढ़ती जा रही है। भारत में बढ़ती जनसंख्या ने शिक्षा की आवश्यकता को बढ़ाया है। भारत में जनसंख्या का प्रसार अत्यधिक है। सभी को संस्थागत शिक्षा के अवसर न तो प्रदान किये जा सकते हैं और न ही

सम्भव है। इस समस्या का समाधान करने के लिये शिक्षा को स्वयं पढ़ने वाले के द्वार पर जाना होगा। इस परिकल्पना को सत्य करने के लिये सुदूर शिक्षा की कल्पना, शिक्षा के सभी स्तरों पर की गई है। औपचारिक शिक्षा पद्धति में कुछ चुने हुये विद्यार्थियों को ही प्रवेश मिलता है। इस के कई कारण हैं जैसे (1) सीमित दाखिला, (2) दाखिले एवं परीक्षा की आवश्यकतायें (3) पूर्णकालिक एवं लम्बी अध्ययन अवधि, (4) समाज की सामाजिक आर्थिक आवश्यकताओं से असम्बन्धित कोर्स, (5) औपचारिकतावाद एवं परीक्षाओं का दबाव, (6) शिक्षा पर होने वाला प्रति-व्यक्ति खर्चा। बहुत से विद्यार्थी शैक्षिक एवं व्यावसायिक संस्थाओं में प्रवेश प्राप्त नहीं कर सकते। अतः दूरस्थ-शिक्षा आवश्यक है।

5. **विभिन्न आवश्यकतायें** –विभिन्न विद्यार्थियों की विभिन्न आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करने के लिये दूरस्थ शिक्षा जरूरी है क्योंकि इतनी विभिन्न आवश्यकतायें औपचारिक शिक्षा पद्धति से पूरी नहीं हो सकती।
6. आधुनिक जीवन के सभी तत्व निरन्तर हो रहे हैं। परिणास्वरूप विभिन्न व्यवसायों की शैक्षणिक योग्यताओं में परिवर्तन आ गया है, इन परिवर्तनों के अनुरूप अपनी शैक्षणिक योग्यताएं बढ़ाना प्रत्येक व्यक्ति की स्वाभाविक इच्छा है, इसलिए दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता रहती है।
7. **कमाते हुए सीखना** –जीवन की बुनियादी आवश्यकताएँ इतनी महंगी हो रही हैं कि लोगों को कमाते हुए सीखना पड़ता है। उनके लिए नियमित कालेजों में प्रवेश प्राप्त करना अन्यन्त कठिन है। दूरस्थ शिक्षा उन व्यक्तियों के लिये विशेष रूप से आवश्यक है जो कमाते हुये सीखना चाहते हैं। काम-धन्धों में लगे स्त्री-पुरुष शिक्षण संस्थाओं में तो उपस्थित हो नहीं सकते। उनमें से जो लोग किसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त करना चाहते हों, उनकी शिक्षा की व्यवस्था दूरस्थ शिक्षा द्वारा की जाती है। इस दृष्टि से हमारे देश में इस शिक्षा का बड़ा महत्त्व है, इसकी बड़ी आवश्यकता है। कई व्यक्ति रोजगार करते हुये अपनी शैक्षिक योग्यता को बढ़ाना चाहते हैं। दूरस्थ-शिक्षा ऐसे व्यक्तियों को अपनी शैक्षिक योग्यता बढ़ाने के अवसर प्रदान करती है।
8. **बीच में पढ़ाई छोड़ने वालों के लिए**- कुछ बच्चे अपरिहार्य कारणों से बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं और कुछ युवक आगे की शिक्षा प्राप्त तो करना चाहते हैं परन्तु कुछ कारणों से कर नहीं पाते; दूर शिक्षा द्वारा इनकी शिक्षा सम्भव हुई है। सतत् शिक्षा के लिए तो दूरस्थ शिक्षा की व्यवस्था वरदान सिद्ध हुई है।
9. **आसान पहुंच** –दूरस्थ शिक्षा इस लिए आवश्यक है क्योंकि यह बहुत से ऐसे व्यक्तियों को शिक्षा प्राप्त करने के अवसर प्रदान करती है जो पहले ऐसे अवसरों से वंचित रहे हैं।
10. शैक्षिक अवसरों की समानता के लिए-हमारी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शैक्षिक अवसरों की समानता पर बड़ा बल दिया गया है। दूर शिक्षा इसकी प्राप्ति में सहायक हो रही है।
11. **सीमित वित्तीय साधनों में शिक्षा की व्यवस्था करने के लिए-** हमारा देश आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न नहीं है। दूर शिक्षा कम व्यय साध्य शिक्षा प्रणाली है। इस दृष्टि से भी इसका हमारे देश में बड़ा महत्त्व है, इसकी बड़ी आवश्यकता है।

12. **औपचारिक शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश दबाव कम करने के लिए**- हमारे देश में वर्तमान में प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क है। तब माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं और तदनुकूल उच्च शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश का दबाव बढ़ना स्वाभाविक है। हम आवश्यकतानुसार नई संस्थाएँ स्थापित नहीं कर पा रहे हैं। इस स्थिति में दूर शिक्षा औपचारिक शिक्षा संस्थाओं में नामांकन के दबाव को कम करने में सहायक हो रही है। यह सभी जानते हैं कि जनसंख्या की वृद्धि के साथ-साथ उच्च शिक्षा पर संस्थानिक दबाव बढ़ रहा है। दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से उच्च -शिक्षा से इस बढ़ते दबाव को हटाया जा रहा है।
13. **दूर-दराज में रहने वालों की शिक्षा व्यवस्था के लिए**- हम देश के दूर-दराजों में विशेषकर जहाँ जनसंख्या बहुत कम है, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा संस्थान नहीं स्थापित कर पा रहे हैं। इन दूर-दराज के क्षेत्रों में रहने वालों की शिक्षा की व्यवस्था दूर शिक्षा द्वारा की जा रही है । लोग दूरी अथवा संचार प्रणाली के अभाव के कारण भौगोलिक रूप से अलग-अलग रह जाते हैं। दूरस्थ शिक्षा ऐसे लोगों की शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करती है।
14. **सामाजिक पृथक्ता** – कई लोग आर्थिक, भौतिक, भावात्मक एवं पारिवारिक स्थितियों के कारण दूसरों से अलग-अलग हो जाते हैं। दूरस्थ शिक्षा ऐसे लोगों के लिये सहायक सिद्ध होती हैं।
15. **विभिन्न अवस्थाओं के लिए** –दूरस्थ शिक्षा द्वारा विभिन्न अवस्था के लोगों को विभिन्न व्यवसायिक एवं अव्यवसायिक विषयों की शिक्षा दी जा सकती है।
16. **सार्वजनिक शिक्षा** – राष्ट्र के चिरपोषित लक्ष्य 'सार्वजनिक शिक्षा' की प्राप्ति के लिये दूरस्थ शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है।
17. **लोकतांत्रिक आकांक्षायें** –समाज के उपेक्षित वर्गों की मांग है कि शिक्षा का लोकतांत्रिकरण किया जाये। दूरस्थ-शिक्षा इस मांग को पूरा करने में सहायक को सकती है।
18. **आत्म-विकास**-जो व्यक्ति उचित शिक्षा से वंचित रहा है उस के आत्म-विकास के लिये दूरस्थ शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है।

दूरस्थ शिक्षा द्वारा अधिगमरत समाज को प्राप्त किया जा सकता है। मनुष्य सम्पूर्ण जीवन सीखता रहता है। वह सामाजिक, व्यवसायिक, आर्थिक राजनैतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए योग्यतानुसार प्रयत्न करता है। यह शिक्षा व्यक्ति को ज्ञान के क्षेत्रों में प्रवेश के योग्य बनाती है, जिससे राष्ट्रीय उत्पादन में प्रत्येक मनुष्य का योगदान सम्भव हो सकता है।दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में अनेक अनुसंधान होते रहते हैं, उनका लाभ दूरस्थ शिक्षा को व्यवस्थित करने में किया जाता है। इन अनुसंधानों से विषयों की संरचना में सुधार किया गया है; शिक्षण के लिये अनेक माध्यमों का उपयोग किया जाने लगा है और कार्यक्रमों का अनुप्रयोग होने लगा है । इससे दूरस्थ शिक्षा उच्च शिक्षा में प्रवेश के अन्तर को कम कर रही है। अधिकतम व्यक्ति संस्था से बाहर रहकर, अपने जीवन के काम-काज चलाते हुए उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहें हैं। भारत में अनेक विश्वविद्यालय औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ अनौपचारिक रुप से सुदूर शिक्षा के माध्यम से उच्च शिक्षा प्रदान कर रहें हैं।

अभ्यास प्रश्न

5. दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्ता की व्याख्या कीजिए।

2.7 सारांश

इस इकाई में हमने दूरस्थ शिक्षा के लक्ष्य , उद्देश्यों; इसकी गुणवत्ता के लिए सुझाव ; दूरस्थ अधिगमनकर्ता कौन होता है व इसकी आवश्यकता एवं महत्ता को प्रस्तुत किया है। शैक्षिक क्षेत्र में दूरस्थ शिक्षा एक नवाचार तथा नई प्रवृति के रूप में विगत कुछ दशकों से प्रचलित है। जनसंख्या विस्फोट, संसाधनों की सीमितता तथा शिक्षा की आवश्यकता ने दूरस्थ शिक्षा को लोकप्रिय बना दिया। दूरस्थ शिक्षा द्वारा किसी राष्ट्र के दूर-दराजों में रहने वाले लोगों को शिक्षित किया जाता है। इससे उन सब के लिए शिक्षा के अवसर सुलभ किये जाते हैं जो किसी भी कारण शिक्षा प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं और जिनमें शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा हो ।दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च व्यवसायिक व तकनीकी सब प्रकार की शिक्षा सुलभ कराते हैं। दूरस्थ शिक्षा द्वारा उन लोगों की शिक्षा की भी व्यवस्था की जाती है जो किसी काम-धन्धे में लगे होते हैं। इस प्रकार 'काम के साथ शिक्षा और शिक्षा के साथ काम' में दूरस्थ शिक्षा सहायक होती है। दूरस्थ शिक्षा के द्वारा जीवन पर्यन्त शिक्षा अथवा सतत् शिक्षा की व्यवस्था भी है। इससे वास्तविक जीवन की शिक्षा जानकारियां प्रदान की जाती हैं।हमारे समाज में विभिन्न वर्ग हैं जिन्हें की उच्च शिक्षा की आवश्यकता है। हमारे शिक्षा की परम्परागत प्रणाली में कई तरह के अवरोधों के चलते बहुत से लोग उच्च शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। मनुष्य अपनी निजी समस्यायें सुलझाने में तो सफल हो सकता है परन्तु अपनी शिक्षा आगे बढ़ाने में सफल नहीं हो सकता क्योंकि हमारी परम्परागत शिक्षा प्रणाली यह करने की आज्ञा नहीं देती।दूरस्थ शिक्षा द्वारा अधिगमरत समाज को प्राप्त किया जा सकता है। मनुष्य सम्पूर्ण जीवन सीखता रहता है। वह सामाजिक, व्यवसायिक, आर्थिक राजनैतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए योग्यतानुसार प्रयत्न करता है। यह शिक्षा व्यक्ति को ज्ञान के क्षेत्रों में प्रवेश के योग्य बनाती है, जिससे राष्ट्रीय उत्पादन में प्रत्येक मनुष्य का योगदान सम्भव हो सकता है।दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में अनेक अनुसंधान होते रहते हैं, उनका लाभ दूरस्थ शिक्षा को व्यवस्थित करने में किया जाता है।हमारा उद्देश्य यह है कि आप केवल दूरस्थ शिक्षा के लक्ष्य , उद्देश्यों व दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्ता को ही न जाने अपितु उससे जुड़े तथ्यों को भी स्पष्ट रूप से समझ सकें।

2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. दूरस्थ शिक्षा से सभी के लिए गुणात्मक शिक्षा का लक्ष्य कैसे :
   i. गुणात्मक दूरस्थ शिक्षा के लिये:
   ii. दूरस्थ अधिगमकर्ता के शैक्षिक कार्यों को संपूर्ण कराने के लिए दूरस्थ शिक्षा से गुणात्मक पाठ्यक्रम उपलब्ध कराना चाहिए।

iii. संकाय, समय व स्थान इत्यादि की बाधाओं को दूर रख कर विद्यार्थियों का किसी भी दूरस्थ पाठ्यक्रम में प्रवेश बढ़ाना चाहिए।

iv. दूरस्थ शिक्षा में दक्ष एवं विशेषज्ञ संकाय की सेवाओं का अधिकतम लाभ उठाना चाहिए।

v. दूरस्थ शिक्षा में मूल्य परख-निर्देशन के लिए तकनीकी का अधिकतम प्रयोग करना चाहिए।

vi. दूरस्थ अधिगमनकर्ता की निर्देशनात्मक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए दूरस्थ विश्वविद्यालयों में नामांकन बढ़ाना चाहिए।

2. **दूरस्थ शिक्षा के उद्देश्य**

i. शिक्षा विशेषकर उच्चतर शिक्षा में व्यापक अवसरों का मार्ग प्रशस्त करना।

ii. कुशल एवं कम-खर्चीली दूरस्थ शिक्षा प्रदान करना।

iii. उन व्यक्तियों को शिक्षा सुविधायें प्रदान करना जो अपने ज्ञान को बढ़ाना चाहते हैं और अपनी व्यवसायिक कुशलता को सुधारना चाहते हैं।

iv. सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े व्यक्तियों को शिक्षित एवं समाज के उपयोगी नागरिक बनने में सहायता प्रदान करना।

v. कार्यरत व्यक्तियों तथा घर पर ही रहने वाली गृहणियों को आगे शिक्षा जारी रखने के अवसर प्रदान करना।

vi. औपचारिक शिक्षा संस्थाओं पर छात्रों के दबाव को कम करने का प्रयास करना।

vii. उन सीखने वालों को अपने रूचि के विषयों एवं भाषाओं को अपनी गति, नियमों तथा समयतालिका के कारण नहीं सीख सके थे।

3. **दूरस्थ शिक्षा की गुणवत्ता के लिए सुझाव-** सामग्री क्षेत्रीय भाषा में तैयार होनी चाहिए; मुद्रक गुणात्मक होना चाहिए; आवश्यक कोर्स चुनना चाहिए; अध्ययन केन्द्र यथा स्थान पर होना चाहिए; विद्यार्थियों के लिए उचित आवास व्यवस्था होनी चाहिए; सामग्री उचित समय पर प्रेषित होनी चाहिए; एसाइनमैन्ट का उचित समय पर मूल्यांकन होना चाहिए।

4. **मुक्त व दूरस्थ शिक्षा में दी गई रियायतों के विभिन्न वर्गों की सूची** अब आप अपने द्वारा लिखे उत्तर को नीचे दिए लोगों के वर्गों से मिला सकते हो -

i. जो लोग स्कूल की शिक्षा पूरी करने के उपरान्त उच्च शिक्षा के लिए नहीं जा पाये परन्तु वह बाद में उच्च शिक्षा पाने के इच्छुक थे।

ii. वे लोग जिन्होंने उच्च शिक्षा तो प्राप्त की परन्तु वह अपने ज्ञान की बढ़ोतरी व अपने जीविका में सुधार के लिए अपनी शिक्षा निरन्तर करना चाहते हैं।

iii. वो लोग जिन्हें अपनी पढ़ाई किसी कारणवश छोड़नी पड़ी और वो इसे पूरा करने के लिए दुबारा कोशिश करना चाहते हैं।

iv. वो लोग जो अपनी शिक्षा को जीवन पर्यन्त बनाना चाहते हैं।

v. वो लोग जो दुर्गम परिस्थितियों (भौगौलिक, सामाजिक, आर्थिक इत्यादि) में रहते हों व औपचारिक स्कूलों/महाविद्यालयों/विश्वविद्यालयों में नहीं जा सकते हैं।

vi. वो लोग जो अपनी पढ़ाई अपनी दिनचर्या में बिना विघ्न डाले करना चाहते हैं। उदाहरण- गृहणियां।

vii. वो लोग जो शारीरिक अपंगता के कारण स्कूल/महाविद्यालय/ विश्वविद्यालय नहीं जा सकते हैं।

5. **दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्ता:** यूँ तो किसी देश में दूरस्थ शिक्षा की बड़ी आवश्यकता है परन्तु भारत में इसकी अपेक्षाकृत और अधिक आवश्यकता है। विभिन्न विकसित देशों में दूरस्थ शिक्षा की अवधारणा का उदय मुख्यतः लोगों की नई आकांक्षाओं को पूरा करने के लिये हुआ है। ये आकांक्षायें ज्ञान-विस्फोट, जनसंख्या-विस्फोट तथा आवश्यकताओं के विस्फोट के कारण पैदा हुई हैं। विभिन्न विद्यार्थियों की विभिन्न आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करने के लिये दूरस्थ शिक्षा जरूरी है क्योंकि इतनी विभिन्न आवश्यकतायें औपचारिक शिक्षा पद्धति से पूरी नहीं हो सकती। कई व्यक्ति रोजगार करते हुये अपनी शैक्षिक योग्यता को बढ़ाना चाहते हैं। दूरस्थ-शिक्षा ऐसे व्यक्तियों को अपनी शैक्षिक योग्यता बढ़ाने के अवसर प्रदान करती है। दूर शिक्षा कम व्यय साध्य शिक्षा प्रणाली है। दूरस्थ शिक्षा द्वारा विभिन्न अवस्था के लोगों को विभिन्न व्यवसायिक एवं अव्यवसायिक विषयों की शिक्षा दी जा सकती है। राष्ट्र के चिरपोषित लक्ष्य 'सार्वजनिक शिक्षा' की प्राप्ति के लिये दूरस्थ शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है।

2.9 संदर्भ ग्रंथ व कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. Anupama Singhal & S.P. Kulshestha (2012): Essential of Education Technology, Aggarwal Publication, Patna.
2. Faure, E.,et. al.(1972): Learning to be: The Education of the World Today and Tomorrow, UNESCO, Paris.
3. Gupta, S.P. (2004): History, Development and Problems of Indian Education, Sarda pustak Bhavan, Allahbad
4. Holmberg, B. (2003) Distance Education in Essence: An overview of theory and practice in the early 21st century (2nd Edition). Centre for Distance Education, University of Oldenburg.
5. Holmberg,B. (1981): Satus and Trends of Distance Education, Kogan Page, London.
6. Keegan, D. (1996) The Foundations of Distance Education. London: Croom Helm.
7. Mishra, S. (2004) Enabling technologies for the disabled. International Journal of Disability Studies , I (2). 114-117

8. Moisey, Susan D. (2004) Students with Disability in Distance Education - Characteristics, Course Enrollment and Completion, and Support Services. Journal of Distance Education , II (1), 73-91.
9. Moore, M. G. (1973): Toward a theory of independent learning and teaching. Journal of Higher Education, 4, 661-679.
10. Moore, M. G. (1993) Theory of transactional distance. In Dr. Keegan (Ed.), Theoretical Principles of Distance Education , 22-38. New York: Routledge.
11. Moore, M.G.,(1972): "Learning Autonomy: The Second Dimension of Independent Learning", Convergence, pp.576-587.
12. Morgan, C. & O'Reilly, M. (1999) Assessing Open and Distance Learners . London: Kogan Page.
13. Mugride, (ed.) (1992) Distance Education in Single and Dual Mode Universities .Vancouver: Commonwealth of Learning.
14. Open and Distance Learning: Theory and Practice , Training Module for Academic Counsellors , IGNOU, New Delhi.
15. Patterson, C.H. (1959) Counselling and Psychotherapy: Theory and practice . New York: Harper.
16. Peters, O. (2002) Distance Education in Transition: New Trends and Challenges. Centre for Distance Education, University of Oldenburg.
17. STRIDE (1995): Es-311: Growth and Philosophy of Distance education: block 2, Philosophical Foundations, IGNOU, New Delhi.
18. STRIDE (2008): ES-311 Growth and Philosophy of Distance Education, Block -1 Socio- Academic Issues, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi
19. STRIDE (2008): ES-311 Growth and Philosophy of Distance Education, Block -1 Socio- Academic Issues, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi
20. STRIDE (2008): ES-311 Growth and Philosophy of Distance Education, Block -5: Growth and Innovations: Glimpses-II, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi
21. STRIDE (2008): ES-311 Growth and Philosophy of Distance Education, Block -4 Growth and Innovations : Glimpses-I, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi

22. STRIDE (2008): ES-311 Growth and Philosophy of Distance Education, Block -3 Growth and Present Status, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi
23. STRIDE (2008): ES-311 Growth and Philosophy of Distance Education, Block -2 Philosophical Foundations, Indira Gandhi National Open University (IGNOU), New Delhi
24. Tait, A. and Mills, R. (Eds.) (2007) Rethinking learner support in distance education: Change and continuity in an international context. London: Routledge, pp. 64
25. UNESCO (1976): Draft Recommendations on the development of Adult Education, Paris.
26. Wedemeyer, C.A. (1977): "Independent Study" in Knowles, A.S.(eds.), The International Encyclopedia of higher education, North- Eastern University, Boston, pp. 5. 2114-2132

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. दूरस्थ शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्यों की व्याख्या कीजिए।
2. दूरस्थ शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्ता की विस्तार से व्याख्या कीजिए।

इकाई 3 स्वतंत्र भारत में दूरवर्ती शिक्षा का विकास-वर्तमान परिक्षेप में दूरवर्ती शिक्षा की परिस्थिति

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 आधुनिक भारत का शिक्षा स्वरुप
3.3.1 सर्वप्रभुता सम्पन्न राष्ट्र और पराधीन मानसिकता की शिक्षा
3.3.2 भारतीय शिक्षा -सांस्कृतिक धरोहर
3.4 शैक्षिक विकास-क्रम और असंगत परणिाम
3.5 राष्ट्रीय शिक्षा नीति की आवश्यकता
3.6 भारत में दूरस्थ शिक्षा का विकास एवं वृद्धि
3.7 दूरवर्ती शिक्षा की भारत के आवश्यकता एवं महत्व
3.8 भारत में दूरवर्ती शिक्षा
3.9 दूरवर्ती शिक्षा में आधुनिक प्रवृत्तियाँ
3.10 भारत में दूरस्थ शिक्षा एंव कालक्रम
3.11 दूरस्थ प्रणाली
3.12 दूरस्थ शिक्षा के लिए सुझाव
3.13 दूरवर्ती शिक्षा का विकास राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय स्वरूप
3.14 भारतवर्ष में दूरवर्ती शिक्षा द्वारा अधिगमरत् समाज को प्राप्त करना
3.15 दूरवर्ती शिक्षा मे प्रवेश वृद्धि
3.16 सारांश
3.17 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
3.18 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

स्वाधीन देश भारत की शिक्षा व समाज विषयक आकांक्षाओं के कारण विभिन्न शिक्षा शास्त्री और राष्ट्र नेता स्वतंत्रता से पहले ही अनुभव करने लगे थे कि भारत के सुनियोजित निर्माण के लिए नई शिक्षा पद्धति अपेक्षित थी। परम्परागत रीति से शिक्षा प्रदान करने वाले विश्वविद्यालय , महाविद्यालय एवं विद्यालय शिक्षा संबधी बढ़ती हुई माँग का पूरा करने में असमर्थ थे। आर्थिक व सामाजिक कारणों से असंख्य युवक युवितयाँ- बेरोजगार एवं कर्मचारी अपनी शिक्षा बंद ना करे एवं भारत के सामाजिक सत्रीकरण में मुख्य भुमिका निभाए इन उद्देश्यों के निहित करने हेतू भारत में भी दूरवर्ती शिक्षा का विकास हुआ।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. आधुनिक भारत की शिक्षा पद्धति को जान पायेंगे।
2. शैक्षिक विकास क्रम और असंगत परिणाम का ज्ञान अर्जित कर पाऐंगे।
3. भारत में दूरवर्ती शिक्षा के विकास एवं वृद्धि को समझ पाऐंगे।
4. दूरवर्ती शिक्षा में आधुनिक प्रवृतियाँ की व्याख्या करा पाऐंगे ।
5. दूरवर्ती शिक्षा , राष्ट्रीय व अंनर्राष्ट्रीय स्वरुप की चर्चा कर पाऐंगे।

3.3 आधुनिक भारत का शिक्षा स्वरुप

उन्नीसवीं शताब्दी में भारत में यूरोप अथवा पाश्चात्य शिक्षा पद्धति पर आधारित कलकता, बम्बई और मद्रास विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। इन तीनों विश्वविद्यालय की स्थापना भारत के प्रथम स्वाधीनता संग्राम और भारत में विक्टारिया और 1887 में क्रमशः पंजाब और प्रयाग विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। भारत में आधुनिक शिक्षा पद्धति के प्रास्ताविक लार्ड मैकाले ने इस महादेश के लिए जिस शिक्षा नीति का प्रस्ताव किया, उसके मुख्य तीन लक्ष्य थे-

i. प्रशासन के निमित व्यक्तियों की उपलब्धि।
ii. भारत में शिक्षित लोगों के एक विषिष्ट वर्ग का निर्माण।
iii. अंग्रेजी भाषा के माध्यम से भारत के लोगो का पश्चिमी साहित्य, दर्शन व ज्ञान-विज्ञान से परिचित करवाना।

3.3.1 सर्वप्रभुता सम्पन्न राष्ट्र और पराधीन मानसिकता की शिक्षा

लार्ड मैकाले ने ब्रिटिश सामा्रज्य और अंग्रेजी भाषा व अंग्रेजीयत की जड़े भारत के मजबूत करने के लिए उन्नीसवीं शताब्दी के छठे दशक में जिस नीति व पद्धति का निर्धारण किया था, उसे अंग्रेजी राज के दिनों में तो चलना ही था, इतिहास की विडम्बना तो यह रही कि 1947 में स्वाधीनता मिलने के बाद के सर्वप्रभुता

सम्पन्न राष्ट्र में भी वही शिक्षा पद्धति चलती रही। फलस्वरुप 1947 के वर्ष देश की सरहदों से अंग्रेजी राज तो चला गया, किन्तु अंग्रेजी भाषा, अंग्रजी सभ्यता, व शिक्षा पद्धति की गुलामी को भारत ने अपना बनाना चाहा। खास तौर पर तब जबकि वह फैशन अपना पूरी तड़क-भड़क के साथ उपस्थित हुआ हो और उस फैशन परस्त को नई आजादी मिली हो। मैकाले का सपना पराधीन भारत में तो उस स्तर तक सफल नहीं हो सकी, किन्तु स्वाधीन भारत में तो जैसे उन महान और दूरदर्षी शिक्षा शास्त्री का सपना पूर्णता में साकार हुआ-इस स्तर पर लार्ड मैकाले की शिक्षा नीति की प्रस्तावना सार्थक होती दिखती है-जिसके अनुसार उनका निर्धारित लक्ष्य था कि भारत में एक ऐसे विषिष्ठ वर्ग का सृजन किया जाए जो अंग्रजो द्वारा करोड़ो भारतीयों पर किए जाने वाले शासन का उपयोगी अंग प्रमाणित हो। उन्होने इस शिक्षा द्वारा एक ऐसे वर्ग की कल्पना की थी "जिसका रक्त और रंग तो भारतीय ही रहेगा किन्नु बौद्धिक मानसिक वृतियों और अभिरुचियों में अंग्रजी होगा। आज मैकाले साहब-भारत में आ गए जो पाएगें कि उन्होंने एक वर्ग की कल्पना की थी, आज तो अधिकांश भारत उनके प्रकल्पित वर्ग से भरा पड़ा है। यह सुनियोजित करिश्मा ही था जो समाज वाबूगिरी की मानसिकता का शिकार हो गया।

3.3.2 भारतीय शिक्षा -सांस्कृतिक धरोहर

हमारे राष्ट्र की शिक्षा कालांतर से ही सापेक्ष ना रहते हुए निरपेक्ष शिक्षा रही है जिसमें शिक्षार्थी आत्म अभिव्यक्ति मात्रा ही शिक्षा लक्ष्य ना रखे अपितु आत्म ज्ञान की ओर तत्पर हो। व्यापक अर्थ में शिक्षा आत्मअनुभूति है मोक्ष प्राप्त करने की जिसे छात्र आत्मअनुषासन, आत्मनियंत्रण, आत्मसंयम और निरंतर अभ्यास प्राप्त करता है। और यह सारे गुण छात्र को शिक्षा प्राप्ती की विभिन्न औपचारिक या गैरऔपचारिक में प्रयोग करने होते हैं। आतंरिक ज्ञान का रास्ता बाह्य साधनो द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। जिसमें दूरस्थ शिक्षा भी विषिष्ट भुमिका निभाती है। जिसे छात्र चेतन व अवचेनत अवस्था में भी प्राप्त करता है। एवं अपने व समाज के जीवन्त स्तर में उन्नति करता है।

3.4 शैक्षिक विकास-क्रम और असंगत परणिाम

भाषा, सभ्यता, कला और संस्कृति के क्षेत्रों में होने वाली अराजकताओं व भ्रमपूर्ण स्थितियों से भी अधिक पाष्चात्य शिक्षा पद्धित के विस्तार के कारण सारे देश में एक आर्थिक सामाजिक असंतुलन का दौर शुरु हुआ तो उस समय सारे देश में कुल 636 कालेज थे।

- 17 विश्वविद्यालय थे।
- 2 लाख 38 हजार विद्यार्थी थे।
- माध्यमिक स्कूलों की संख्या 70 हजार विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे थे।

स्वाधीन भारत में शिक्षा के प्रसार को एक राष्ट्रीय कार्यक्रम के रुप में स्वीकार किया गया और फलस्वरुप शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व विस्फोट के साथ सामाजिक एक शैक्षिणक क्रांति आई। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार 1983-1984 के वर्ष भारत में-

- 124 विश्वविद्यालय

- 15 विश्वविद्यालय के समकक्ष मान्यता प्राप्त संस्थाएँ

- 5246 महाविद्यालय और उनमें

- 33 लाख 59 हजार 323 विद्यार्थी उच्च शिक्षा क्षेत्र में शिक्षा प्राप्त कर रहे थे।

- स्कूलों के स्तर पर इससे अधिक उन्नति के परिणाम अर्जित हुए।

इतने पर भी देश के सुदूर अंचलो और आर्थिक-व्यवसायिक तौर पर पिछड़े लोगों को इस ऐतिहासिक क्रांति से लाभ नहीं मिल सका। सो, शिक्षा संबंधी अवसर जिन्हें भी प्राप्त हो सके, वे नौकरी प्राप्त करने की आशा में प्रवेश लेते चले- नगरीकरण और पश्चिमी करण की प्रक्रिया के कारण प्रत्येक युवक-युवती बाबू-साहब बनने की आकांक्षा जग गई। कृषि प्रधान देश में युवकों ने हल चलाना छोड़कर शहर के दफ्तरों के क्लर्क बनने की ललक जगी। परिणाम स्वरूप प्रत्येक वर्ष लाखों स्नातक तैयार होने लग गए और नौकरी की कतारों में शामिल हो गए। इस प्रक्रिया में शिक्षित युवक युवतियों के बेरोजगार होने की समस्याऐं उत्पन्न हुई।

स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद स्नातक बनने के लिए तीन-चार विषयों में पास होना आवश्यक था।

i. अंग्रेजी विषय अनिवार्य शेष सभी ऐच्छिक अथवा वैकल्पिक थे
ii. जब नए-नए कॉलेज खुले तो गांवों कस्बों के विद्यार्थी दाखिल हुए।
iii. अंग्रेजी विषय का आधार कमजोर होना तथा ज्ञान कम होना।

हिंदी अथवा प्रादेशिक भाषा माध्यमों वाले विषयों में छात्र किसी तरह पास हो जाते थे। किंतु अंग्रेजी में फेल। पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उतर प्रदेश, विहार आदि उतरी भारत के प्रान्तों के कॉलेजों में पढ़ने वाले विद्यार्थीयों में से एक अनुमान के अनुसार 80 में 90 प्रतिशत विद्यार्थी अंग्रेजी में फेल होने के कारण असफल हो जाते। देश के अन्य प्रान्तों प्रदेशों के विद्यार्थियों के लिए भी विषयगत असंगति तो यही थी ही। छात्रों को ऐसे विषय पढ़ने पड़ते जिनका उनके भावी जीवन, अथवा आजीविका से कोई संबध नहीं होता था। किंतु उच्च शिक्षा के क्षेत्र में यह राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के अतिरिक्त अन्य संसाधन-धन, मनुष्य, यंत्र एवं वस्तुओं प्रबंधन इत्यादि का दुरपयोग करने वाली बात थी।

उपर्युक्त सभी बातों के अलावा एक और विडम्बना थी कि प्रचलित शिक्षा भी देश के कुछ लोगों और एक ही वर्ग तक सीमित थी। देश के सभी शिक्षा प्राप्त करने योग्य युवक-युवतियों को ऐच्छिक अवसरों में अभी बहुत कमी थी।

3.5 राष्ट्रीय शिक्षा नीति की आवश्यकता

बदले समय में वैष्विक आवश्यकता ओं के अनुकूल भारत को भी स्वतंत्र-आत्मनियंत्रित शिक्षा प्रणाली जो राष्ट्रीय विकास के पथ पर अग्रसर हो, ऐसी शिक्षा नीति की आवश्यकता थी जो जीवन की मूलभूत आवश्यकता ओं को भी पूरा कर सकें और बृहत्तर राष्ट्रीय सांस्कृतिक एवंम् मानवीय मूल्यों की स्थापना में भी सहायक हो।

ऐसी शिक्षा सर्वसुलभ हो, जीवनोपयोगी होने के साथ स्वस्थ दिषा प्रदान करने वाली स्वतंत्र भारत की केंद्र सरकार ने राष्ट्रीय दायित्व के निर्वाहन में शिक्षा के अधिकार के साथ भावी विकास की परकिल्पना का सूत्र चार भागों में विभाजित किया-

i. शिक्षा, समाज और विकास
ii. शैक्षिक विकास और विहंगम दृष्टि
iii. समीक्षात्मक मूल्यांकन
iv. शिक्षा के स्वरुप के पुनः निर्धारण के बारे में एक दृष्टिकोण।

प्रथम भाग में 34 सूत्रों के अंतर्गत शिक्षा समाज और विकास संबंधी अर्न्तसूत्रों को गंभीरता से नियोजित किया गया है।सन् 1968 में लागू हुई स्वाधीन भारत में रखा गया है। इसी भाग के अन्त में शिक्षा के प्रसंग में आधुनिक युवाओं की चुनौतियों और मूल्य धर्मिता की बात कही गई है।

3.6 भारत में दूरस्थ शिक्षा का विकास एवं वृद्धि

दूरवर्ती शिक्षा आज के युग में एक साधन बन के उभर रही है, जिसके कारण समाज के सशक्त प्रारूप निर्माण एवं संवर्धन निर्भर करता है। विकास पथ अवलोकित करने एवं नई सामजिक चेतना का अभिन्न घटक है - दूरस्थ शिक्षा प्रणाली। ऐसे लोग जो दूर भारत के गाँवों, पहाड़ों, विहंगम टापू इत्यादि में रहते है उनको शैक्षिणक सुविधाऐं प्रदान करना एवं अभावों में शिक्षा ज्योति को उदिप्त करेन का कार्य कर रही है दूरवती शिक्षा।

इन विशेषताओं के आधार पर: दूरवर्ती शिक्षा का अर्थ स्पष्ट करते हुए कुलश्रेष्ठ एवं रावत के अनुसार-

‘‘दूरवर्ती शिक्षा , एक ऐसी सुगठित व व्यवस्थित प्रणाली है, जिससे षिक्षक और छात्रों में कितनी भी भौतिक दूरी क्यों न हों, शैक्षिक तकनीकी में मुद्रित/अमुद्रित माध्यमों का प्रयोग करते हुए शिक्षा के लिए छात्रों तक रोचक, बोधगम्य तथा वैज्ञानिक विधियों के द्वारा पूर्व परिचित तथा विषिष्ट उद्देश्यों के अनुरूप शिक्षा प्रदान करने में अपना योगदान देती है। दूरवर्ती शिक्षा स्व-अनुदेश न के सिद्धांत पर आधारित, अन्तप्रेरणा जागृत कर छात्रों को उनकी योग्यता, स्तर तथा आवश्यकता ओं के अनुरूप उनकी गति एवं क्षमता के अनुसार, व्यावसायिक या अव्यावसायिक विषयों का षिक्षण देती है और उनके जीवन के लिए इस षिक्षण के द्वारा एक नयी रोषनी, तथा प्रकाश तथा नवीन परिवर्तन लाने मे सफल होती है।

3.7 दूरवर्ती शिक्षा की भारत के आवश्यकता एवं महत्व

आज के युग में दूरवर्ती शिक्षा दिन प्रतिदिन एक महत्वपूर्ण शिक्षा के साधन के रूप में विकास के पथ पर अग्रसर है। निम्नांकित बिन्दु दूरवर्ती शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व के विशेष परिचालक बिन्दु हैं।

1. ऐसे लोग जो दूर दराज के गाँवों में वन्य तथा पहाड़ी प्रदेषों में रहते है और जहां शैक्षिक सुविधाओं का अभाव है या वे बहुत सीमित मात्रा में हैं, वहां दूरवर्ती शिक्षा की ज्योति फैलाने का एक शक्तिषाली साधन है।
2. दूरवर्ती शिक्षा ऐसे लोगों के लिए भी वरदान है जो अपनी शिक्षा र्थ अन्यत्र जाने के पूर्णतया असमर्थ हैं।
3. जो लोग जीवन में किसी कारणवष जीविकापार्जन के लिए नौकरी- धन्धे में लग जाते है और औपचारिक शिक्षा से वंचित रहते हैं।
4. दूरवर्ती शिक्षा निरक्षर किसानों, मजदूरों, गृहणियों तथा विकलांग व्यक्तियों आदि के लिए भी महत्वपूर्ण है जो औपचारिक विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ है।
5. अतः कहा जाता सकता है कि दूरवर्ती शिक्षा आधुनिक युग में सभी के लिए, सभी स्तरों पर तथा सभी क्षेत्रों में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो रही है। यह नव साक्षरों के लिए नव युवकों के लिए तथा प्रौढ़ों के लिए आज आकर्षण एवं उपादेयता का केन्द्र बन गयी है। दूरवर्ती शिक्षा अब औपचारिक शिक्षा की तुलना में ज्यादा व्यावहारिक; महत्वपूर्ण तथा सार्थक होती जा रही हैं, भारत जैसे जनतंत्र में आज दूरवर्ती शिक्षा के गमन वे एक अनिवार्यता बन चुकी है।

3.8 भारत में दूरवर्ती शिक्षा

विभिन्न देशों में दूरवर्ती शिक्षा में तीव्रता से प्रगति हो रही है। इसके प्रसार तथा लोकप्रियता का प्रमाए है कि भारत में सन् 1960 के आस -पास केवल चार विश्वविद्यालय ऐसे थे, जो आंषिक रूप में इस प्रकार की दूरवर्ती शिक्षा प्रदान कर रहे थे। आज भारत में 31 से भी अधिक विश्वविद्यालय दूरवर्ती की व्यवस्था कर रहे हैं, जो स्पष्ट रूप से दूरवर्ती शिक्षा की अद्भुत प्रगति करते है। भारत की शिक्षा प्रणाली में दूरवर्ती शिक्षा ने अपना विषिष्ट स्थान बना लिया है।

लगभग 45 वर्ष पूर्व भारत में दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा पत्राचार -शिक्षा केा एक योजना के रूप में लिया गया। इस प्रयोग की सफलता ने देश के अन्य अनेक विश्वविद्यालय को दूरवर्ती शिक्षा की प्रणाली के माध्यम से अनुदेश न को प्रोत्साहित किया। दूरवर्ती शिक्षा के इतिहास में सर्वप्रथम सन् 1982 में 'आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय ' की स्थापना हुई। इस प्रकार विश्वविद्यालय के स्तर की एक स्वतन्त्र स्वायत्त संस्था की स्थापना हुई। सन् 1970 से 1980 की अवधि में अनेक प्रादेषिक विश्वविद्यालय द्वारा पत्राचार -शिक्षा के संस्थान/ निदेषालय प्रारम्भ किए गए, जिन्होंने दूरवर्ती शिक्षा को प्रोत्साहन प्रदान किया। इससे विभिन्न राज्यों द्वारा एक ऐसे विश्वविद्यालय की स्थापना की प्रबल मांग केा बल मिला, जो देश के सभी निदेषालयों के

कार्यों में समन्वय कर सके। यह भी अनुभव किया गया कि इस प्रकार की दूरवर्ती शिक्षा के विकास मे पूर्णतः समर्पित संलग्न उच्चतम संस्थान अत्यन्त उपयोगी होगा।

परिणामस्वरूपः सितम्बर, 1985 में भारत सरकार ने इन्दिरा गाँधी ओपेन यूनिवर्सिटी (इग्नू) की स्थापना का निर्णय लिया। राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना एक प्रयास है, क्योंकि पूर्णतः दूरवर्ती शिक्षा के प्रति समर्पित विश्वविद्यालय की स्थापना परम्परागत विश्वविद्यालय संरचना के कारण दूरवर्ती शिक्षा के विकास में आने वाली बाधायें दूर हा जायेंगी। पिछले दशक में आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय के अतिरिक्त भारत में चार अन्य मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की गई है, जिनके नाम हैं- कोटा यूनिवर्सिटी, नालन्दा यूनिवर्सिटी, यषवन्त राव चव्हान ओपेन यूनिवर्सिटी तथा इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय है। राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय का उत्तरदायित्व सम्पूर्ण देश के मुक्त विश्वविद्यालय एवं अन्य दूरवर्ती शिक्षा संस्थाओं के मानदण्डों/ प्रतिमानों को निर्धारण, उनका निर्वाह करना तथ समन्वय करना है। इसके साथ-साथ यह यह भी वांछनीय है कि विभिन्न दूरवर्ती शिक्षा संस्थानों द्वारा चलाये जा रहे पाठ्यक्रमों में यथा सम्भव पुनरावृत्ति को रोकार जा सके, जिससे विभिन्न पाठ्यक्रमों की पाठ्यवस्तु को पुष्ट किया जा सके।

अतीत काल से औपचारिक विश्वविद्यालय के निम्नलिखित कार्य सुनिष्चित किये गये हैं-

1. ज्ञान का संचय करना,
2. नवीन ज्ञान का संवर्धन करना,
3. ज्ञान का विस्तार अथवा प्रसार करना, तथा
4. विस्तार क्रियाओं का संचालन करना

आज तक दूरवर्ती एवं मुक्त विश्वविद्यालय के कार्य ठीक प्रकार से परिभाषित नहीं किये गए हैं। इस प्रणाली का अभी विकास हो ही रहा है। भारत में दूरवर्ती शिक्षा के विकास का तीन अवस्थाओं में अवलोकन किया जा सकता है।

1. **पूर्व-टेप की अवस्था -**इस अवस्था का ज्ञान भारत में सन् 1960 के दशक में किये गए प्रयासों से होता है। इस समय में जब केवल चार पत्राचार पाठ्यक्रम संस्थानों, दिल्ली (1962), पटियाला पंजाब (1968), मेरठ (1969) एवं मैसूर (1969) की स्थापना हुई। इस प्रकार 1960 के दशक का वह समय था, जबकि दूरवर्ती शिक्षा का प्रयोग किये जाने का विचार किया तथा इसने भारत भूमि में अपनी जड़ें जमानी प्रारम्भ कर दी। इस दृष्टि से भारत में दूरवर्ती शिक्षा की क्रान्ति आरम्भ की गई थी तथा क्रमषः धीरे-धीरे आती गयी, जिससे यह प्री-टेप अवस्था में पहुंच गयी।

2. **टेप की अवस्था-** सन् 1970-80 के दशक में मध्य 19 विश्वविद्यालय ने पत्राचार पाठ्यक्रम के संस्थान/निदेषालय प्रारम्भ किए और इस प्रकार दूरवर्ती शिक्षा को एक प्रोत्साहन मिला। इस अवधि के दौरान संस्थानो एवं निदेषालयों ने उच्च शिक्षा पाठ्यक्रम एवं कुछ डिप्लोमा पाठ्यक्रम भी शुरू किए थे।

इस दशक के कुछ दूरवर्ती-षिक्षण इकाइयाँ स्थापित की गई। पंजाब एवं हिमाचल प्रदेश (1971), आन्ध्र एवं वेंकेटेष्वर (1972), हैदराबाद, पटना (1974), भोपाल, उत्कल एवं बम्बई (1975), मदुरै, कामराज, जम्मू, कष्मीर एवं राजस्थान (1976), उस्मानिया एवं केरल (1977), इलाहबाद एवं बम्बई (1978), अन्नामलाई एवं उदयपुर (1970-79) के दशक के दूरवर्ती शिक्षा को अधिक बढ़ावा मिला। अधिकाषं विश्वविद्यालय ने दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली को शिक्षा की एक वैकल्पिक प्रणाली के रूप में ग्रहण किया। इससे भी अधिक जहां 1960 के दशक मं प्रयोगात्मक रूप में केवल पूर्व स्नातक पाठ्यक्रम ही प्रारम्भ किये गए थे। सन् 1970 के दशक में पत्राचार पाठ्यक्रम के संस्थानों/निदेषालयों द्वारा डिग्री एवं डिप्लोमा प्रमाण-पत्र हेतु पाठ्यक्रम भी प्रारम्भ किए गये।

3. **विकासोन्मुखी अवस्था -** सन् 1970 के दशक के अन्त तक दूरवर्ती शिक्षा परम्परागत शिक्षा प्रणाली से सम्बद्ध हो गयी थी। इस कारण इसे परम्परागत विश्वविद्यालय की परिधि में काम करना था। भारत में दूरवर्ती शिक्षा के इतिहास में प्रथम बार आन्ध्रप्रदेश सरकार ने सन् 1982 में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना करने का महत्वपूर्ण निर्णय लिया। इस प्रकार दूरवर्ती शिक्षा के विकास के लिये ऐ विश्वविद्यालय स्तर की स्वायत्तषासी संस्था की स्थापना हुई। इससे भी विभिन्न क्षेत्रों में ऐसे मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की मांग होने लगी, जिससे देश भर के निदेषालयों के कार्यों में समन्वय कर सके। इस बात का अनुभव किया गया कि इस प्रकार की दूरवर्ती शिक्षा के विकास हेतु पूर्णतः समर्पित एक सर्वोच्च संस्था अत्यन्त उपयोगी होगी।

   इसके परिणामस्वरूप सितम्बर 1985 में भारत सरकार ने इदिंरा गांधीराष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना का निर्णय लिया। इस विश्वविद्यालय के उद्देश्यों में मुख्य बिन्दु निम्नलिखित है-

   1. मुक्त विश्वविद्यालय एवं दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली का विकास करना।
   2. इस प्रकार की प्रणाली में, शिक्षा मूल्यांकन एवं अनुसन्धान के प्रतिमान निर्धारित करना।
   3. नियमानुसार महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालय एवं उच्च अधिगम संस्थानों का अनुदान राशि प्रदान करना।

राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय वास्तव में एक महत्वपूर्ण प्रयास था, क्योंकि दूरवर्ती शिक्षा की प्रति पूर्णतः समर्पित विश्वविद्यालय की स्थापना से दूरवर्ती शिक्षा के विकास में परम्परागत विश्वविद्यालय संरचना के कारण आने वाली बाधायें समाप्त हो सकेंगी।

यहां यह बताना भी उचित होगा कि विभिन्न प्रादेषिक सरकारों ने अपने-अपने प्रदेषों में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की दिषा में प्रयास किया। इस क्रम में महाराष्ट्र, केरल, बिहार एवं मध्य प्रदेश प्रमुख हैं। अन्य कुछ प्रदेषों में निकट भविष्य में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हेतु प्रदेश की विधान सभाओं में विधेयक प्रस्तावित किए जायेंगे। राजस्थान सरकार ने कोटा में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की है।

3.9 दूरवर्ती शिक्षा में आधुनिक प्रवृत्तियाँ

विश्व के विभिन्न देषों में दूरवर्ती शिक्षा के विकास का विष्लेषण करने पर, इसकी कुछ प्रवृत्तियों पर विचार करने एवं इस आधुनिक षिक्षण अधिगम प्रणाली के भावी स्वरूप् का अनुमान लगाने में सहायता मिली है। विश्व में दूरवर्ती शिक्षा की स्थिति पर विचार करने के बाद निम्नांकित निर्णयों पर पहुंचते हैं-

1. दूरवर्ती शिक्षा ने शैक्षिक एवं आर्थिक उपयोगिता के सिद्धान्त को अधिक उपयोगी बनाया है। शिक्षा के नये विकल्प को खोज निकाला है। इसमें सम्प्रेषण की तकनीकी का प्रयोग करके षिक्षण सामग्री एवं षिक्षण के सभी क्षेत्रों में गुणात्मक विकास किया है।
2. इसमें शैक्षिक अवसरों की समानता एवं विस्तार तथा शिक्षा को समाज के उपेक्षित वर्ग यहां तक कि दूर-दराज के क्षेत्रों में रहने वाली जनसंख्या तक ले जाने का प्रयास किया है।
3. विशेषकर प्रौढ़, औपचारिक शिक्षा से एवं कार्यशील व्यक्तियों के लिए उचित है।
4. सभी स्तरों पर विभिन्न प्रकार की शिक्षा प्रदान करती है।
5. सामान्य शिक्षा , आधारभूत शिक्षा , सतत् शिक्षा , व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा जिनमें अन्तर्सेवा प्रषिक्षण, पाठ्यक्रम आदि सम्मिलित हैं।
6. विषेषतः विकासषील देषों की बढ़ती शैक्षिक आवश्यकता ओं के अनुरूप शिक्षा व्यवस्था की जाती है।
7. औपचारिक पारम्परिक विश्वविद्यालय एवं विद्यालयों जिनमें केवल सीमित सामर्थ्य ही है, के दबाव को कम कर सकती है।
8. शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार तथा नवीन परिवर्तन लाने की सामर्थ्य रखती है। नवीन आयामों तथा प्रवर्तकों का उपयोग होता है।
9. अपेक्षाकृत अधिागमकर्त्ता उन्मुखी हैं और इस कारण अधिगमकर्त्ता को अधिक आत्मविष्वासी बनाती हैं।
10. अधिगमकर्त्ता के अध्ययन क्षेत्र में चयन-पाठ्यक्रम की अवधि आदि सम्बन्धी समुचित नया प्रारूप प्रदान करती है।
11. उन व्यक्तियों को अवसर प्रदान करती है, जो उच्च शिक्षा की आवश्यकता ओं की पूर्ति हेतु औपचारिक शिक्षा की योग्यता नहीं रखते हैं।

इस प्रकार समाज की शैक्षिक आवश्यकता ओं एवं अधिगमकर्त्ताओं की अपेक्षाओं की प्रत्युत्तर में दूरवर्ती शिक्षा का निरन्तर चढ़ावक्रम का विस्तार हो रहा है। यह एक अत्यन्त प्रगतिषील प्रवृत्ति है, जो व्यवस्था की प्रमाणिकता को बढ़ाने एवं परिणामस्वरूप अधिगमकर्त्ता के लिये लाभप्रद होने हेतु बाध्य है। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि षिक्षण अधिगम के दूरवर्ती रूप का केवल गृह-अध्ययन, स्वतन्त्र-अधिगम, पत्राचार शिक्षा से बहुमाध्यम षिक्षण अधिगम व्यवस्था में विकास हुआ है। संचार तकनीकी के क्षेत्र में हुए विस्फोट ने नवीन संचार माध्यामें में दूरवर्ती शिक्षा के साथ एकीकरण को प्रेरणा दी है, जिसके फलस्वरूप नवीन प्रकार को दूरवर्ती शिक्षा संस्थानों जैसे यूनिवर्सिटी ऑफ एअर एवं मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई है। इसका एक

शिक्षा की मुक्त व्यवस्था के रूप में विकास हो रहा है, जो आयु, औपचारिक प्रवेष योग्यता, निवास स्थान, लिंग, अधिगम गति या पूर्ण करने की अवधि आदि की अपेक्षा किये बिना सभी के लिए प्रवेष देती है, उन्हें अध्ययन के अवसर प्रदान करती है।

दूरवर्ती शिक्षा व्यवस्था विषेष रूप से अध्यापकों के प्रषिक्षण तथा सेवारत षिक्षकों केा नयी दिषा प्रदान करने में उपयोगी सिद्ध हुई है। विषेष रूप से उन देषों में जहां अध्यापकों का अभाव है और सुप्रशिक्षित अध्यापकों की आवश्यकता है, इस दिषा में उपयोगी है। पालेस्टेनियन अध्यापकों के लिए यूनेस्को योजना एवं अफ्रीकी अध्यापकों के लिए समान कार्यक्रमों को महान् सफलता मिली है।

इससे भी अधिक उपयोगी क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध की स्थापना एवं दूरवर्ती शिक्षा संस्थानों में मध्य एवं सहयोग ने पाठ्यक्रमों एवं षिक्षण अधिगम विधियों आदि के सुधार के सम्बन्ध में सार्थक सामूहिक चिन्तन एवं सतत् प्रयासों को दिशा प्रदान की है। यहा यह भी बताना उचित होगा कि कुछ देषों में जहां निजी उपक्रमों का दूरवर्ती शिक्षा में विचारणीय योगदान है; निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्रों में लाभप्रद सहयोग प्रदर्शित हुआ है।क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर बढते सहयोग एवं विकास के लिये एक सुदृढ़ अन्तर्राष्ट्रीय संघ की स्थापना के साथ दूरवर्ती शिक्षा एक उचित समयबद्ध योजना के अन्दर प्रौढ़ अधिगम के सिद्धांतों पर आधारित एक विषिष्ट षिक्षण एक अधिगम की अवधि के रूप में विकसित होगी। पारम्परिक शिक्षा व्यवस्था आधुनिक समाज एवं कार्यशील जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए अत्यधिक शक्तिषाली है, जबकि दूरवर्ती शिक्षा अपने उन्मुक्ता, नवनीयता एवं बहुमाध्यम-षिक्षण-अधिगम विधियों के गुणों के कारण शिक्षा प्रदान की अवस्था के पुनर्निर्माण एवं शिक्षा की अधिगमकत्ताओं की आवश्यकता ओं के अनुरूप एवं उत्तरदायी बनाने तथा भविष्य में एक महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करने हेतु प्रयत्नषील है।

इस उद्देष्य को प्राप्त करने के लिए दूरवर्ती शिक्षा के अन्तर्गत एक वैकल्पिक माध्यम से पारम्परिक शिक्षा के विस्तार के बजाय एक वैकल्पिक प्रकार की शिक्षा अथवा पाठ्यवस्तु के विकास के प्रयास किये जा रहे है। इस दिषा में विगत दो शताब्दियों के दौरान हुए प्रत्यक्ष विकास का स्पष्ट प्रमाण सम्पूर्ण विश्व में से भी अधिक मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना है।

विषाल जनसंख्या वाले देश विषेषकर विकासषील देश निरन्तर बढ़ती जनसंख्या की शिक्षा की मांग की पूर्ति केवल तब ही करने में समर्थ होंगे जब वे दूरवर्ती शिक्षा का विषाल रूप में प्रयोग करेंगें । शीघ्र ही भारत मुक्त विश्वविद्यालय एवं दूरवर्ती शिक्षा संस्थानों की संख्या विकासषील देषों मं से एक होगा, लेकिन मुक्त विश्वविद्यालय की सफलता पारम्परिक दृढ़ शिक्षा व्यवस्था से बाहर निकलने हेतु उत्साह एवं नवीन परिवर्तन की भावना पर निर्भर करेगी। भविष्य में मुक्त विश्वविद्यालय की एक ऐसी श्रृंखला की भी आवश्यकता होगी, जो नीचे से ऊपर की ओर वास्तविक दूरवर्ती शिक्षा व्यवस्था के निर्माण में सहायक होगा।

यह एक अच्छा संकेत है कि विभिन्न प्रकार के अध्ययन केन्द्र जैसे सूचना, विस्तार, परामर्ष, चलायमान, अधिगम केन्द्र गृह कार्यों के न्यूनतम समय में प्रभावी मूल्यांकन, टेलीफोन द्वारा षिक्षण, विभिन्न माध्यमों द्वारा

अनुमोदन आदि के संगठन एवं दृढ़ीकरण की ओर जागरूकता एवं उत्साह बढ़ रहा है। इन सेवाओं की दूरवर्ती -षिक्षण में व्यक्तिगत अधिगम के सामूहिक अधिगम का विकास लायेगी। यह शिक्षा को न केवल अन्त-प्रक्रिया अपितु प्रतिक्रियात्मक एवं सृजनात्मक भी बनाती है।

दूरवर्ती शिक्षा एक स्वतन्त्र अनुषासन के रूप में विकसित हो रही है तथा इस नवीन प्रणाली के विभिन्न पक्षों पर अत्यधिक अनुसन्धन किए जा रहे है। यह व्यवस्था आज सरलता से उपलब्ध नवीन संचार माध्यमों के विभिन्न प्रकारों में सुधार एवं एकीकरण लाने हेतु सक्रिय है। दूरवर्ती षिक्षकों का लिए दूरवर्ती शिक्षा पाठ्यक्रमों का विकास किया गया है, जिससे उचित प्रकार के कार्यकर्त्ताओं को प्रषिक्षण दिया जा सके।

दूरवर्ती शिक्षा पाठ्यक्रम का क्षेत्र, विस्तार एवं प्रकार के नित्य विस्तार होने वाले हैं। इसके द्वारा शिक्षा को समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने, पाठ्यक्रम का विकास करने तथा विद्यार्थियों की उपलब्धि के मूल्यांकन के सुधार लाने में सहायता मिलेगी।

3.10 भारत में दूरस्थ शिक्षा एंव कालक्रम

सन् 1962 में दिल्ली विश्वविद्यालय में दूरस्थ शिक्षा के विभाग के खुलने से भारत में दूरस्थ शिक्षा शुरू हुई। सन् 1985 में इग्नू की स्थापना हुई।

वर्तमान में भारत में 11 मुक्त विश्वविद्यालय निम्नलिखित हैं

1. डॉ॰ भीमराव अम्बेदकर मुक्त विश्वविद्यालय , अहमदाबाद
2. यषवन्त राव चौहान मुक्त विश्वविद्यालय , नासिक (महाराष्ट्र)
3. अम्बेदकर मुक्त विश्वविद्यालय , अहमदाबाद
4. कर्नाटक मुक्त विश्वविद्यालय , मैसूर
5. राजस्थान मुक्त विश्वविद्यालय , कोटा
6. बंकिमचन्द्र चैटर्जी मुक्त विश्वविद्यालय , पश्चिमी बंगाल
7. नालन्दा मुक्त विश्वविद्यालय , बिहार
8. राज ऋषि पुरूषोतम दास टंडन मुक्त विश्वविद्यालय , इलाहाबाद
9. भोज मुक्त विश्वविद्यालय , जबलपुर, मध्यप्रदेश
10. इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्म विश्वविद्यालय , दिल्ली
11. सुन्दर लाल मुक्त विश्वविद्यालय , रायपुर छतीसगढ़

यहां लगभग 40 विश्वविद्यालय हैं जो पत्राचार कोर्सों से शिक्षा प्रदान करते है।

3.11 दूरस्थ प्रणाली

दूरस्थ प्रणाली में निम्नलिखित कार्य होता हैः

1. शैक्षिक आवश्यकता ओं का मूल्यांकन
2. पाठ्यक्रम का विकास
3. अनुदेशनात्मक सामग्री की उत्पादकता
4. अधिगम सामग्री
5. अधिगम सामग्री
6. अनुदेश नात्मक बैग
7. रेडियों कार्यक्रम
8. ओडियो कैसट
9. डिलीवरी प्रणाली
10. ब्रोडकास्ट
11. डाक/पत्राचार
12. क्षेत्रीय अध्ययन केन्द्र
13. स्मूह मीटिंग
14. विद्यार्थी अधिगम प्रणाली
15. स्नातक
16. मूल्यांकन एवं निष्पादन
17. पृष्ठपोषण

3.12 दूरस्थ शिक्षा के लिए सुझाव

1. सामग्री क्षेत्रीय भाषा में तैयार होनी चाहिए।
2. मुद्रक गुणात्मक होना चाहिए।
3. आवश्यक आधारित कोर्स चुनना चाहिए।
4. अध्ययन केन्द्र यथा स्थान पर होना चाहिए।
5. विद्यार्थियों के लिए उचित आवास व्यवस्था होनी चाहिए।
6. सामग्री उचित समय पर प्रेषित होनी चाहिए।
7. एसाइनमैन्ट का उचित समय पर मूल्यांकन होना चाहिए।

अतः दूरस्थ शिक्षा द्वारा अधिगमरत समाज को प्राप्त किया जा सकता है। मनुष्य सम्पूर्ण जीवन सीखता रहता है। वह सामाजिक, व्यावसायिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक आवश्यकता ओं की पूर्ति के लिए योग्यतानुसार प्रयत्न करता है।

यह शिक्षा व्यक्ति को ज्ञान के क्षेत्रों में प्रवेष के योग्य बनाना हैं, जिससे राष्ट्रीय उत्पादन में प्रत्येक मनुष्य का योगदान सम्भव हो सके।

3.13 दूरवर्ती शिक्षा का विकास राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय स्वरूप

दूरवर्ती शिक्षा आज कोई नवीन सकल्पना नहीं है। प्राचीन काल के ताड-पत्रों पर लिखित सामग्री इसके बहुत पुराने इतिहास की सूचक है।

औपचारिक रूप से दूरवर्ती शिक्षा का जन्म 18वीं शताब्दी में माना जा सकता है जबकि एक अंग्रेजी षिक्षक ने द्विमार्गी पत्र व्यवहार(संदेश) डाक के माध्यम से प्रेषित कर पहला षिक्षण कार्य किया था।

1840 में पीटमैन के शार्ट हैन्ड कोर्स डाक के माध्यम से शुरू हुआ।

1856 में लैगऐवके द्वारा स्थापित एक आधुनिक भाषाओं के विद्यालय ने पत्राचार के द्वारा विदेशी भाषाओं के शिक्षण का कार्य प्रारम्भ किया। 1873 में अमेरिका में पत्राचार अनुदेश न की व्यवस्था का पहला प्रयास किया गया और 1890 में कुछ विश्वविद्यालय मं पत्राचार पाठ्यक्रमों की स्थापना की गयी। इसी वर्ष स्वीडन तथा जर्मनी में भी दूरवर्ती शिक्षा के क्षेत्र में कार्य प्रारम्भ हुये तथा पत्राचार अनुदेश न विद्यालय स्थापित हुये। 1920 में रूस में अशिक्षित लोगों को शिक्षित बनाने के लिये पत्राचार कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये, फलस्वरूप वहां 15-20 वर्षों में काफी लोग शिक्षित हो गये।

1960 में जापान में व्यावसायिक तथा औद्योगिक क्षेत्रों के लिये पुनर्बोधात्मक शिक्षा षिक्षकों के लिये प्रषिक्षण कोर्स तथा महिलाओं के लिये भी अनेक कोर्स प्रारम्भ किये गये। 1961 में ब्रिटेन में सरकार द्वारा एक श्वेत पत्र जारी किया गया और एक 'यूनीवर्सिटी आफ एअर' की योजना को जन्म दिया गया । चीनल में भी 1960-61 के मध्य प्रौढ़ व्यक्तियों तथा छात्रों के शैक्षिक स्तर में सुधार हेतु पत्राचार शिक्षा के लिये बीजिंग, संघाई, षियांग आदि नगरों में केन्द्र खोले गये।

1969 में इंग्लैण्ड में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की गयी। इस विश्वविद्यालय में लोगों की आयु, लिंग, निवास तथा औपचारिक शैक्षिक योग्यता आदि पर बिना ध्यान दिये तथा बिना किसी भेदभाव के सभी इच्छुक व्यक्तियों के लिये प्रभावी दूरवर्ती पाठ्यक्रम सामग्री तैयार की गयी और लोगों को प्रवेष दिया गया। इस विश्वविद्यालय ने अनेक विकासषील देषों को भी प्रेरणा दी की वे भी इस विश्वविद्यालय की तज्र पर अपने-अपने देषों मं मुक्त विश्वविद्यालय स्थापित कर दूरवर्ती शिक्षा की प्रभावषाली व्यवस्था करें। इंग्लैण्ड मे अनेक विश्वविद्यालय ने अपने यहां दूरवर्ती शिक्षा विभाग खोले और बड़ी संख्या में प्राइवेट पत्राचार शिक्षा संस्थान भी प्रारम्भ किये गये।

1970 में ''नेषनल एक्रीडीषन कौसिल फार दी ब्लाइन्ड एंड विज्युली हैन्डीकैप्ड द्वारा प्रमाणित दृष्टिहीन छात्रों के लिये अमेरिका में (दृष्टिहीनो हेतु हैडली विद्यालय) ने दूरवर्ती शिक्षा के क्षेत्र में अनेक क्रान्तिकारी कदम उठाये। इसी वर्ष 1970 मे ही रूस मं बड़ी संख्या में छात्रों को पत्राचार पाठ्यक्रम ने आकर्षित किया। वहां विभिन्न विश्वविद्यालय के लगभग 500 विभागों द्वारा दूरवर्ती शिक्षा के क्षेत्र में कार्य प्रारम्भ किया गया। इनके द्वारा तकनीकी तथा अन्य उच्च शिक्षा से सम्बन्धित विभिन्न शिक्षा कोर्सों प्रशिक्षण कार्यक्रमों का श्रीगणेश किया गया। 1970 तक पूरे विश्व मे दूरवर्ती-षिक्षण के लिये सुप्रसिद्ध 22 विश्वविद्यालय खुले गये जिन्होंने दूरवर्ती शिक्षा को एक नयी दिषा प्रदान की । 1978 मे जापान में 'दी नेषनल इन्स्टीट्यूट फार डैवलपमैण्ट ऑफ ब्रौडकास्टिगं एजूकेषन' की स्थापना शिक्षा मन्त्रालय के नियन्त्रण में की गयी। जिसके द्वारा मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना बाद में हुई। इस स्थापित संस्थान द्वारा दूरवर्ती शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्य किये गये जिन्होंने जापान का दूरवर्ती शिक्षा के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण स्थान दिलाया। 1978 में अमेरिका के हैडली स्कूल को नौर्थ सेण्ट्रल एसोषियेषन ऑफ कॉलेज एण्ड स्कूल्स' द्वारा मान्यता दी गयी। इस स्कूल द्वारा दृष्टिवाधित छात्रों के लिये हाई स्कूल पर विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रम दूरवर्ती शिक्षा के अन्तर्गत सफलतापूर्वक चलाये गये।

1982 में अमेरिका मे किये गये सर्वेक्षण के आधार पर पत्राचार पाठ्यक्रम का संचालन लगभग 71 संस्थानों द्वारा किया जा रहा था जिनमें लगभग 24488 छात्रों ने प्रवेष लिया था। अब तो अमेरिका में दूरवर्ती शिक्षा का कार्यक्रम इतना लोकप्रिय होत जा रहा है कि प्रति वर्ष 20,000 से 80,000 छात्र विभिन्न दूरवर्ती विश्वविद्यालय में प्रवेष लेते है। चीन में 1982 से 1985 तक पांच करोड़ से भी अधिक छात्रों ने स्नातक तथा अन्य पाठ्यक्रमों केा सफलतापूर्वक पूरा किया।

जापान में 'दी नेषनल इन्स्टीट्यूट फार डैवलपमैण्ट ऑफ ब्रौडकास्टिगं एजूकेषन' नामक संस्था ने दूरवर्ती शिक्षा के कार्यक्रमों के अन्तर्गत छात्रों का रजिस्ट्रेषन 1985 में प्रारम्भ किया। ऐसी आषा प्रकट की गयी कि इसके माध्यम से इसके विश्वविद्यालय में छः लाख बीसर हजार से अधिक छात्र शिक्षा प्राप्त करेंगे।

1985 में 'नेषनल होम स्टडी कौंसिल' नामक, अमेरिका की मान्यता प्राप्त परिषद ने अपने 30 वर्ष पूरे कर तीसवीं वर्षगाँठ मनाई। 1986 में पश्चिमी जर्मनी के एक अध्ययन से ज्ञात हुआ कि दूरवर्ती शिक्षा अधिक लोकप्रिय हो रही है और इस वर्ष लगभग छः करोड़ छात्रों ने दूरवर्ती शिक्षा के माध्यम से विभिन्न पाठ्यक्रमों में प्रवेष लिया था। 1986 के पश्चात् तो दूरवर्ती शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन आया। लोगों की निष्ठा इनके प्रति जागी और इनका महत्व भी लोग समझने लगे। फलस्वरूप् पूरे विश्व में दूरवर्ती शिक्षा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करने वाले अनेक सरकारी तथा प्राइवेट विश्वविद्यालय तथा अन्य संस्थाओं ने अपना स्थान बनाया और छात्रों को दूरवर्ती माध्यमों से शिक्षा के लिये अपनी ओर सफलतापूर्वक आकर्षित किया।

3.14 भारतवर्ष में दूरवर्ती शिक्षा द्वारा अधिगमरत् समाज को प्राप्त करना

यद्यपि भारतवर्ष में दूरवर्ती शिक्षा का श्री गणेश 1960 कें दशक में हो गया था पर उस समय केवल चार विश्वविद्यालय ऐसे थे जो आंशिक रूप में इस प्रकार की दूरवर्ती शिक्षा प्रदान कर रहे थे।ये थे-1962 में दिल्ली, 1968 में पटियाला, तथा 1969 मेरठ तथा मैसूर मे विश्वविद्यालय 1970 से 1980 की अवधि तक 19 प्रादेषिक विश्वविद्यालय द्वारा पत्राचार शिक्षा संस्थान/निदेषालय प्रारम्भ किये गये। इस अवधि में डिप्लोमा तथा डिग्री दोनों प्रकार के ही दूरवर्ती शिक्षा के माध्यम से शुरू किये गये।

1971 में पंजाब व हिमाचल प्रदेश, 1972 में आंध्र तथा वेंकटेष्वर 1974 में हैदराबाद तथा पटना 1975 में भोपाल उत्कल एवं बम्बई में 1976 में मदुराई, कामराज, जम्मू कश्मीर एवं राजस्थान, 1977 में उस्मानियां तथा केरल, 1978 में इलाहाबाद एवं बम्बई, 1979 में अन्नामलाई तथा उदयपुर में शिक्षण यूनिटें स्थापित की गयी है। दूसरे शब्दों में 1970-1980 के दशक में दूरवर्ती शिक्षा का उस शिक्षा के क्षेत्र में काफी बढ़ावा मिला।

1970 के दशक तक दूरवर्ती शिक्षा, परम्परागत शिक्षा प्रणाली से सम्बद्ध हो गयी थी। अतः दूरवर्ती शिक्षा परम्परागत विश्वविद्यालय के अन्तर्गत कार्य करने लगी।

1982 में आन्ध्र प्रदेश सरकार ने दूरवर्ती शिक्षा के क्षेत्र में एक मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की। 1985 में भारत सरकार ने इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की जो दूरवर्ती शिक्षा के विकास में 'मील का पत्थर 'सिद्ध हुआ। भारत सरकार सरकार की तर्ज पर महाराष्ट्र, केरल, बिहार एवं मध्यप्रदेश आदि राज्यों में भी दूरवर्ती शिक्षा के विकास के लिये मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की गयी। राजस्थान सरकार ने कोटा में मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की।

राज्यों में मुक्त विश्वविद्यालय के क्रम मे 1999 में उत्तर प्रदेश सरकार ने इलाहाबाद में राजर्षि पुरूषोत्तम दास टन्डन मुक्त महाविद्यालय की स्थापना की है आषा है कि दूरवर्ती शिक्षा के क्षेत्र में आशा के अनुरूप कसौटी पर खरा उतरेगा और दूरवर्ती शिक्षा के माध्यम से नये आयाम स्थापित करेगा।

3.15 दूरवर्ती शिक्षा मे प्रवेश वृद्धि

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि दूरवर्ती शिक्षा प्रगति पथ की ओर बढ़ती जा रही है। उदयीमान भारतीस समाज एवं विश्व में शिक्षित समाज को विकसित एवं समृद्ध करने में एक सशक्त भूमिका निर्वाहन करेगा।

मनुष्य सम्पूर्ण जीवन सीखता रहता है अतः वह समाजिक व्यवसायिक, आर्थिक राजनैतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए योग्यतानुसार प्रयत्न करता है। यह शिक्षा व्यक्ति को ज्ञान के क्षेत्रों में प्रवेश के योग्य बनाती है, जिससे राष्ट्रीय उत्पादन में प्रत्येक मनुष्य का योगदान सम्भव हो सके।

3.16 सारांश

दूरवर्ती शिक्षा आज के युग में एक साधन बन के उभर रही है, जिसके कारण समाज के सशक्त प्रारूप निर्माण एवं संवर्धन निर्भर करता है। विकास पथ अवलोकित करने एवं नई सामजिक चेतना का अभिन्न घटक है - दूरस्थ शिक्षा प्रणाली। ऐसे लोग जो दूर भारत के गाँवों, पहाड़ों, विहंगम टापू इत्यादि में रहते है उनको शैक्षिणक सुविधाऐं प्रदान करना एवं अभावों में शिक्षा ज्योति को उदिप्त करेन का कार्य कर रही है दूरवती शिक्षा।

आज के युग में दूरवर्ती शिक्षा दिन प्रतिदिन एक महत्वपूर्ण शिक्षा के साधन के रूप में विकास के पथ पर अग्रसर है। ऐसे लोग जो दूर दराज के गाँवों में वन्य तथा पहाड़ी प्रदेषों में रहते है और जहां शैक्षिक सुविधाओं का अभाव है या वे बहुत सीमित मात्रा में हैं, वहां दूरवर्ती शिक्षा की ज्योति फैलाने का एक शक्तिशाली साधन है। दूरवर्ती शिक्षा ऐसे लोगों के लिए भी वरदान है जो अपनी शिक्षार्थ अन्यत्र जाने के पूर्णतया असमर्थ हैं। जो लोग जीवन में किसी कारणवश जीविकापार्जन के लिए नौकरी- धन्धे में लग जाते है और औपचारिक शिक्षा से वंचित रहते हैं। दूरवर्ती शिक्षा निरक्षर किसानों, मजदूरों, गृहणियों तथा विकलांग व्यक्तियों आदि के लिए भी महत्वपूर्ण है जो औपचारिक विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ है। अतः कहा जाता सकता है कि दूरवर्ती शिक्षा आधुनिक युग में सभी के लिए, सभी स्तरों पर तथा सभी क्षेत्रों में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो रही है। यह नव साक्षरों के लिए नव युवकों के लिए तथा प्रौढ़ों के लिए आज आकर्षण एवं उपादेयता का केन्द्र बन गयी है। दूरवर्ती शिक्षा अब औपचारिक शिक्षा की तुलना में ज्यादा व्यावहारिक; महत्वपूर्ण तथा सार्थक होती जा रही हैं, भारत जैसे जनतंत्र में आज दूरवर्ती शिक्षा के गमन वे एक अनिवार्यता बन चुकी है। दूरवर्ती शिक्षा प्रगति पथ की ओर बढ़ती जा रही है। उदयीमान भारतीस समाज एवं विश्व में शिक्षित समाज को विकसित एवं समृद्ध करने में एक सशक्त भूमिका निर्वाहन करेगा।

3.17 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. आनन्द, सत्यपाल; यूनिवर्सिटी विदाउट वाल्स: कार्सपोण्डेंस एजुकेषन इन इंडिया; नई दिल्ली, विकास पब्लिकेशंस, 1979ण्
2. एन अप्रोच टु दि सैवन्थ फाइव ईयर प्लान: 1985-90 प्लानिंग कमीशन, नई दिल्ली, जुलाई 1984
3. एनुअल रिपोर्ट फार 1983-84 विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली
4. रिपोर्ट आफ दि वर्किंग ग्रुप आन नेशनल ओपन यूनिवर्सिटी (चेयरमैन जी॰ पार्थसारथी); नई दिल्ली, भारत सरकार, 1975.
5. ओपन लनिग: सिस्टम्स एंड प्राबलम्बस इन पोस्ट सेकेड़री; दि यूनेस्को प्रेस 1975
6. कोर्सपोंडैंस एजुकेषन; इडियन यूनिवर्सिटी ऐसोसियेषन फार कण्टीन्यूइंग एजुकेषन; नई दिल्ली, 1976
7. ग्रेवाइज रम्बल तथा कीथ हैरी; दि डिसटैंट टीचिंग यूनिवर्सिटी; कूम हैल्म, लन्दन, 1982
8. जी॰ राम॰ रेड्डी; डिस्टैंस टीचिंग इन इंडिया - ए प्रोफाइल आफ आंध्र प्रदेश ओपन यूनिवर्सिटी

9. जी॰ राम॰ रेड्डी; ओपन एजुकेषन सिस्टम इन इंडियाः इटस प्लेस एण्ड पोटैंषियल; आंध्र प्रदेश ओपन यूनिवर्सिटी, हैदराबाद, 1982
10. ओपन विश्वविद्यालय भारतीय संदर्भ और वैषिवक विस्तार बी एस शर्मा
11. दूरवर्ती शिक्षा वी॰ के सिंह, के एन सूदर्शन (डी॰ पी॰ एच॰)

3.18 निबंधात्मक प्रश्न

1. "दूरवर्ती शिक्षा से शिक्षित समाज की प्राप्ति हो सकती है" व्खाख्या करे।
2. क्या दूरवर्ती शिक्षा आधुनिक शिक्षा की पूरक है अथवा चुनौती है। दूरवर्ती शिक्षा की विभिन्न प्रणालियों का वर्णन कीजिए।
3. भारत में दूरस्थ शिक्षा क्षेत्र में हुए विकास पर प्रकाश डालें।
4. वर्तमान प्ररिपेक्ष में आधुनिक समाज की आवश्यकता अनुसार दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली का वर्णन करे।
5. भारत में दूरवर्ती शिक्षा के विभिन्न चरणों का वर्णन करो।
6. भारत के शिक्षा स्वरूप में शैक्षिणक विकास क्रम के विभिन्न परिणामों का वर्णन करे।
7. राष्ट्रीय शिक्षा नीति की आवश्यकताओं का वर्णन करे।

इकाई 4 दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में केन्द्र सरकार, राज्य सरकार जनसंचार व गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 दूरस्थ शिक्षा का इतिहास
  4.3.1 अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर दूरस्थ शिक्षा
  4.3.2 राष्ट्रीय स्तर पर दूरस्थ शिक्षा
4.4 दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में केन्द्र सरकार की भूमिका
  4.4.1 मानव संसाधन मंत्रालय
  4.4.2 विश्वविद्यालय अनुदान आयोग
  4.4.3 इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
  4.4.4 दूरस्थ शिक्षा परिषद्
  4.4.5 राज्य मुक्त विश्वविद्यालय
4.5 दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में राज्य सरकार की भूमिका
  4.5.1 मुक्त विद्यालय
  4.5.2 राज्य शिक्षा अनुसंधान एवं शिक्षण परिषद्
4.6 दूरस्थ शिक्षा के प्रसार में जनसंचार की भूमिका
  4.5.1 जनसंचार की मुख्य श्रेणियां
  4.5.2 दूरस्थ शिक्षा में जन संचार का महत्व
4.7 दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका
4.8 सारांश
4.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.10 संदर्भ ग्रंथ एवं कुछ उपयोगी पुस्तकें
4.11 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

हम सभी जानते हैं, विभिन्न देशों में दूरस्थ शिक्षा में तीव्रता से प्रगति हो रही है। परम्परागत प्रणाली में शिक्षण-अधिगम कक्षा में ही घटित होता है जहाँ शिक्षक व विद्यार्थी का नियमित सम्पर्क होता है। परन्तु दूरस्थ शिक्षा में न तो आपके पास शिक्षक होता है न ही नियमित सम्पर्क इसमें आप अपनी सुविधानुसार अध्ययन करते हैं। दूरस्थ शिक्षा के प्रसार व उत्थान में बहुत सारी संस्थाए योगदान दे रही हैं ताकि ऐसे छात्रों को जो आर्थिक दृष्टि से गरीब है तथा देश के आन्तरिक क्षेत्रों में निवास कर रहे हैं उन तक अध्ययन के अवसर पहुंचाए जा सके। जैसा कि आप जानते हैं दूरस्थ शिक्षा में सभी माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। इस इकाई में हम दूर शिक्षा के उत्थान में केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, जनसंचार तथा गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका के बारे में चर्चा करेंगें।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई में यह प्रयास किया गया है कि दूरस्थ शिक्षा के प्रसार में अन्तर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय स्तर, केन्द्र सरकार, राज्य सरकार, जनसंचार व गैर-सरकारी संगठन क्या योगदान दे रहे हैं। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

1. दूरस्थ शिक्षा का इतिहास का वर्णन कर सकेंगे।
2. दूरशिक्षा के उत्थान में केन्द्रीय सरकार की भूमिका को स्पष्ट कर सकेंगे।
3. दूरशिक्षा के उत्थान में राज्य सरकार की भूमिका के बारे में बता सकेंगे।
4. जनसंचार किस प्रकार दूरस्थ शिक्षा के प्रसार में भूमिका निभा रहा है का वर्णन कर सकेंगे।
5. दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे।

4.3 दूरस्थ शिक्षा का इतिहास

शिक्षा शब्द को अनेक अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है। शिक्षा को एक विकास की प्रक्रिया के साथ एक अध्ययन विषय भी मानते हैं। शिक्षा का एक पक्ष सैद्धान्तिक तथा दूसरा व्यवहारिक है। शिक्षा के सैद्धान्तिक पक्ष का सम्बन्ध शिक्षण, अनुदेशन तथा प्रशिक्षण की क्रियाओं को प्रभावशाली बनाने से होता है। शिक्षा का सैद्धान्तिक पक्ष अधिक है, परन्तु उसकी उतनी व्यवहारिकता नहीं है। शिक्षा की एक नवीन प्रणाली दूरस्थ शिक्षा इसका अपवाद है। दूरस्थ शिक्षा का उपयोग एवं व्यवहारिकता अधिक है। आज विश्व के सभी विकासशील देश इस प्रणाली को अपना रहे हैं। दूरस्थ शिक्षा की व्यवहारिकता अधिक है परन्तु सैद्धान्तिक पक्ष उतना विकसित नहीं है। दूरस्थ शिक्षा को अनेक अर्थों में प्रयुक्त करते हैं जैसे- पत्राचार शिक्षा (Correspondence Education), मुक्त अधिगम (Open Learning), गृह अध्ययन (Home Study), स्वतंत्र अध्ययन (Independent Study), बाहय अध्ययन (External Study) परिसर से बाहर अध्ययन

(Off-campus Study)कुछ देशों में यह पत्राचार शिक्षा के नाम से ही जाना जाता है। इसे 'शिक्षा की बाहय प्रणाली' भी कहा जाता है। इसे परम्परागत शिक्षा प्रणाली का विकल्प मानते हैं। अन्य लोग इसे पूरक अथवा सहायक शिक्षा प्रणाली भी कहते हैं। इसका व्यवहारिक पक्ष इतना विस्तृत हो गया है कि दूरस्थ -शिक्षा को एक स्वतन्त्र अध्ययन क्षेत्र भी मानने लगे हैं।

शिक्षा अध्ययन एक व्यापक क्षेत्र है, आज शिक्षा में नए-नए अध्ययन क्षेत्रों का विकास हो रहा है। जनसंख्या की वृद्धि की भांति ज्ञान के क्षेत्र में वृद्धि की गति अधिक है। शिक्षा-तकनीकी में नए अध्ययन क्षेत्र का विकास हुआ है। उसी के अन्तर्गत 'दूरस्थ शिक्षा' का विकास हुआ। इस प्रकार 'दूरस्थ शिक्षा' शिक्षा जैसे वृहद अनुशासन का एक नया अध्ययन क्षेत्र है। दूरस्थ शिक्षा ने अपना अलग से अस्तित्व बनाया है। दूरस्थ शिक्षा को एक गैर अनुयायी तथा गैर पारम्परिक उपागम के रूप में बताया गया है। पारम्परिक मौखिक अनुदेशन के प्रयोग पर आधारित विधियों को निर्मित करने में यह एक नवीन प्रवर्तन है। बैडमेयर (1977) के अनुसार स्वतन्त्र अध्ययन शिक्षण अधिगम की विभिन्न अवस्थाओं की व्यवस्था करता है, जिससे शिक्षक तथा छात्र एक दूसरे से अलग रह कर आवश्यक कार्यों तथा उतरदायित्वों को निभाते हैं, विभिन्न तरीकों से संचारित करते हैं। इसका उद्देश्य विद्यालय के छात्रों को कक्षा के स्थान व प्रारूप से मुक्त करना है, तथा विद्यालय से बाहर के छात्रों को उनके अपने वातावरण में अध्ययन जारी रखने का अवसर तथा सभी छात्रों में स्वतः निर्धारित अधिगम की क्षमता का विकास करना है। मोरे के अनुसार दूरस्थ शिक्षण को अनुदेशन विधियों के परिवारों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसमें शिक्षण व्यवहार अधिगम व्यवहारों से अलग हो कर किए जाते है, छात्र की उपस्थिति में वह संलग्न परिस्थितियां क्रियान्वित की जाती हैं जिससे छात्र के मध्य मुद्रित, इलेक्ट्रानिक यन्त्र से सम्बन्धित तथा अन्य साधनों के द्वारा संचार को सुगम बनाया जा सकता है।

अतः हम कह सकते हैं कि दूरस्थ शिक्षा सीखने-सीखाने कि क्रिया को समाहित किए हुए शिक्षा का एक विस्तृत अर्थ वाला शब्द है। आधुनिक शिक्षा का स्वरूप मात्र प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा तक सीमित न हो कर अपने में विभिन्न कलाएं समेटे हुए औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा के अतिरिक्त शिक्षा की एक नवीन अवधारणा को लिए हुए है। इस शिक्षा प्रणाली में शिक्षक का छात्र से दूर का संबंध होता है। इस शिक्षा प्रणाली में व्यक्ति संस्था से बाहर रहकर, अपने जीवन के काम काज चलाते हुए उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकें, इसी उद्धेश्य की पूर्ति हेतु राष्ट्रीय स्तर पर इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की गई है। विश्व का कोई ऐसा देश नहीं है जहां दूरस्थ शिक्षा पर विचार विमर्श न चल रहा हो। विश्व के सभी देशों में सुदूर शिक्षा द्वारा वहां की जनता को ज्ञान के संपर्क में रखा जा रहा है। विश्व के 5 से अधिक देशों ने अर्न्तराष्ट्रीय सुदूर शिक्षा परिषद की स्थापना की गई है। परिणामतः पारम्परिक शिक्षा प्रणाली के स्थान पर सुदूर शिक्षा प्रणाली के कार्यक्रम पर बल दिया जा रहा है। दूरस्थ शिक्षा द्वारा शिक्षा के सभी स्तर विशेषतः उच्च शिक्षा प्रभावित हो रहे हैं। इस के द्वारा शिक्षण ने 'शिक्षा सभी तक पहुँचे' की धारणा के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दर्शायी है। यह शिक्षा के क्षेत्र में एक नया आन्दोलन है।

परम्परागत कक्षा शिक्षण में चार प्रमुख घटक होते हैं:-

i. शिक्षक
ii. छात्र
iii. पाठयक्रम
iv. सम्प्रेषण प्रणाली

दूरस्थ शिक्षण में शिक्षण के उपरोक्त चारों घटक एक दूसरे से स्वतन्त्र होते हैं। दूरस्थ शिक्षण एवं पत्राचार पाठ्यक्रम बहुमाध्यम-उपागम है। इसमें सम्प्रेषण के लिए मुद्रित तथा अमुद्रित माध्यमों का प्रयोग किया जाता है।

दूर शिक्षा की शुरूआत अंग्रेजी भाषा में शार्ट हैन्ड का विकास करने वाले आइजक पिटमैन ने की। उन्होंने 1840 में दूर बैठे शार्ट हैंड सीखने के इच्छुक व्यक्तियों को शार्ट हैण्ड के पाठ डाक द्वारा प्रेषित किए। कुछ वर्ष बाद 1856 में जर्मनी के लैंगेनशीट और टासैन्ट ने पत्राचार द्वारा भाषाओं का शिक्षण शुरू किया। अमेरिका में पत्राचार द्वारा अनुदेशन को संगठित करने का प्रयत्न किया गया। 1890 में जर्मनी में पत्राचार संस्थानों की स्थापना हुई। 1938 में अंतर्राष्ट्रीय पत्राचार शिक्षा परिषद् का गठन किया गया। रूस संसार का पहला देश है जिसकी सरकार ने 1962 में पत्राचार के माध्यम से शिक्षा को राष्ट्रीय कार्यक्रम के रूप में स्वीकृति प्रदान की। भारत में सर्वप्रथम 1962 को पत्राचार पाठ्यक्रम शुरू किये गए। 1963 में ब्रिटेन के प्रधानमंत्री हैरोटड विल्सन के मस्तिष्क में यह विचार आया कि जो किसी कारणवश विश्वविद्यालयी शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाए हैं और विश्वविद्यालयी शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा रखते हैं। उन्हें शिक्षा प्राप्त करने के अवसर दिए जाने चाहिए। इसके लिए उन्होंने खुले विश्वविद्यालय का विचार प्रस्तुत किया। पत्राचार एवं रेडियो के माध्यम से इस शिक्षा की व्यवस्था तथा सम्भावित संभावनाओं पर विचार करने हेतु एक संसदीय समिति का गठन किया इसके फल स्वरूप 1969 में ब्रिटेन में एक खुले विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। ब्रिटेन में विश्वविद्यालय की सफलता के आधार पर अमेरिका में 1971 में खुले विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। इसके बाद जर्मनी तथा फ्रांस में भी खुले विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। दूरस्थ शिक्षा को आन्दोलन का रूप देने में इवान इलिच का बड़ा योगदान है। 1982 में कनाडा में अन्तर्राष्ट्रीय पत्राचार शिक्षा परिषद् का 12वां विश्व सम्मेलन हुआ। अब तक इसे पत्राचार शिक्षा की बजाए 'दूर शिक्षा' की संज्ञा दी गई। और अन्तर्राष्ट्रीय पत्राचार शिक्षा परिषद का नाम बदल कर 'अन्तर्राष्ट्रीय दूर शिक्षा परिषद्' का नाम दिया गया। वर्तमान में पत्राचार शिक्षा और खुली शिक्षा, दोनों ही दूर शिक्षा के अन्तर्गत आती है। एशिया में खुले विद्यालय की स्थापना सर्वप्रथम जापान में हुई। भारत में सर्वप्रथम 1977 में मदुराई विश्वविद्यालय ने 'खुला विश्वविद्यालय विंग' की स्थापना की। इस प्रकार 1969 से संसार के अनेक देशों मे पत्राचार शिक्षा और मुक्त शिक्षा दोनों का विकास एक साथ होना शुरू हुआ।

4.3.2 राष्ट्रीय स्तर पर दूरस्थ शिक्षा

राजीव गांधी के शब्दों में शिक्षा का मूलभूत उद्देश्य व्यक्ति की ऐसी स्वतंत्रता है जो सबके बीच समानता लाए, व्यक्तिगत उत्कृष्टता को बढ़ावा दे, व्यक्तिगत और सामूहिक आत्मनिर्भरता को प्रश्रय दे और इन सबसे अधिक राष्ट्रीय प्रतिबद्धता को बल दें। नई शिक्षा निति के समर्थन में पूर्व प्रधानमन्त्री का कथन वास्तविक राष्ट्रोन्मुखी

प्रगतिवादी शिक्षा संचार की कल्पना के निर्माण पर बल देता है। भारत में बढ़ती जनसंख्या ने शिक्षा की आवश्यकता को बढ़ाया है। भारत में जनसंख्या का प्रसार अत्यधिक है। सभी को औपचारिक शिक्षा के अवसर न तो प्रदान किए जा सकते हैं और न ही सम्भव है। इस समस्या का समाधान करने के लिए शिक्षा को स्वयं पढ़ने वाले के द्वार पर जाना होगा। इस परिकल्पना को सत्य करने के लिए दूर शिक्षा की कल्पना, शिक्षा के सभी स्तरों पर की गई। भारत में दूर शिक्षा की शूरूआत यूं तो B.B.C. लन्दन से प्रसारित अंग्रेजी भाषा शिक्षण के पाठों के प्रसारण से हो गई थी। 1959 में सर्वप्रथम दूरदर्शन पर प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रमों का प्रसारण शुरू किया गया था। केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड ने देश में पत्राचार शिक्षा शुरू करने की पहल की और 1962 में सर्वप्रथम दिल्ली विश्वविद्यालय में पत्राचार शिक्षा की शुरूआत की गई। भारत में पत्राचार शिक्षा का शुभारंभ 1962 में दिल्ली विश्वविद्यालय ने किया। कोठारी कमीशन (1964-1966) ने पत्राचार शिक्षा के प्रसार पर बल दिया। दिल्ली विश्वविद्यालय के बाद पंजाबी विश्वविद्यालय ने पत्राचार पाठ्यक्रम शुरू किए। 1969 में मैसूर विश्वविद्यालय, और मेरठ विश्वविद्यालय ने स्नातक स्तर पर पत्राचार पाठ्यक्रम शुरू किए। पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ और हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला ने पत्राचार पाठ्यक्रम शुरू किए। 1972 में आन्ध्र विश्वविद्यालय, विशाखापट्नम 1973 में सेन्ट्रल इंस्टिट्यूट ऑफ इंगलिश एण्ड फॉरन लैंग्यूएजिज, 1974 में पटना विश्वविद्यालय, 1976 में बम्बई विश्वविद्यालय, 1979 में मद्रास विश्वविद्यालय, अन्नामलाई और उदयपुर विश्वविद्यालय में पत्राचार पाठ्यक्रम शुरू किए। भारत में खुली शिक्षा की शुरूआत भी उच्च शिक्षा के क्षेत्र से हुई। इस क्षेत्र में मदुरई विश्वविद्यालय की स्थापना 1982 में हैदराबाद में हुई। इसका नाम आन्ध्र प्रदेश मुक्त विश्वविद्यालय था जिसका नाम बदलकर अब डा0 बी0 आर0 अम्बेडकर मुक्त विश्वविद्यालय रखा गया है। इसके बाद कोटा मुक्त विश्वविद्यालय (राजस्थान) और नालन्दा मुक्त विश्वविद्यालय (बिहार) की स्थापना हुई। दिल्ली में 'इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना 1986 में हुई। इसके उपरान्त यशवन्त राव चव्हाण मुक्त विश्वविद्यालय (महाराष्ट्र) की 1989 में स्थापना हुई। मध्य प्रदेश और केरल में भी मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई। दिल्ली में सर्वप्रथम खुले विद्यालय की स्थापना की गई। 1989 में इसे राष्ट्रीय खुला विद्यालय के रूप में उन्नत किया गया। इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय दूर शिक्षा और सतत् शिक्षा के क्षेत्र में विशेष योगदान दे रहा है। दूरस्थ शिक्षा की उन्नति के लिए निम्न आयोगों ने अपने-2 सुझाव दिए जैसेः कोठारी आयोग (1964-1966), राष्ट्रीय शिक्षा नीति, मुक्त स्कूल पद्धति, राष्ट्रीय ज्ञान आयोग, राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् इत्यादि।

कोठारी आयोग (1964-66): कोठारी आयोग (1964-66) का यह सुझाव है कि पत्राचार द्वारा दूरस्थ शिक्षा का व्यापक रूप से गठन किया जाए ताकि लाखों व्यक्तियों को शिक्षा प्रदान की जा सके। इस दिशा में आयोग के मुख्य सुझाव निम्न हैः- जैसे पत्राचार कोर्सों का गठन, विद्यार्थियों को कभी-2 अध्यापकों से मिलने के अवसर, पत्राचार कोर्सों का रेडियो एवं दूरदर्शन के कार्यक्रमों के साथ उचित तालमेल, कृषि, उद्योग तथा अन्य व्यवसाय के कार्यकर्ताओं के लिए विशिष्ट कोर्स, अध्यापकों को नवीन शिक्षण-विधियों एवं तकनीकों का ज्ञान प्रदान करना, सैकण्डरी शिक्षा बोर्ड तथा विश्वविद्यालयों की परीक्षाएं देने का अवसर देना चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986):राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) ने दूरस्थ शिक्षा पर यह विचार व्यक्त किए हैं कि उच्चतर शिक्षा के अवसरों में वृद्धि करने के लिए मुक्त विश्वविद्यालय पद्धति आरम्भ की गई है। राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय को सशक्त बनाना और इस सशक्त साधन का विकास एवं विस्तार करना। राष्ट्रीय शिक्षा नीति को कार्यान्वित करने के लिए कार्यान्वयन- कार्यक्रम, 1886 तैयार किया गया। इस की महत्वपूर्ण बातें निम्नलिखित हैं। :

मुक्त विश्वविद्यालय पद्धति उच्च शिक्षा के अवसरों में वृद्धि करती है, कम खर्चीली है, सफलता को सुनिश्चित करती है और नवीन शिक्षा-पद्धति के विकास में सहायक है, इन लक्ष्यों को सम्मुख रख कर इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। इसे देश में दूरस्थ शिक्षा पद्धति में तालमेल स्थापित करने तथा उस का स्तर निर्धारित करने का दायित्व सौंपा गया है। इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय के अनुसार मुक्त विश्वविद्यालय पद्धति को विकसित एवं सशक्त करने के लिए निम्न उपाय किए जाएंगे जैसे दूरस्थ शिक्षा में डिग्री एवं डिप्लोमा कोर्स, माडूलर नमूने के कोर्स, वितरण पद्धति को सशक्त बनाना, कार्यक्रम की गुणवत्ता को सुनिश्चित करना, शिक्षा के प्रत्येक स्तर के लिए अधिगम का न्यूनतम मानक निर्धारित करना दूरस्थ अधिगम पद्धति में ताल-मेल करना इत्यादि।

मुक्त स्कूल पद्धति: मुक्त विश्वविद्यालय प्रत्येक वर्ग को उच्चतर शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करता है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद के निदेशक ने 1974 में एक कार्यकारी दल का गठन किया जिसका काम दिल्ली में मुक्त-स्कूल की स्थापना की सम्भावना का परीक्षण करना था। कई गोष्ठियों में हुए विचार विमर्श के परिणामस्वरूप 1979 में दिल्ली में 'निर्देशक, मुक्त स्कूल' की नियुक्ति की गई।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (2006-09): 20वीं शताब्दी में संसार के ज्ञान के क्षेत्र में भारी वृद्धि हुई। भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री डा0 मनमोहन सिंह ने देश को आगे बढ़ाने के लिए इस ज्ञान की आवश्यकता का अनुभव किया पर भारतीय समाज को ज्ञानवान समाज कैसे बनाया जाए, इस समस्या के समाधान हेतु श्री सैम पित्रोदा की अध्यक्षता में 13 जून, 2005 को इस आयोग का गठन किया गया। सैम पित्रौदा के अलावा देश के जाने माने 7 विशेषज्ञ सदस्य और थे। इस आयोग ने 2006 से अपना कार्य शुरू किया। इस आयोग के मुक्त और दूरस्थ शिक्षा के सम्बन्ध में मुख्य सुझाव हैं-

i. सभी मुक्त और दूरस्थ शिक्षा संस्थानों के नेटवर्क निर्माण के लिए सरकारी सहायता के माध्यम से एक राष्ट्रीय सूचना और संचार प्रौद्योगिकी आधारित तन्त्र स्थापित किया जाना चाहिए।
ii. बेव-आधारित सामान्य मुक्त संसाधन विकसित करने के लिए एक राष्ट्रीय शिक्षा प्रतिष्ठान की स्थापना की जानी चाहिए।
iii. मुक्त और दूरस्थ शिक्षा के छात्रों का आकलन करने के लिए एक राष्ट्रीय शिक्षा परिक्षण सेवा स्थापित की जानी चाहिए।

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (National Council for Teacher Education): राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् की स्थापना 1973 में की गई थी। दिसम्बर 1993 में संसद में राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् एक्ट, 1993 पास कर इसे संवैधानिक दर्जा दिया गया और 1995 में इस एक्ट के अनुसार इस परिषद का पुर्नगठन किया गया। इस परिषद् का मुख्य कार्यालय दिल्ली में है। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् के मुख्य उद्देश्य-

i. देश भर में शिक्षक शिक्षा प्रणाली का समन्वित विकास करना है तथा मानकों और मानदंडों का समुचित रख रखाव करना है।
ii. राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् को दिए गए जनादेश बहुत व्यापक है। जिसमें स्कूलों पूर्व प्राथमिक माध्यमिक और वरिष्ठ माध्यमिक तथा गैर औपचारिक शिक्षा संस्थानों, अंशकालिक शिक्षा प्रौढ़ शिक्षा तथा पत्राचार व दूरस्थ शिक्षा पाठयक्रमों को पढ़ाने के लिए शिक्षक शिक्षा कार्यक्रमों को शामिल किया गया है।
iii. सभी प्रकार की शिक्षक शिक्षा संस्थाओं के शिक्षकों की न्यूनतम शैक्षिक योग्यता निर्धारित और साथ ही उनके वेतनमान निर्धारित करना इत्यादि।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (National Council for Educational Research and Training): राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् की स्थापना केन्द्रीय सरकार ने 1 अप्रैल 1961 को पूर्व स्थापित बेसिक शिक्षा राष्ट्रीय संस्थान, माध्यमिक शिक्षा प्रसार कार्यक्रम निदेशालय, शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन ब्यूरो, श्रव्य-दृश्य साधन राष्ट्रीय संस्थान एवं पाठ्यपुस्तक ब्यूरो को मिलाकर उनके स्थान पर की थी। इस परिषद् का मुख्य उद्देश्य एवं कार्य स्कूली शिक्षा एवं शिक्षक शिक्षा के प्रसार एवं उनमें गुणात्मक सुधार करना है, और इस हेतु सरकार को समय-समय पर सलाह देना और साथ ही सरकार की नीति के अनुसार शिक्षा और शिक्षक शिक्षा के स्वरूप का निर्धारण करना है, स्कूली शिक्षा के विभिन्न स्तरों के लिए शिक्षण विधियों का विकास करना। प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में तकनीकी सहयोग प्रदान करना स्कूली शिक्षा, जनसंख्या शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा एवं शिक्षक शिक्षा सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन एवं प्रकाशन करना स्कूली शिक्षा, जनसंख्या शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा और शिक्षा शिक्षक से सम्बन्धित सॉफ्टवेयर तैयार करना और उनका प्रसारण करना।

भारत में दूर शिक्षा का महत्व

दूरस्थ शिक्षा एक प्रकार की संस्थागत शिक्षा प्रणाली है। यह स्वाध्याय से भिन्न है। आधुनिक औद्योगिक समाज की आवश्यकताओं ने इस प्रकार की नई शिक्षा को जन्म दिया है। दूरस्थ शिक्षा एक विशिष्ट औद्योगिक विकास है। दूरस्थ शिक्षा ऐसे छात्रों को अध्ययन के अवसर प्रदान करती है जो आर्थिक दृष्टि से कमजोर या देश के आन्तरिक क्षेत्रों में निवास करते हैं तथा किन्ही कारणों से शिक्षा ग्रहण करने से वंचित रह गए हैं। भारत में दूरस्थ शिक्षा का बहुत अधिक महत्व है।

i. भारत के संविधान में शिक्षा को नागरिकों का मूल अधिकार माना गया है। इस अधिकार का वे तभी प्रयोग कर सकते हैं जब सबको शिक्षा सुलभ हो। औपचारिक शिक्षा द्वारा हम शिक्षा को सर्वसुलभ नहीं बना पा रहे थे, उसी की पूर्ति के लिए हमने इस शिक्षा का विधान किया है।
ii. हम देश के दूर दराजों में विशेषकर जहां जनसंख्या बहुत कम है, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा संस्थान नहीं स्थापित कर पा रहे हैं। इन दूर दराज के क्षेत्रों में रहने वालों की शिक्षा की व्यवस्था दूर शिक्षा द्वारा की जा रही है इसलिए इस शिक्षा प्रणाली का बड़ा महत्व है।
iii. काम-धन्धों में लगे स्त्री-पुरूष शिक्षण संस्थाओं में तो उपस्थित हो नहीं सकते उनकी शिक्षा की व्यवस्था दूर शिक्षा द्वारा की जाती है।
iv. कुछ बच्चे अपरिहार्य कारणों से बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं। और इनमें से कुछ आगे की शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं परन्तु कुछ कारणों से कर नहीं पाते दूर शिक्षा द्वारा इनकी शिक्षा व्यवस्था संभव हुई है।
v. हमारी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शैक्षिक अवसरों की समानता पर बल दिया गया है। दूर शिक्षा इसकी प्राप्ति में सहायक हो रही है।

अभ्यास प्रश्न

1. भारत में दूर शिक्षा का क्या महत्व है?

4.4 दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में केन्द्र सरकार की भूमिका

केन्द्र सरकार दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में मानव संसाधन विकास मंत्रालय, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, राज्य मुक्त विश्वविद्यालय महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

4.4.1 मानव संसाधन विकास मंत्रालय (Ministry of Human Resource Development)

केन्द्रीय सरकार की दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में सशक्त भूमिका निभा रही है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय दो भागों में विभाजित हैः- 1. स्कूल शिक्षा और साक्षरता विभाग 2. उच्च शिक्षा विभाग तथा छात्रवृति।स्कूली शिक्षा के अन्तर्गत प्राथमिक, माध्यमिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा तथा साक्षरता आदि आते हैं। उच्च शिक्षा विभाग विश्वविद्यालय शिक्षा, तकनीकी शिक्षा तथा छात्रवृति से सम्बन्धित है। केन्द्र सरकार यू.जी.सी. को अनुदान देती है और देश में केन्द्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना करती है। केन्द्र सरकार ही यू.जी.सी. की सिफारिश पर शैक्षिक संस्थाओं को विश्वविद्यालय घोषित करती है।देश की मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाएं तथा विश्वविद्यालय और पारम्परिक दोहरी पद्धति वाले विश्वविद्यालय में पत्राचार पाठ्यक्रम संस्थाए शामिल है। दूरस्थ शिक्षा, कौशल उन्नयन तथा शैक्षिक दृष्टि से

बहुत ही महत्वपूर्ण होती जा रही है। केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित संस्थाओं के माध्यम से दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में सशक्त भूमिका निभा रही है।

4.4.2 विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (University Grants Commision)

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना 1948 में की गई थी, 1952 में केन्द्र सरकार ने यह फैसला किया कि सभी केन्द्रीय विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, उच्च शिक्षा के संस्थानों के लिए सार्वजनिक ढंग से अनुदान सहायता के आवंटन से संबंधित मामलों को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को भेजा जाए। औपचारिक रूप से विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना 1956 में हुई थी। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अपने ऊपर शिक्षा से संबधित सभी जिम्मेदारियों को सफलतापूर्वक निभा रहा है और यह शिक्षा की गुणवत्ता को बनाए रखने में सफल रहा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग मुख्य रूप से उच्च औपचारिक शिक्षा को निमन्त्रित करता है परन्तु इसके पास दूरस्थ शिक्षा को निमंत्रित करने के विनियमित अधिकार हैं। जुलाई 1975 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने पत्राचार शिक्षा से संबद्ध आवश्यक निर्देश एवं सिद्धान्त निश्चित किए। सन् 1978 में शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार ने एक पुस्तक का प्रकाशन किया जिसका नाम था ''भारतीय प्रशासन के विकास कार्यक्रमों में प्रौढ़ शिक्षा की भूमिका'', इसमें पत्राचार शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्यों का विवेचन किया गया है-

i. शिक्षा की ऐसी वैकल्पिक प्रणाली की व्यवस्था करना जिससे देश की विशाल जनसंख्या ज्ञानोपार्जन करे और अपनी व्यवसायिक कुशलता में वृद्धि करे।
ii. व्यक्ति, सुविधा और अपनी गति को ध्यान में रख कर शिक्षा प्राप्त करें।
iii. लोग अपने विश्राम के समय को शिक्षा में लगाए।

4.4.3 इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (Indira Gandhi National Open University)

भारत में इस समय कई विश्वविद्यालय हैं, परन्तु उनमें राष्ट्रीय स्तर का केवल इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय ही है। इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना 1985 में की गई ।यह अनेक अर्थों में अन्य भारतीय खुले विश्वविद्यालयों से भिन्न और विशिष्ट है। यह विश्वविद्यालय पूर्ण रूप से स्वायत्तशासी विश्वविद्यालय है। यह विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के क्षेत्र से बाहर है। इसका सम्पूर्ण वित्तीय भार केन्द्रीय मानव संसाधन मंत्रालय वहन करता है। इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय में अनेक विभाग हैं, जिन्हें स्कूलों की संज्ञा दी गई है। ये स्कूल अपने-अपने क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रम चलाते हैं। इन पाठ्यक्रमों के संचालन के लिए देश-विदेश में 2011 तक 61 क्षेत्रीय केन्द्र (Regional Centres),7 उपक्षेत्रीय केन्द्र और अध्ययन केन्द्र (Study centres) स्थापित किये जा चुके हैं। प्रत्येक क्षेत्रीय केंद्र के अन्दर उसके आस पास के उच्च शिक्षा केन्द्रों में अध्ययन केन्द्र (Study centres)स्थापित हैं। प्रत्येक केन्द्र में एक पार्ट टाईम संयोजक और आवश्यकतानुसार अनेक पार्ट टाईम प्राध्यापक नियुक्त हैं। इन अध्ययन केन्द्रों से अभ्यार्थियों को मुद्रित सामग्री प्रदान की जाती है सम्पर्क कार्यक्रम चलाए जाते हैं,और परीक्षा सम्पादित की जाती है।इन्दिरा गांधी

राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के विभिन्न स्कूलों द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार के डिप्लोमा और सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम चलाए जा रहे हैं। वर्तमान में निम्नलिखित पाठ्यक्रमों की व्यवस्था है:- जैसेः बैचलर डिग्री, मास्टर डिग्री, डिप्लोमा कोर्स, पोस्टग्रेजुएट डिप्लोमा कोर्स, एडवांस डिप्लोमा कोर्स, सर्टिफिकेट कोर्स इत्यादि। अतः यह कहा जा सकता है कि इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय दूरस्थ शिक्षा में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

इसके लिए कुछ उद्धेश्य निर्धारित किए गए:

i. जनसंख्या के बहुत बड़े भाग, विशेषकर वे लोग जो नियमित शिक्षा से लाभान्वित नहीं हो सके, तक उच्चतर शिक्षा का पहुंचना।
ii. ज्ञान एवं कौशलों के स्तर को ऊंचा करने के लिए अनवरत शिक्षा के कार्यक्रम गठित करना।
iii. विशिष्ट जनसमूहों- जैसे पिछड़े क्षेत्रों में रहने वाले लोग पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले लोग, गृहणियां आदि के लिए उच्च शिक्षा के विशेष कार्यक्रम गठित करना।
iv. देश में दूर शिक्षा के क्षेत्र में स्तरमान बनाए रखना। इग्नू में आज कई शिक्षण कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। इन कार्यक्रमों में प्रवेश योग्यता इण्टरमीडिएट तथा समकक्ष है। मुक्त विश्वविद्यालय के कार्य को गतिशील बनाने के लिए रीजनल सेन्टर्स बनाए गए हैं। इनका कार्य दूसरे शैक्षिक संस्थानों से समन्वय स्थापित करना होता है।

इस विश्वविद्यालय में शिक्षण में शिक्षा तकनीकी और आधुनिक संचार तकनीकी का प्रयोग किया जाता है। इसकी शैक्षिक कार्य नीति में मुद्रित सामग्री का वितरण, दृश्य- श्रव्य सामग्री का प्रयोग व सम्पर्क कार्यक्रम व्यवस्था शामिल है। 26 जनवरी 2000 को इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय और दूरदर्शन के संयुक्त प्रयास से इनसेट (INSET) के माध्यम से शिक्षा चैनल ज्ञान दर्शन की शुरूआत की गई है। इसके अतिरिक्त एक विशेष शैक्षिक चैनल EDUSET शुरू किया गया है। इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय विधियों, अध्ययन स्थल, पाठयक्रमों के समामेल और नामांकन हेतु पात्रता, प्रवेश आयु तथा मूल्यांकन हेतु एक उदार एवं मुक्त प्रणाली है।

4.4.4 दूरस्थ शिक्षा परिषद् (Distance Education Council)

दूरस्थ शिक्षा परिषद् का निर्माण 1991 में हुआ था। दूरस्थ शिक्षा परिषद् , यह खुली शिक्षा प्रणाली के विकास में मदद करता है तथा शिक्षा की उच्च गुणवत्ता सुनिश्चित करता है। यह शिक्षा परिषद्, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय का एक भाग है। दूरस्थ शिक्षा परिषद का कार्य मुक्त और दूरस्थ अध्ययन प्रणालियों को बढ़ावा देना है, दूरस्थ शिक्षा परिषद् देश में मुक्त और दूरस्थ शिक्षा संस्थाओं को तकनीकी और वित्तीय सहायता देता है। तकनीकी सहायता में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार हेतु कम्प्यूटरीकरण, व्यवसायिक विकास और प्रशिक्षण द्वारा सहायता सेवाएं तथा संस्थागत सुधार आदि शामिल हैं। वित्तीय सहायता में राज्य मुक्त विश्वविद्यालयों व अन्य मुक्त व दूरस्थ अध्ययन संस्थानों को वित्तीय सहायता देना, अनुसंधान अनुदान, अर्न्तराष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लेने के लिए अनुदान व विभिन्न संस्थाओं को सेमिनार आयोजन करने हेतु निधियां उपलब्ध करवाना शामिल है।

- दूरस्थ शिक्षा परिषद् खुले और दूरस्थ शिक्षा संस्थाओं को वित्तीय सहायता अनुदान और शैक्षिक दिशा- निर्देश प्रदान करता है।
- मूल्यांकन, प्रमाणीकरण तथा प्रवेश के संबन्ध में मानदण्ड तथा दिशा निर्देश विकसित करता है।
- यह ODL प्रणाली में अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा देता है।
- यह मानव संसाधन विकास के कार्यक्रम की व्यवस्था को बढ़ावा देता है।
- यह परिषद विभिन्न खुले विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान किए जाने वाले कार्यक्रमों के बारे में जानकारी एकत्रित करता है और वितरित करता है।

4.4.5 राज्य मुक्त विश्वविद्यालय (State Open Universities)

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने भारतीय विश्वविद्यालयों में पत्राचार पाठ्यक्रमों के लिए मार्ग दर्शाया था। मुक्त विश्वविद्यालय प्रणाली का प्रारम्भ उच्च शिक्षा तथा सभी को समान शिक्षा के अवसर प्रदान करने के लिए किया गया था। सन् 1982 में प्रथम मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना आन्ध्र प्रदेश में की गई थी। इसके पश्चात् सन् 1985 में इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई यह सबसे बड़ा खुला विश्वविद्यालय है। भारत में अभी तक 14 मुक्त विश्वविद्यालय हैं, जो पारम्परिक विषयों जैसे की बी.ए., बी.कॉम., बी.एस.सी., बी.एड., एम.एड., एल.एल.बी. के अतिरिक्त अन्य पाठ्यक्रमों जैसे कि अंग्रेजी शिक्षण में डिप्लोमा, बैकिंग, श्रम अधिनियम, निजी प्रबंधन, जनसंपर्क, पत्रकारिता, पुस्तकालय विज्ञान, पर्यटन तथा होटल प्रबंधन, सहयोग तथा ग्रामीण अध्ययन में डिप्लोमा आदि का संचालन कर रहे हैं यह विश्वविद्यालय उन लोगों की जरूरतें पूरी करते हैं जो विभिन्न कारणों से नियमित पाठयक्रमों का अध्ययन करने में असमर्थ हैं। भारत में अभी तक 14 मुक्त विश्वविद्यालय हैं तथा इनमें एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय है। मुक्त विश्वविद्यालयों की सूचीः-

1. इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय - (दिल्ली)
2. डॉ. बी0 आर0 अम्बेडकर विश्वविद्यालय- आन्ध्रप्रदेश
3. वर्धमान महावीर मुक्त विश्वविद्यालय- कोटा (राजस्थान)
4. नालन्दा मुक्त विश्वविद्यालय - बिहार (पटना)
5. यशवन्त राव चव्हान महाराष्ट्र मुक्त विश्वविद्यालय- (महाराष्ट्र) नासिक
6. मध्यप्रदेश भोज मुक्त विश्वविद्यालय -मध्यप्रदेश (भोपाल)
7. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर मुक्त विश्वविद्यालय-गुजरात (अहमदाबाद)
8. कर्नाटक स्टेट मुक्त विश्वविद्यालय- कर्नाटक (मैसूर)
9. नेताजी सुभाष मुक्त विश्वविद्यालय- पश्चिम बंगाल (कोलकता)
10. यू0पी0 राजश्री टंडन मुक्त विश्वविद्यालय- उत्तर प्रदेश इलाहाबाद
11. तमिलनाडु मुक्त विश्वविद्यालय- चेन्नई
12. पं. सुन्दरलाल शर्मा मुक्त विश्वविद्यालय- छत्तीसगढ़
13. उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय - उत्तराखंड (नैनीताल)

14. के. के. हान्डीक स्टेट विश्वविद्यालय- असम (गुवाहाटी)

अभ्यास प्रश्न

2. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना कब हुई थी?
3. दूरस्थ शिक्षा में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का क्या योगदान है?

4.5 दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में राज्य सरकार की भूमिका

देश में राज्य स्तर पर दूरस्थ शिक्षा के प्रचार व प्रसार में राज्य मुक्त विश्वविद्यालय स्थापित किए हैं। यह विश्वविद्यालय विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन कर रहे हैं ताकि वह लोग जो किसी कारणवश शिक्षा पूरी नहीं कर पा रहे उन तक शिक्षा सुचारू रूप से पहुँचाई जा सके। यह विश्वविद्यालय निम्नलिखित हैं:

सन् 1962 में दिल्ली विश्वविद्यालय ने पत्राचार कोर्स एवं अनवरत-शिक्षा निदेशालय के अधीन पत्राचार द्वारा दूरस्थ शिक्षा का प्रोजेक्ट आरम्भ किया।

1. पंजाबी विश्वविद्यालय (पटियाला) ने यह कोर्स सन्1967 में आरम्भ किये।
2. कुछ और विश्वविद्यालय
   i. मैसूर विश्वविद्यालय
   ii. पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ 1971
   iii. हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय ने 1971 में पत्राचार कोर्स निदेशालय की स्थापना की।
3. कुछ और विश्वविद्यालय जिन्होंने पत्राचार के निदेशालय स्थापित किये हैं:-
   i. कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र 1976 वर्ष
   ii. जम्मू विश्वविद्यालय,जम्मू 1976 वर्ष
   iii. श्रीनगर विश्वविद्यालय, श्रीनगर 1976 वर्ष
   iv. मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ 1969 वर्ष
   v. बम्बई विश्वविद्यालय, बम्बई 1971 वर्ष
   vi. राजस्थान विश्वविद्यालय, राजस्थान 1968 वर्ष
   vii. मदुराई विश्वविद्यालय, मदुराई 1971 वर्ष
   viii. केरल विश्वविद्यालय, केरल 1977 वर्ष
   ix. भोपाल विश्वविद्यालय, भोपाल 1975 वर्ष
   x. अन्नामलाई विश्वविद्यालय, अन्नामलाई
   xi. उत्कल विश्वविद्यालय, उत्कल 1975 वर्ष

xii. उदयपुर विश्वविद्यालय, उदयपुर

4. आन्ध्रप्रदेश मुक्त विश्वविद्यालयः भारत में पहला मुक्त विश्वविद्यालय हैदराबाद में 1982 में स्थापित किया गया।
5. मुक्त स्कूल दिल्ली 1983:- भारत में अंशौपचारिक शिक्षा की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सन 1983 में दिल्ली में एक मुक्त स्कूल की स्थापना की गई।
6. इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय 1985:- इस की स्थापना सितंबर 1985 में की गई।
7. नालन्दा मुक्त विश्वविद्यालय 1987
8. कोटा मुक्त विश्वविद्यालय 1987
9. महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक ने 1988 में बी0एड0 का पत्राचार कोर्स आरम्भ किया।
10. पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला ने 1988 में बी0एड0 के पत्राचार कोर्स को अंग्रेजी व पंजाबी माध्यमों द्वारा आरम्भ किया।

4.5.1 मुक्त विद्यालय (Open Schools): मुक्त विश्वविद्यालय सभी को उच्चतर शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करता है और मुक्त स्कूल पद्धति सकेण्डरी स्तर पर शिक्षा संबंधी मांगो को पूरा करती है। अगस्त 1974 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् के निदेशक ने एक कार्यकारी दल नियुक्त किया जिस का कार्य दिल्ली में मुक्त स्कूल की स्थापना की सम्भावना का परीक्षण करना था। इसके पश्चात 1975 से 1978 तक राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान एवं शिक्षण परिषद तथा केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय के बीच कई गोष्ठियां हुई। इन गोष्ठियो में हुए विचार विमर्श के आधार पर मुक्त स्कूल से संबधित एक Blue Print तैयार किया गया जिसे शिक्षा मंत्रालय ने स्वीकृति प्रदान कर दी। विद्यालय से बाहर रह गए लोगों, शिक्षा छोड़ देने वाले व्यक्तियों गृहणियों तथा माध्यमिक शिक्षा के आयुवर्ग में न आने वाले जनों के लिए एक ऐसी प्रणाली की आवश्यकता महसूस की गयी जो लचीले हो, भविष्योन्मुखी हो और जो शिक्षा को छात्रों के द्वार तक ले जाने मे समर्थ हो। ऐसी प्रणाली पर अनेक विचार विमर्श के पश्चात् केन्द्रीय माध्यमिक बोर्ड ; (CBSE) 1979 में देश का पहला मुक्त विद्यालय दिल्ली में स्थापित किया। औपचारिक माध्यमिक शिक्षा प्रणाली के विकल्प के रूप में विद्यालय स्तर पर मुक्त अधिगम व्यवस्था के रूप में शिक्षा प्रदान करने के ध्येय से मुक्त विद्यालय आरम्भ किये गये। मुक्त विद्यालय के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं :-

a. औपचारिक विद्यालय प्रणाली के विकल्प के रूप में एक समानान्तर अनौपचारिक प्रणाली प्रस्तुत करना।
b. विद्यालय प्रणाली से बाहर रह गए छात्रों, शिक्षा छोड़ देने वालों, कार्यकारी प्रौढ़ों, गृहणियों, समाज से वंचित वर्गों के छात्रों तथा देश के दूरस्थ क्षेत्रों में रहने वाले ऐसे लोगों को जो विद्यालयों में नहीं जा पाते, , उन कामकाजी महिलाओं के लिए जिनके पास कोई औपचारिक योग्यता नहीं है,आर्थिक रूप से कमजोर विद्यार्थी, ड्रॉप आउट विद्यार्थी ,10वीं , 12वीं में फेल होने वाले विद्यार्थी, व्यवसायिक व जीवन को सवृंद्ध बनाने वाले कोर्स का अध्ययन करने वाले इच्छुक व्यक्ति उनके लिए शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराना

c. दूरस्थ शिक्षण की विधियों के द्वारा माध्यमिक, वरिष्ठ माध्यमिक, तकनीकी, व्यावसायिक तथा जीवन को समृद्ध करने वाले पाठ्यक्रम संचालित करना।
d. माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रमों तक ले जाने वाले ब्रिज कोर्स (Bridge Cource) या प्रारम्भिक पाठ्यक्रमों का आयोजन करना।
e. अनुसंधान, प्रकाशन तथा सूचना के प्रसार के द्वारा शिक्षा की एक मुक्त तथा दूरस्थ अधिगम पर आधारित प्रणाली को प्रोत्साहित करना।

अभीष्ट समूहः-

i. लड़कियां तथा महिलाएं (Girls and Women)
ii. बेरोजगार तथा कार्यरत प्रौढ़ (Unemployed and Working adults)
iii. जनजाति तथा अनुसूचित जाति (Scheduled caste and Tribes)
iv. भूतपूर्व फौजी (Ex-Servicemen)
v. शारीरिक मानसिक विकलांग (Physically and mentally disabled)

4.5.2 राज्य शिक्षा अनुसंधान एवं शिक्षण परिषद् (State Council for Education Research and Training):- राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में यह घोषणा की गई थी कि राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद के अनुरूप प्रत्येक राज्य में राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् की स्थापना की जाएगी। इस घोषणा के आधार पर राज्य स्तर पर राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषदों का गठन किया गया। इन्हें संक्षेप में राज्य शिक्षा अनुसंधान एवं शिक्षण परिषद् कहा जाता है। इनका मुख्य कार्य राष्ट्रीय शिक्षा नीति एवं उसकी कार्य योजना के अनुरूप और राज्य विशेष की मांगो के अनुरूप स्कूली शिक्षा के स्वरूप का निर्धारण, उसके उददेश्य एवं पाठ्यक्रमों का निर्धारण, उनके लिए उपयुक्त शिक्षण विधियों का विकास व शैक्षिक उपलब्धियों की मूल्यांकन की तकनीकी का विकास और इन सब क्षेत्रों में निरन्तर शोध कार्य की व्यवस्था करना है। साथ ही स्कूलों का सर्वेक्षण और उनके सेवा पूर्व शिक्षकों और सेवारत शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम बनाना और उनकी व्यवस्था करना है। उद्देश्यों एवं कार्यों की पूर्ति के लिए राज्य शिक्षा अनुसंधान एवं शिक्षण परिषद् में अनेक विभाग होते है जैसे -प्रारम्भिक एंव प्रौढ़ शिक्षा विभाग। यह प्रौढ़ शिक्षा का नियोजन, प्रौढ़ साहित्य का निर्माण एवं उसका पुर्ननिरिक्षण करने का कार्य करता है। भाषा विभाग, विज्ञान विभाग, पाठ्यपुस्तक विभाग, कार्यानुभव विभाग, शैक्षिक मूल्यांकन तथा अनुसंधान विभाग इत्यादि।

सभी राज्यों में राज्य शिक्षा अनुसंधान एवं शिक्षण परिषद स्कूली शिक्षा, स्कूली शिक्षकों के प्रशिक्षण और प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में अहम भूमिका निभा रही है। राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषदें राज्य विशेष की स्कूली शिक्षा के, राज्य विशेष की परिस्थितियों एवं आवश्यकतानुकूल, स्वरूप निर्धारण एवं उनमें निरन्तर विकास करने के लिए उतरदायी है।

अभ्यास प्रश्न

4. राज्य शिक्षा अनुसंधान एवं शिक्षण परिषद् का महत्व लिखिए।

4.6 दूरस्थ शिक्षा के प्रसार में जन संचार की भूमिका

जनसंचार दूरस्थ शिक्षा प्रदान करने का एक सशक्त माध्यम है। संचार शब्द की उत्पत्ति लैटिन शब्द 'comunis' से हुई है जिसका अर्थ है 'आम'। समुदाय, साम्यवाद, समानता आदि कुछ संबंधित शब्द है। संचार के बिना एक दुनिया की कल्पना भी नहीं की जा सकती। संचार मानवीय रिश्तों और प्रगति के लिए आवश्यक है। आधुनिक दुनिया में जनसंचार की भूमिका बहुत अधिक है। जनसंचार हमारे दैनिक जीवन को किसी भी अन्य संस्था से अधिक प्रभावित करता है। यह एक संगठित समूह के रूप में कार्य करता है जो एक ही समय में लोगों की बड़ी संख्या को एक ही संदेश पहुंचाता है। जनसंचार को तीन तरह से वर्गीकृत किया जा सकता हैः-

i. भौतिक रूप
ii. शामिल प्रौद्योगिकी
iii. संचार प्रक्रिया की प्रकृति।

4.6.1 जनसंचार की मुख्य श्रेणियां

i. प्रिंट मीडिया
ii. इलेक्ट्रॉनिक मीडिया

प्रिंट मीडियाः समाचार पत्र, पत्रिका, पुस्तकें, अन्य दस्तावेज। इलेक्ट्रॉनिक मीडियाः रेडियो, सिनेमा, टेलीविज़न तथा आडियो-वीडियो रिकॉर्ड। न्यू मीडियाः- इसमें डेस्कटॉप, पोर्टेबल कम्पयूटर तथा वायरलैस आदि का उपयोग शामिल है। जैसेः- सीडी रोम, डीवीडी, इन्टरनेट सुविधाओं, ई-मेल इत्यादि। जनसंचार हमारे व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन पर प्रभाव डालता है। जनसंचार का हमारे जीवन के विभिन्न हिस्सों में प्रभाव है जैसेः- सूचना, मनोरंजन, शिक्षा आदि-

i. जनसंचार के माध्यम से परीक्षा परिणाम, मौसम पूर्वानुमान, यातायात नियमों तथा सावधानियों के बारे में जानकारी मिलती है।
ii. जनसंचार समाज के लिए आजीवन शिक्षक का काम करता है।
iii. गैर-समाचार सामग्री या समाचार सामग्री, संपादकीय, लेख अखबारो में कॉलम हमें एक विषय की संपूर्ण जानकारी देते हैं।
iv. श्रव्य-दृश्य मीडिया के रूप में टेलीवीज़न व रेडियो मुख्य रूप से मनोरंजन पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। इसमें अधिकतर कार्यक्रम खेल, फिल्म, शिक्षा आदि से जुड़े होते हैं। दूरदर्शन भी सम्प्रेषण का एक मुख्य साधन है।

4.6.2 दूरस्थ शिक्षा में जनसंचार का महत्व

दूरस्थ शिक्षा में जनसंचार बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दूरस्थ शिक्षा में छात्र का शिक्षक से पारम्परिक संबंध नहीं हो पाता इसलिए दोनों प्रकार के माध्यम मुद्रित तथा अमुद्रित प्रयोग किए जाते हैं जो व्यक्तिगत संपर्क की कमी को पूरा करते हैं। तकनीकी अमुद्रित माध्यमों द्वारा अनुदेशन के प्रस्तुतीकरण तथा सम्प्रेषण के प्रति छात्रों की एकाग्रता में वृद्धि होती है। कक्षा शिक्षण की अपेक्षा दूरदर्शन द्वारा अनुदेशन के प्रति एकाग्रता अधिक होती है। पत्राचार शिक्षा में विद्यार्थियों को घर पर अध्ययन करने के लिए शिक्षण -सामग्री भेजी जाती है यह अधिगम पुस्तिकाओं पैम्फलेटों पुस्तकों या मुद्रित व्याख्यानों के रूप में हो सकती है। दूरदर्शन दूरस्थ शिक्षा प्रदान करने का एक और सशक्त साधन है। 1972 में दूरदर्शन को शिक्षण माध्यम के रूप में अपनाया गया था। पत्राचार तथा रेडियो द्वारा किसी भी कार्य का प्रदर्शन करना असंभव होता है परन्तु टेलीविज़न द्वारा क्रियात्मक विषयों पर अच्छी तरह कार्य किया जा सकता है। दूर-दराज के इलाकों में शिक्षण प्रदान करने का यह सबसे उपयोगी साधन है। उपग्रह शिक्षण दूरदर्शनः- यह अगस्त 1975 में आरंभ किया गया था। इसके कार्यक्रम स्कूल में तथा बाहर भी प्रयुक्त किये जा सकते हैं। यह कई तरह की सूचनाएं लोगों तक पहुंचाता है। दूरदर्शन के प्रसारण की दूरी सीमित होती है परन्तु उपग्रह के प्रयोग से इस दूरी को विस्तृत कर दिया गया है।

4.7 दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका

गैर सरकारी संगठन मूल रूप से कानूनी तौर पर गठित संगठन है। यह संगठन स्वतन्त्र रूप से कार्य करते हैं तथा किसी भी सरकार के अधीन नहीं होते। दुनिया भर में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर गैर सरकारी संगठनों की संख्या 40,000 के आसपास है। शिक्षा के क्षेत्र में गैर सरकारी संगठन बहुत ही सार्थक योगदान दे रहे हैं। यह संगठन विशेषतः योजना व कार्यान्वयन, क्षमता विकास के लिए प्रभावी शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रमों के आयोजन, सामुदायिक विकास अध्यापन से संबधित काम आदि से संबधित है। भारत में कई गैर सरकारी संगठन विभिन्न स्तरों पर रोजगार के अवसर प्रदान कर रहे हैं।

गैर सरकारी संगठन निम्न तीन तरीकों से अपनी भागीदारी सुनिश्चित करते हैं:-

1. केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा प्रत्यक्ष धन के माध्यम से
2. राज्य तथा राष्ट्रीय संस्थानों द्वरा वित्त-पोषण की गतिविधियों के माध्यम से
3. ग्राम शिक्षा समितियों द्वारा वित्त-पोषित सामुदायिक गतिविधियों में भागीदारी के माध्यम से गैर सरकारी संगठनों के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं:-
   i. गरीब व आर्थिक रूप से पिछड़े बच्चों को मुफ्त शिक्षा प्रदान करना।
   ii. गरीब बच्चों के लिए छोटे समूहों में मुफ्त कक्षाओं का संचालन करना।
   iii. ग्रामीण गरीबों को चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करना।
   iv. महिलाओं के कल्याण और उत्थान के लिए काम करना।
   v. प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में भी गैर सरकारी संगठन अहम भूमिका निभा रहे हैं।

अभ्यास प्रश्न

5. जन संचार की मुख्य श्रेणियां कौन सी हैं?

4.8 सारांश

इस ईकाई में हमने दूरस्थ शिक्षा का अर्थ, अन्तर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर दूरस्थ शिक्षा की भूमिका के बारे में पढ़ा और ये भी पढ़ा कि दूरस्थ शिक्षा की उन्नति के लिए निम्न आयोगों जैसे- कोठारी आयोग (1964-1966), राष्ट्रीय शिक्षा नीति, (1986), मुक्त स्कूल पद्धति, राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (2006-2009), राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (1973) इत्यादि, ने क्या-क्या सुझाव दिए। तथा इस इकाई में हमने दूर शिक्षा के उत्थान में विभिन्न संस्थाओं, केन्द्र सरकार, राज्य सरकार, जनसंचार तथा गैर सरकारी संगठन की भूमिका के बारे में भी पढ़ा। इस इकाई का मुख्य उद्देश्य यह है कि आप दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में विभिन्न संस्थाओं के योगदान को स्पष्ट कर सके।

4.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. भारत के संविधान में शिक्षा को नागरिकों का मूल अधिकार माना गया है। इस अधिकार का वे तभी प्रयोग कर सकते हैं जब सबको शिक्षा सुलभ हो। औपचारिक शिक्षा द्वारा हम शिक्षा को सर्वसुलभ नहीं बना पा रहे थे, उसी की पूर्ति के लिए हमने इस शिक्षा का विधान किया है। हम देश के दूर दराजों में, विशेषकर जहां जनसंख्या बहुत कम है, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा संस्थान नहीं स्थापित कर पा रहे हैं। इन दूर दराज के क्षेत्रों में रहने वालों की शिक्षा की व्यवस्था दूर शिक्षा द्वारा की जा रही है इसलिए इस शिक्षा प्रणाली का बड़ा महत्व है। काम-धन्धों में लगे स्त्री-पुरूष शिक्षण संस्थाओं में तो उपस्थित नहीं हो सकते उनमें से जो चाहते हों, उनकी शिक्षा की व्यवस्था दूर शिक्षा द्वारा की जाती है। कुछ बच्चे अपरिहार्य कारणों से बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं। और इनमें से कुछ आगे की शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं परन्तु कुछ कारणों से कर नहीं पाते दूर शिक्षा द्वारा इनकी शिक्षा व्यवस्था संभव हुई है। हमारी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शैक्षिक अवसरों की समानता पर बल दिया गया है। दूर शिक्षा इसकी प्राप्ति में सहायक हो रही है।
2. इस आयोग की स्थापना 1948 में की गई थी।
3. 20वीं शताब्दी में संसार के ज्ञान के क्षेत्र में भारी वृद्धि हुई। भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री डा0 मनमोहन सिंह ने देश को आगे बढ़ाने के लिए इस ज्ञान की आवश्यकता का अनुभव किया पर भारतीय समाज को ज्ञानवान समाज कैसे बनाया जाए, इस समस्या के समाधान हेतु श्री सैम पित्रोदा की अध्यक्षता में 13 जून, 2005 को इस आयोग का गठन किया गया। सैम पित्रौदा के अलावा देश के जाने माने 7 विशेषज्ञ सदस्य और थे। इस आयोग ने 2006 से अपना कार्य शुरू किया। इस आयोग

के मुक्त और दूरस्थ शिक्षा के सम्बन्ध में मुख्य सुझाव है- सभी मुक्त और दूरस्थ शिक्षा संस्थानों के नेटवर्क निर्माण के लिए सरकारी सहायता के माध्यम से एक राष्ट्रीय सूचना और संचार प्रौद्योगिकी आधारित तन्त्र स्थापित किया जाना चाहिए। बेव-आधारित सामान्य मुक्त संसाधन विकसित करने के लिए एक राष्ट्रीय शिक्षा प्रतिष्ठान की स्थापना की जानी चाहिए।मुक्त और दूरस्थ शिक्षा के छात्रों का आकलन करने के लिए एक राष्ट्रीय शिक्षा परिक्षण सेवा स्थापित की जानी चाहिए।

4. राज्य शिक्षा अनुसंधान एवं शिक्षण परिषद् का मुख्य कार्य राष्ट्रीय शिक्षा निति एवं उसकी कार्य योजना के अनुरूप और राज्य विशेष की मांगो के अनुरूप स्कूली शिक्षा के स्वरूप का निर्धारण, उसके उददेश्य एवं पाठ्यक्रमों का निर्धारण, उनके लिए उपयुक्त शिक्षण विधियों का विकास व शैक्षिक उपलब्धियों की मूल्यांकन की तकनीकी का विकास और इन सब क्षेत्रों में निरन्तर शोध कार्य की व्यवस्था करना है। साथ ही स्कूलों का सर्वेक्षण और उनके सेवा पूर्व शिक्षकों और सेवारत शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम बनाना और उनकी व्यवस्था करना है। उद्देश्यों एवं कार्यों की पूर्ति के लिए राज्य शिक्षा अनुसंधान एवं शिक्षण परिषद् में अनेक विभाग होते हैं जैसे -प्रारम्भिक एंव प्रौढ़ शिक्षा विभाग। यह प्रौढ़ शिक्षा का नियोजन, प्रौढ़ साहित्य का निर्माण एवं उसका पुर्ननिरिक्षण करने का कार्य करता है। भाषा विभाग, विज्ञान विभाग, पाठ्यपुस्तक विभाग, कार्यानुभव विभाग, शैक्षिक मूल्यांकन तथा अनुसंधान विभाग इत्यादि।
5. जनसंचार की मुख्य श्रेणियां निम्नलिखित हैः-
    i. प्रिंट मीडिया
    ii. इलेक्ट्रॉनिक मीडिया

प्रिंट मीडियाः समाचार पत्र, पत्रिका, पुस्तकें , अन्य दस्तावेज।
इलेक्ट्रॉनिक मीडियाः रेडियो, सिनेमा, टेलीविज़न तथा आडियो-वीडियो रिकॉर्ड।
न्यू मीडियाः- इसमें डेस्कटॉप, पोर्टेबल कम्प्यूटर तथा वायरलैस आदि का अपयोग शामिल है। जैसेः- सीडी रोम, डीवीडी, इन्टरनेट सुविधाओं, ई-मेल इत्यादि।

4.10 संदर्भ ग्रंथ एवं कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. Reddy, V. V., and Manulika. S. (2000). The World of Open and Distance Learning. Viva Books Pvt. Ltd. New Delhi.
2. Goel, I., and Goel, S.G. (2000). Distance Education in the 21st Century. Deep Publications Pvt. Ltd. New Delhi-110027.
3. Bhaskara, D. (2001). Distance Education in Different Countries. APH Publishing Coorporation New Delhi.

4. Ramauijam, P.R. (2006). Globalisation, Education and Open Distance Learning. Shipra Publications Delhi.
5. Sahani, A., and Kaur. (1996). Managing Distance Education. Deep & Deep publications New Delhi.
6. Rao, M.S. (1995). Quality Assurance in Distance Education. Published by Dr. B.R. Ambedkar Open University, Hyderabad.
7. Ramanujam, P.R. (1995). Reflections on Distance Education for India. Mahak Publications New Delhi.
8. Venkataiah, S. (2001). Distance Education Challenge and Response. Anmol Publication Pvt. Ltd. New Delhi.
9. Purushothaman & Stella. (1998). Media Technology in Distance Education. The Indian Pubications Ambala Cantt.
10. Sharma, R.A. (1995) Distance Education Theory, Practice and esearch. R.A Eagle Books International Meerut Cantt.
11. Young, M., Perraton, H., Jenkins, J., and Dodd, T. (1980). Distance Teaching for the Third World. ROUTLEDGE & KEGAN PAUL, London, Boston & Henley.
12. Rai, A.N. (2000). Distance Education Open learning Vs. Virtual University Concepts. Authorspress New Delhi.
13. Reddy, M.V.L. (2001). Towards Better Practices in Distance Education. Kanishka Publishers Distributors, New Delhi.
14. Sahoo, P.K. (1994). Open Learning System. Uppal Publishing House New Delhi.
15. Sharma, S., and Panda. (1996). Open and Distance Education Research Analysis and Annotation. Indian Distance Education Association, Kakatiya University.

4.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. दूरस्थ शिक्षा के इतिहास पर एक निबंध लिखिए।
2. दूरस्थ शिक्षा के उत्थान में केन्द्र सरकार की भूमिका का वर्णन कीजिए।
3. दूरस्थ शिक्षा के प्रसार में जनसंचार की भूमिका की व्याख्या कीजिए।

इकाई 5- दूरस्थ शिक्षा की गुणवत्ता आश्वासन, प्राथमिकताएं तथा चुनौतियां

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 दूरस्थ शिक्षा में गुणवत्ता आश्वासन
5.3.1 शिक्षा की गुणवत्ता
5.3.2 गुणवत्ता आश्वासन की अवधारणा
5.3.3 गुणवत्ता आश्वासन में विभिन्न संस्थाओं का योगदान
5.4 दूरस्थ शिक्षा की प्राथमिकताएं
5.5 दूरस्थ शिक्षा के समक्ष चुनौतियां
5.6 सारांश
5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.8 संदर्भ ग्रंथ
5.9 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

इकाई 4 में आप दूरस्थ शिक्षा के उत्थान के बारे में पढ़ चुके हैं। दूरस्थ शिक्षा विश्व भर में भलीभांति स्थापित हो चुकी है इस संदर्भ में भी आप जान चुके हैं। इस इकाई में हम आपको दूर शिक्षा के क्षेत्र में गुणवत्ता आश्वासन, दूरस्थ शिक्षा की प्राथमिकताओं व चुनौतियों से अवगत करवाएगें।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

1. दूर शिक्षा में गुणवत्ता आश्वासन का वर्णन कर सकेंगे।
2. दूर शिक्षा की प्राथमिकताओं को स्पष्ट कर सकेंगे।
3. दूरस्थ शिक्षा के समक्ष चुनौतियों के बारे में बता सकेंगे।

5.3 दूरस्थ शिक्षा में गुणवत्ता आश्वासन

वर्तमान समाज व राष्ट्र परिवर्तन और विकास के दौर से गुजर रहा है। ऐसी परिस्थिति में दूरस्थ शिक्षा का उत्तर दायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है। राष्ट्रीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर विभिन्न क्षेत्रों के लिये सृजनशील नेतृत्व को विकसित करना तथा समानता, स्वायत्तता, व न्याय पर आधारित नवीन सामाजिक व्यवस्था को स्थापित करने का लक्ष्य प्राप्त करने में सहायता प्रदान करना भी दूरस्थ शिक्षा का उत्तरदायित्व है। भारत एक कल्याणकारी राज्य है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 45 में उल्लेखित है कि 6-14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को निशुल्क शिक्षा दी जाए। इसलिए अपने उतरदायित्व को निभाने के लिए हमारी सरकार ने प्रारंभिक शिक्षा का सार्विकीकरण किया यानि सभी के लिए शिक्षा के कार्यक्रम प्रारम्भ किए। इसी प्रकार उच्च शिक्षा की मांग भी निरन्तर बढ़ती जा रही है, परन्तु कुछ बच्चे अपरिहार्य कारणों से बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं इनमें से कुछ आगे की शिक्षा प्राप्त तो करना चाहते हैं पर किन्हीं कारणों से नहीं कर पाते। दूर शिक्षा द्वारा इनकी शिक्षा व्यवस्था संभव हुई है। औपचारिक शिक्षा द्वारा हम शिक्षा को सर्वसुलभ नहीं बना पा रहे थे, उसी की पूर्ति के लिए दूर शिक्षा का विधान किया गया है। भारत में दूरस्थ शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। दूरस्थ शिक्षा आज एक लम्बा रास्ता तय कर चुकी है। आज यह शैक्षिक प्रणाली का अभिन्न अंग ही नहीं बल्कि एक स्वतन्त्र और महत्वपूर्ण अनुशासन है। दूरस्थ शिक्षा अपनी अंतर्निहित गुणवत्ता के कारण तथा पारम्परिक शिक्षा से भिन्न होने के कारण वर्तमान परिदृश्य में अधिक उपयोगी और कारगर सिद्ध हो रही है। दूरस्थ शिक्षा कोई चुनाव या विकल्प का मुद्दा नहीं है, बल्कि यह समय की अनिवार्य मांग है। दूरस्थ शिक्षा वह शिक्षा व्यवस्था है जिसमें विद्यार्थी शिक्षा से भौगोलिक दृष्टि से दूर रह कर मुद्रित सामाग्रियों तथा संचार माध्यमों के प्रभावशाली सम्प्रेषण द्वारा शिक्षा प्राप्त करते हैं। दूरस्थ शिक्षा विभिन्न शैक्षिक पृष्ठभूमि वाले तथा विविध भौगोलिक क्षेत्रों में बिखरे शिक्षार्थियों या अधिगमकर्ताओं की एक बड़ी संख्या को उनकी रूचि और सुविधा के अनुकूल शिक्षा प्रदान करने का तरीका है, जिसमें उच्चकोटि की अधिगम सामग्री सम्प्रेषण तकनीकी तथा संचार माध्यमों का समुचित और व्यापक प्रयोग होता है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षण अधिगम भाषण या व्याख्यान द्वारा नहीं होता बल्कि शिक्षक संवाद या सम्प्रेषण की अति औपचारिक भाषा में तैयार की गई मुद्रित सामग्री दृश्य श्रव्य या श्रव्य दृश्य सामग्री द्वारा शिक्षार्थी को स्वतः स्फूर्त अधिगम में सहायता पहुंचाता है। भारत में दूर शिक्षा प्रणाली का उदय विश्वविद्यालय स्तर पर हुआ और बाद में यह स्कूली स्तर की ओर बढ़ी। अधिक मात्रा में खुले तथा मुक्त विश्वविद्यालय 'शिक्षा तक सबकी पहुंच' उद्देश्य की पूर्ति के लिए खोले जा रहे हैं जिनकी गुणवत्ता बनाए रखना कठिन कार्य है।

5.3.1 शिक्षा की गुणवत्ता

शिक्षा की गुणवत्ता एक सापेक्ष अवधारणा है और इसकी परिभाषा गुणवत्ता की अवधारणा के संदर्भ में ही दी जा सकती है। गुणवत्ता शब्द आजकल व्यापक रूप से चर्चित है और इस पर काफी वाद-विवाद हुआ है। कई लेखकों ने इस अवधारणा की अनियत प्रकृति का उल्लेख करते हुए पिर्सिंग (1974) को उद्धृत किया है। गुणवत्ता क्या होती है। यह कथन स्व-विरोधात्मक लगता है। परन्तु कुछ चीजें अन्य चीजों से अच्छी होती है। इसका अर्थ यह है कि उनकी गुणवत्ता अधिक है। परन्तु जब आप यह पूछने का प्रयास करते हैं कि निरपेक्ष रूप

में गुणवत्ता क्या है। संदर्भ के बिना इसके संबंध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। परन्तु यदि आप यह नहीं बता सकते कि गुणवत्ता क्या है तो आप कैसे जानेंगे कि गुणवत्ता क्या होती है? अर्थात वास्तव में इसका कोई अस्तित्व है भी या नहीं? यदि कोई नहीं जानता कि यह क्या है तो व्यवहारिक दृष्टि से यह है ही नहीं। परन्तु वास्तविकता यह है कि व्यवहारिक तौर पर इसका अस्तित्व है आप कितना ही मानसिक विश्लेषण करते रहें, यह पता नहीं चलता है कि गुणवत्ता क्या है। अतः गुणवत्ता विभिन्न लोगों के लिए विभिन्न अर्थ रखती है। गुणवत्ता भी सुन्दरता की भांति है, जो देखने वाले की आंख में निहित होती है। बहरहाल, उच्च शिक्षा में गुणवत्ता का अर्थ पांच विभिन्न ढंगों से देखा जा सकता है:-

- अतिविशिष्ट उच्च मानक के रूप में
- निरन्तर शून्य दोष युक्त
- उद्देश्यों के अनुरूप - अर्थात उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक
- लगाए गए धन की मूल्य-प्राप्ति और
- रूपान्तरकारी, जिसका अर्थ है प्रतिभागियों का रूपांतरण

शैक्षिक अर्थ में इसकी व्याख्या और निदर्शन निम्न प्रकार से किए जा सकते हैं।

ज्ञान और कौशलों में मानक प्राप्त करने का अर्थ यह होगा कि छात्र ने दोनों बातों में कुछ हद तक किसी न किसी विषय में निपुणता प्राप्त कर ली है। निपुणता सोचने, बोलने लिखने और कार्य करने द्वारा निर्देशित हो सकती है। उदाहरणार्थ, एक व्यक्ति जिसने एम.ए. अर्थशास्त्र में किया है उससे आशा की जाती है कि वह अपनी निपुणता बोलकर या लिखकर या सीखे हुए ज्ञान का प्रयोग कर निर्देशित करे। यदि वह इनमें से कुछ भी नहीं कर सके तो उसकी डिग्री का कोई अर्थ नहीं है और जिस संस्था ने उसे डिग्री दी है उसका भी कोई स्तर नहीं है। दूसरे शब्दों में पिर्सिंग के उपर्युक्त उत्तेजनात्मक कथन का जिसमें वह गुणवत्ता को परिभाषित करने में आने वाली कठिनाइयों का जिक्र करता है, यह अर्थ नहीं लेना चाहिए कि गुणवत्ता और मानक का अस्तित्व होता ही नहीं। गुणवत्ता की अन्य विशेषताएं सार्थक ढंग से सामाजिक-शैक्षिक संदर्भ में परिभाषित की जा सकती हैं।

भारत में शिक्षा को हम चाहे जिस ढंग से देखे परखें, यह निश्चित है कि हम स्पष्ट रूप से यह नहीं कह सकते हैं कि भारत में सभी जगह शिक्षा का स्तर बराबर है। इसमें संस्था से संस्था और शहरी क्षेत्र से ग्रामीण क्षेत्र की तुलना करें तो अंतर दिखाई पड़ता है। देश में कुछ विशेष स्कूल है जो बहुत अच्छे है और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुत अच्छे भी कहे जा सकते है। परन्तु बहुत ही कम लोग ऐसे हैं जो इन स्कूलों और कॉलेजों में शिक्षा प्राप्त करने में समर्थ है। सभी सरकारी स्कूल और कॉलेज भी समान स्तर के नहीं कहे जा सकते। सबकी गुणवत्ता में अन्तर मिलता है और यह भी देखा गया है कि उच्च गुणवत्ता वाली संस्थाएं शहरी क्षेत्र के कुछ विशेष भागों में ही स्थित है। इसके अतिरिक्त, इन संस्थाओं में सम्पन्न वर्ग के लोग ही प्रवेश पा सकते है। इसके विपरीत, दूर शिक्षा के द्वारा सभी के लिए समान गुणवत्ता वाली शिक्षा उपलब्ध करवाई जा सकती है, क्योंकि इसके द्वारा

एक ही प्रकार की अनुदेशन सामग्री भिन्न-भिन्न संचार माध्यमों से सभी अध्येताओं को उपलब्ध कराई जाती है।

5.3.2 गुणवत्ता आश्वासन की अवधारणा

गुणवत्ता हमेशा दूरस्थ शिक्षा में एक अहम मुद्दा रहा है। गुणवत्ता शब्द उद्योग से लिया गया है, इसका अर्थ उत्पादन से होता है गुणवत्ता उद्योग में लाई जाती है, उसका आकलन उपभोक्ता द्वारा किया जाता है। गुणवत्ता को इस प्रकार समझा जा सकता है-"किसी वस्तु को कोई कितना महत्व देता है यह उस वस्तु की गुणवत्ता मानी जाती है। दूर शिक्षा की स्थापना और प्रसार के बाद से, दूरस्थ शिक्षा के कारण 'शिक्षा तक पहुंच' उद्देश्य सार्थक हुआ है और इस सच्चाई से कई देशों में दूर शिक्षा को उनकी शैक्षिक प्रणाली में शामिल किया है। जैसे समाज औद्योगिक युग से सूचना युग के रूप में उभरा है उसी तरह दूर शिक्षा भी विकसित हो रही है। नतीजतन दूर शिक्षा के प्रावधानों की गुणवत्ता का विषय महत्वपूर्ण है। उदाहरण के लिए, छात्रों के बीच और छात्र और शिक्षक के बीच इंटरैक्टिव संचार पर बल दिया जा रहा है इसलिए 'शिक्षा तक सबकी पहुँच' प्रतिमान को पूरा करने के लिए 'गुणवत्ता आश्वासन' दूर शिक्षा की योजना के बुनियादी पहलुओं में से एक बन गया है। 1990 के दशक के बाद दूर शिक्षा में गुणवत्ता आश्वासन ने संस्थानों, हितधारकों और विद्वानों का ध्यान प्राप्त किया है। हितधारक जो कि दूर शिक्षा में रूचि रखते है उनकी गुणवत्ता आश्वासन की ओर भी रूचि बढ़ी है। शिक्षार्थी बेहतर शैक्षिक गुणवत्ता सेवाओं और प्रावधान की मांग कर रहे हैं। इसका मतलब यह है कि दूर शिक्षा के उत्पादों, प्रक्रियाओं, उत्पादन वितरण प्रणाली और दर्शन की गुणवत्ता पर ध्यान देना होगा।

गुणवत्ता आश्वासन गुणवत्ता प्रणाली में लागू की जाने वाली व्यवस्थित गतिविधियों को संदर्भित करता है ताकि एक उत्पाद या सेवा के लिए गुणवत्ता की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। औद्योगिक और व्यवसायिक क्षेत्रों में गुणवत्ता मूलमंत्र है। शिक्षा के क्षेत्र में बहुत विकास हुआ है तथा कई दूरस्थ व मुक्त विश्वविद्यालय स्थापित हुए हैं अतः इस विकास के प्रकाश में गुणवत्ता आश्वासन बहुत ही कठिन हो गया है। गुणवत्ता आश्वासन शिक्षक और शिक्षार्थियों की गुणवत्ता पर प्रकाश डालने में निर्णायक भूमिका निभाता है। पिछले चार दशकों के दौरान भारत में अगर शैक्षिक दृश्यों की तरफ नजर डाली जाए तो कुछ विचारधाराएं या प्रचलन हैं जो कि शैक्षिक दृश्यों की प्रासंगिकता पर प्रश्न उठाते हैं जैसे शिक्षा में असमानता, बढ़ती जनसंख्या, पारंपरिक अवरोध और अपर्याप्त स्त्रोत इस तथ्य को प्रदर्शित करते हैं कि भारतीय जनसंख्या की शैक्षिक जरूरतें केवल पारपंरिक पद्धति से पूरी नहीं की जा सकती। इसीलिए दूरस्थ शिक्षा जैसे सही विकल्प का उदय हुआ जो कि तेजी से बदलते हुए शिक्षा के लोकतन्त्रीकरण दृश्यों के लिए उपयुक्त है। दूरस्थ शिक्षा के पांरपरिक शिक्षा प्रणाली की अपेक्षा विविध प्रकार के लक्ष्य है। दूरस्थ शिक्षा के लक्ष्यों में निजी विकास, अच्छी नौकरी के अवसरों के लिए प्रशिक्षण, ज्ञान और शिक्षा तक सबकी पहुंच समाहित है। इसलिए दूरस्थ शिक्षा जैसे शैक्षिक सुविधा तभी उपयुक्त हो सकती है जब इस व्यवस्था में बने हुए संगठन तथा प्रबन्धन की अच्छी संरचना हो जो कि गुणवत्ता आश्वासन के महत्वपूर्ण उपकरण है।

गुणवत्ता आश्वासन सभी तक शिक्षा पहुंचाने के लिए समाकलित (Integrated approach) पहुंच पर आधारित है। गुणवत्ता आश्वासन किसी संस्था द्वारा शिक्षण अधिगम में गुणवत्ता की जिम्मेवारियों का निर्वहन

करना, गुणवत्ता नियन्त्रण के लिए प्रभावशाली स्वरूप तथा रचनातन्त्र और जहां जरूरत हो वहां गुणवत्ता में विस्तार करने की पूर्ण प्रक्रिया एवं प्रबन्ध है। गुणवत्ता नियन्त्रण किसी संस्था के द्वारा शिक्षण- अधिगम के गतिविधियों, शोध और सामुदायिक सेवाओं के सभी स्तरों के प्रबन्ध के लिए एक क्रियाशील कार्य है। गुणवत्ता नियन्त्रण किसी संस्था या संस्था के किसी भाग की जिम्मेदारियों के समापन या समापन की ओर अग्रसर और वो कार्य जो किसी योजना के तहत दर्शाए उद्देश्यों और लक्ष्यों को प्राप्त करने के स्त्रोत (sources) को जांचता एवं मापता है। गुणवत्ता परीक्षण या गुणवत्ता समीक्षा एक स्वतन्त्र और सुव्यवस्थित परीक्षण है, जो कि गुणवत्ता गतिविधियों और संबधित परिणामों और योजनाबद्ध प्रबंधों का परिक्षण है तथा यह प्रबन्ध क्या उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उचित और प्रभावशाली तरीकों से लागू किए जा रहे हैं। इन सबके लिए गुणवत्ता परीक्षण एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अध्ययन निर्देशन, अध्ययन सामग्री का रूप (Design) तथा अध्ययन प्रणालीयों जैसे: मुद्रित प्रणाली, रेडियो, सिनेमा, टेलीविज़न तथा आडियो-वीडियो रिकॉर्ड कार्यक्रम, सलाह एवं मूल्याकंन, कर्मचारीगण का प्रशिक्षण और विकास कुछ एक महत्वपूर्ण घटक हैं जिनकी गुणवत्ता पर बल देना चाहिए, ताकि दूरस्थ शिक्षा, कार्यक्रमों की वंछित स्तर (desired level) की गुणवत्ता को नियंन्त्रित किया जा सके।

शिक्षा प्रौद्योगिकी तथा शिक्षा की पहुंच ने अधिक से अधिक छात्रों को सीखने की प्रक्रिया में भाग लेने में सक्षम बनाया है। E-learning, mobile technology, संचार और जानकारी का उपयोग तथा व्यक्तिगत सीखने का वातावरण मुख्य धारा होते जा रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप शिक्षण प्रक्रिया शिक्षक केन्द्रित से शिक्षार्थी केन्द्रित होती जा रही है। मुक्त शिक्षा नई सीमाओं की खोज करने में तथा दूर शिक्षा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस विद्या के प्रमुख उपयोगकर्ता विशेष रूप से सामान्य और एशियाई क्षेत्र में है। पिछले दो दशकों के दौरान भारत में तथा पूरे विश्व भर में इस प्रणाली का विकास हुआ है। ICT में क्रान्ति तथा सभी के लिए शिक्षा की सामाजिक मांग के परिणामस्वरूप ज्ञान समाज के लिए मुक्त शिक्षा के दरवाजे खुल रहे हैं। गुणवत्ता सुधार कार्यक्रम के उद्देश्यः-

1. कुल संस्थागत निष्पादन का निरंतर सुधार सुनिश्चित करने हेतू।
2. संस्थागत जबावदेही के हितधारकों को सुनिश्चित करने हेतू।
3. प्रभावी और प्रगतिशील प्रदर्शन के लिए प्रक्रिया विकसित करना।
4. शिक्षण और सीखने के आधुनिक तरीकों का एकीकरण और अनुकूलन।
5. मूल्यांकन प्रक्रिया की विश्वसनीयता
6. सहयोग से साझा अनुसंधान।

5.2.3 गुणवत्ता आश्वासन में विभिन्न संस्थाओं का योगदान

आज के युग में पूरे विश्व भर में दूरस्थ शिक्षा बहुत ही प्रसिद्ध है। अधिक मात्रा में खुले तथा मुक्त विश्वविद्यालय खोले जा रहे हैं जिसकी गुणवत्ता बनाए रखना कठिन कार्य है। दूरस्थ शिक्षण संस्थाओं में गुणवत्ता बनाए रखने के लिए राष्ट्रीय मूल्याकंन एवं प्रत्यायन परिषद् (NAAC), विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC),, दूरस्थ

शिक्षा परिषद (DEC), अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (AICTE) तथा राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (NCTE) जैसे संस्थान बेहतर योगदान दे रहे हैं। गुणवत्ता आश्वासन शिक्षा के क्षेत्र में नया शब्द है परन्तु यह तेजी से महत्वपूर्ण होता जा रहा है। गुणवत्ता आश्वासन क्या है? हमें इसकी आवश्यकता क्यों है? क्या यह वास्तव में गुणवत्ता में सुधार करता है? यह सारे प्रश्न इस अवधारणा से जुड़े हुए हैं। गुणवत्ता आश्वासन दूरस्थ शिक्षा में शुरू से ही चिन्ता का विषय रहा है क्योंकि दूरस्थ शिक्षण अधिगम में छात्र और शिक्षक में गुणवत्ता का कार्य इग्नू अधिनियम के अन्तर्गत आता है। अतः 1991 में दूरस्थ शिक्षा परिषद् ; की स्थापना की गई थी। इसके अतिरिक्त 1994 में उच्च शिक्षा में गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय मूल्याकंन एवं प्रत्यायन परिषद् की स्थापना की गई थी। दूरस्थ शिक्षण संस्थाओं में गुणवत्ता बनाए रखने के लिए राष्ट्रीय मूल्याकंन एवं प्रत्यायन परिषद् (NAAC), विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC), दूरस्थ शिक्षा परिषद (DEC), अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (AICTE) तथा राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (NCTE) जैसे संस्थान निम्न योगदान दे रहे है।

दूरस्थ शिक्षा परिषद् (Distance Education Council): दूरस्थ शिक्षा परिषद् का निर्माण 1991 में हुआ था। दूरस्थ शिक्षा परिषद् तथा मुक्त विश्वविद्यालय, दूरस्थ शिक्षा को दृढ़ संकल्प बनाने के लिए जिम्मेवार है। यह खुली शिक्षा प्रणाली के विकास में मदद करता है तथा शिक्षा की उच्च गुणवत्ता सुनिश्चित करता है। यह शिक्षा परिषद्, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय का एक भाग है। दूरस्थ शिक्षा परिषद का कार्य मुक्त और दूरस्थ अध्ययन प्रणालियों को बढ़ावा देना है, दूरस्थ शिक्षा परिषद् देश में मुक्त और दूरस्थ शिक्षा संस्थाओं को तकनीकी और वित्तीय सहायता देता है। तकनीकी सहायता में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार हेतू कम्प्यूटरीकरण, व्यवसायिक विकास और प्रशिक्षण द्वारा सहायता सेवाएं तथा संस्थागत सुधार आदि शामिल हैं। दूरस्थ शिक्षा प्रणाली को दृढ़ बनाने के लिए तथा मूल्यांकन तंत्र विकसित करने के लिए दूरस्थ शिक्षा विशेषज्ञों के द्वारा 1991 में दूरस्थ शिक्षा परिषद् का गठन किया। दूरस्थ शिक्षा परिषद् ने शिक्षाविदों और दूरस्थ शिक्षा विशेषज्ञों की मदद से एक उच्च शक्ति समिति का गठन किया ताकि मूल्यांकन तंत्र विकसित हो सके। जैसे कि साझा प्रभावी संसाधन, छात्रों के बिखरे हुए स्थान, बहुआयामी शिक्षार्थियों के लिए समूह तथा अनुदेशात्मक मीडिया पैकेज आदि।

राष्ट्रीय मूल्याकंन एवं प्रत्यायन परिषद् (National Assessment and Accreditation Council): दूरस्थ शिक्षा की उच्च गुणवत्ता को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय मूल्याकंन एवं प्रत्यायन परिषद् महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मुक्त और दूरस्थ शिक्षा के आत्म-मूल्यांकन के लिए मूल्यांकन व प्रत्यायन परिषद का मापदंड सर्वोतम प्रथाओं को बढ़ावा देने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय दिशा- निर्देशों पर ध्यान केंद्रित करता है। NAAC कॉलेज और विश्वविद्यालयों में व्यापक शैक्षिक प्रक्रिया की गुणवत्ता और प्रासंगिकता को मापने का एक मानकीकृत मॉडल है। मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद तीन चरण की प्रक्रिया हैः-

1. मूल्यांकन की ईकाई द्वारा एक स्वअध्ययन रिपोर्ट की तैयारी करना।

2. स्व अध्ययन की रिपोर्ट के सत्यापन के लिए तथा मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद् के मूल्यांकन परिणाम की सिफारिश के लिए सहकर्मी टीम की साइट पर यात्रा करना।
3. मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद् की कार्यकारी समिति द्वारा अन्तिम निर्णय।

अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (All India Council for Technical Education): तकनीकी शिक्षा किसी भी राष्ट्र के समग्र विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् , तकनीकी शिक्षा में गुणवत्ता को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। तकनीकी शिक्षा विभिन्न स्तरों पर दी जाती है- प्रमाण पत्र डिप्लोमा, डिग्री, स्नातकोत्तर आदि। देश में इंजिनियरिंग शिक्षा की गुणवत्ता उच्चतम स्तर पर बनाई रखी जानी चाहिए। अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् लगातार इस उद्देश्य को प्राप्त करने की कोशिश करता है। राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड समय-समय पर दिशा निर्देशों के आधार पर मानदंडों तथा मानकों के आधार पर तकनीकी संस्थाओं तथा कार्यक्रमों का मूल्यांकन करता है तथा गुणवत्ता बनाए रखता है।

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (National Council for Teacher Education): राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् अगस्त 1995 में स्थापित किया गया था। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् का मुख्य कार्य अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों का मूल्यांकन करना है तथा यह मानकों के आधार पर शिक्षा संस्थानों को मान्यता देता है। शिक्षक के मानदंडो और मानकों का समुचित रख-रखाव किया जा सके तथा देश भर में शिक्षक शिक्षा प्रणाली का विकास किया जा सके। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् के मुख्य कार्य हैं जैसे- विभिन्न शिक्षक शिक्षा पाठ्यक्रम के लिए मानदंड निर्धारित करना, शिक्षा संस्थानों की मान्यता, शिक्षकों की नियुक्ति, शिक्षकों की न्यूनतम योग्यता आधारित करना, शोध, नवाचार तथा शिक्षक शिक्षा के व्यवसायीकरण पर रोकथाम।

अभ्यास प्रश्न

1. गुणवत्ता आश्वासन से आप क्या समझते है?

5.3 दूरस्थ शिक्षा की प्राथमिकताएं

दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों की आवश्यकताओं, समस्याओं तथा कठिनाइयों को ध्यान में रखना होता है। दूरस्थ शिक्षक को अपने स्वयं के कार्यों द्वारा एक प्रभावी शिक्षक बनना होता है। दूरस्थ शिक्षा में क्रियात्मक अनुभव बहुत कम होता है। दूरस्थ शिक्षा पद्धति में विद्यार्थियों को सांस्कृतिक परिवर्तन एवं सामाजिक विकास के प्रति सचेत करने की सम्भावनाएं बहुत सीमित होती हैं। दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। दूरस्थ -शिक्षण के निर्धारण के लिए कुछ मानदण्डों को ध्यान में रखना चाहिये। अध्ययन केन्द्रों पर अनुमानित छात्रों की संख्या कितनी होगी। उस केन्द्र पर पहुंचने के लिए छात्रों को कितनी

दूरी तय करनी होगी तथा पहुंचने के साधन उपलब्ध होगें अथवा नहीं होंगे। यात्रा व्यय छात्रों को कितना करना होगा, उनकी पहुंच के अन्तर्गत होना आवश्यक होता है, तभी अध्ययन केन्द्रों का लाभ दूरस्थ छात्रों को मिल सकेगा। दूरस्थ -छात्र कब- कब अध्ययन के लिए आना चाहेंगे। इन सभी प्रश्नों के उतरों के बाद ही निर्णय करना होगा कि अमुक विद्यालय को अध्ययन केन्द्र बनाना सम्भव है या नहीं।

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली का शुभारम्भ भारतवर्ष में दिल्ली विश्वविद्यालय में पत्राचार पाठ्यक्रम के रूप में हुआ। दूरस्थ शिक्षा के लिए भारत में बहुत विशाल क्षेत्र है। भारतीय संविधान में सभी को समान शिक्षा के अवसर प्रदान करने का विधान है।औपचारिक शिक्षा इस दिशा में योगदान नहीं कर सकी है। दूरस्थ शिक्षा के उपलब्ध साधनों का उपयोग नहीं किया जा सका है। क्योंकि इस प्रणाली की भी अपनी समस्याएं, विशेषताएं तथा सीमायें है।

- दूरस्थ शिक्षा द्वारा सभी को शिक्षा प्राप्त करने हेतु समान अवसर सुलभ कराना।
- 'व्यावसायिक शिक्षा', 'क्रियात्मक साक्षरता', और 'सतत् शिक्षा' को उच्च प्राथमिकता देना।
- दूरदर्शन, भारतीय आकाश शोध संस्थान, तथा कॉमनवेल्थ ऑफ लर्निंग के समन्वय से बहुमाध्यमों पर आधारित अधिगम का विस्तार करना तथा दूर शिक्षा को और अधिक मजबूत करना।
- दूर शिक्षा कार्यक्रमों के आधार पर परम्परागत विश्वविद्यालय के विस्तार के साथ-साथ राज्य स्तर पर मुक्त विश्वविद्यालयों का धीरे-धीरे विस्तार करना।
- जो छात्र किसी कारणों से शिक्षा से वंचित रह गये उन्हें शिक्षा के अवसर प्रदान करना।
- राज्य स्तर पर मुक्त विश्वविद्यालयों का विस्तार करना।
- छात्रों की रूचि के अनुसार पाठ्यक्रम का निर्माण करना।
- दूर शिक्षा को गुणात्मक रूप से शक्तिशाली बनाना।
- राष्ट्रीय स्तर पर दूर शिक्षा के साधनों में साझेदारी करना।
- दूर शिक्षा पद्धति द्वारा अनेक नवाचारपूर्ण और आवश्यकता आधारित पाठ्यक्रम आरम्भ करना।
- 'स्व-अध्ययन'सामग्रीं, विद्यार्थी सहायता सेवा, दूर शिक्षा पर आधारित तकनीक और सततमूल्यांकन प्रणाली आदि को शक्तिशाली बनाना।
- दूरस्थ प्रणाली के छात्रों के लिए पुस्तकालयों और अध्ययन केन्द्रों को शक्तिशाली बनाना।
- मुक्त विद्यालयों को अपना कार्यक्षेत्र प्राथमिक स्तर से उच्चतर माध्यमिक स्तर तक बढ़ाना।
- छात्रों में आपस में तथा शिक्षक से निकट के सम्बन्ध विकसित करना।
- अधिगम सामग्री का मुद्रण अच्छे स्तर का करना।
- विद्यार्थियों की भावनाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति करना।
- दूरस्थ शिक्षा में अध्ययन सामग्री के भण्डारण को शक्तिशाली बनाना।

- ज्ञान एंव कौशल का विकास करना।
- पाठ्यवस्तु के लिये अनुदेशनात्मक प्रक्रिया का अनुसरण करना।
- विभिन्न पाठ्यक्रम के लिए मानदंड निर्धारित करना।
- मानदंडों तथा मानकों के आधार पर दूरस्थ शिक्षा संस्थाओं तथा कार्यक्रमों का मूल्यांकन करना।
- मूल्यांकन प्रक्रिया की विश्वसनीयता को शक्तिशाली बनाना।
- संस्थागत जबावदेही को सुनिश्चित करना।
- छात्रों की आवश्यकताओं के अनुसार पाठ्यक्रम का निर्माण करना।
- शिक्षण और सीखने के आधुनिक तरीकों का एकीकरण और अनुकूलन को शक्तिशाली बनाना।
- तकनीकी माध्यमों, श्रव्य दृश्य साधनों तथा कम्प्यूटर आदि के प्रयोग को सुनिश्चित करना।
- दूरस्थ शिक्षा की प्रक्रिया को सरल बनाना।

राष्ट्रीय तथा राज्य स्तर पर जो मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई है, उनसे दूरस्थ -शिक्षा की चुनौतियों तथा सीमाओं का समाधान हुआ है। भारत ने ही नहीं अपितु अन्य विकासशील देशों ने भी दूरस्थ - शिक्षा प्रणाली को अपनाया है। दूरस्थ शिक्षा में अधिक सुधार तथा विकास की आवश्यकता है तभी इसका गुणात्मक स्तर उठ सकेगा।

अभ्यास प्रश्न

2. दूरस्थ शिक्षा की कोई दो प्राथमिकताएं लिखिए।

5.4 दूरस्थ शिक्षा के समक्ष चुनौतियाँ

शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया त्रिधुर्वीय प्रक्रिया है इस में अध्यापक, विद्यार्थी और विषय-सामग्री तीनों का सम्बन्ध रहता है। यही शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया के तीन ध्रुव या तत्व हैं। शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में अध्यापक का व्यक्तित्व एंव व्यवहार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कारक है। विद्यार्थी भी कक्षा में कई प्रकार की समस्यायें पैदा करते हैं। विषय-वस्तु एंव अधिगम-क्रियाओं के कारण भी कई समस्यायें उत्पन्न होती है। दूरस्थ शिक्षा अंश-औपचारिक शिक्षा की आधुनिक पद्धति है। दूरस्थ शिक्षा अधिगम विधि की कुछ ऐसी विशेषताओं को प्रकट करती है जो उसे शिक्षा-संस्थाओं की अधिगम विधि से अलग करती है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षार्थी अपनी गति से प्रगति कर सकता है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षार्थी अपने घर में एकान्त अध्ययन कर सकते है। वे किसी भी समय सुविधा अनुसार अध्ययन कर सकते हैं। दूरस्थ शिक्षा को परम्परागत शिक्षा

प्रणाली का एक विकल्प मानते हैं। प्रत्येक शिक्षा प्रणाली की सहायक व्यवस्था को महत्वपूर्ण पक्ष माना जाता है। दूरस्थ शिक्षा में पारम्परिक शिक्षा से भिन्न सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया और शिक्षार्थी के मध्य दूरी बनी रहती है। दूरस्थ शिक्षा शिक्षार्थी केन्द्रित होती है। यह शिक्षार्थी की आवश्यकताओं एवं सुविधा पर केन्द्रित होती है। शिक्षार्थी अपनी गति एवं सुविधा के अनुसार सीखता है और उसे कोर्सो के चयन की स्वतन्त्रता होती है। शिक्षक और शिक्षार्थियों को आपस में जोड़ने के लिए तथा पाठयक्रम को सुचारू रूप से चलाने के लिए मुद्रित सामग्रियों तकनीकी माध्यमों, श्रव्य दृश्य साधनों तथा कम्पयूटर आदि का प्रयोग होता है। दूरस्थ शिक्षा जन शिक्षा की पद्धति है। यह शिक्षा को उन लाखों लागों के पास ले जाती है जो किसी संस्था में नियमित रूप से शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके। दूरस्थ शिक्षा पारम्परिक शिक्षा से भिन्न है। दूरस्थ शिक्षा का प्रसार तीव्रता से हो रहा है परन्तु अभी भी इसके समक्ष कुछ चुनौतियाँ हैं:-

(a) दूरस्थ शिक्षा की सामान्य चुनौतियाँ:

- छात्र हित के लिए अनुकूलन की कमी
- छात्र प्रेरणा की कमी
- गुणवत्ता आकलन तथा प्रतिपुष्टि की कमी जो सीखने में बाधा पैदा करती है।
- शिक्षक व विद्यार्थी में आमने- सामने सम्पर्क न होने के कारण विद्यार्थी आत्म मूल्याकंन नहीं कर सकता।
- दूरस्थ शिक्षा की मुख्य चुनौती यह है कि इसमें एक अध्यापक की अनुपस्थिति पाई जाती है। शिक्षा एक त्रिमुखी प्रक्रिया है। इसके तीन मुख्य ध्रुव होते है शिक्षक, छात्र व शिक्षण वातावरण। परन्तु दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक की भूमिका नगण्य होती है।
- बढ़ती जनसंख्या तथा सीमित सीटों के कारण दूरस्थ शिक्षण संस्थानों पर दबाव बढ़ता जा रहा है। छात्रों की एक बढ़ी संख्या से निपटना समस्या बन गया है।
- छात्रों की रूचि के अनुसार पाठ्यक्रम का निर्माण करना अत्यन्त कठिन है क्योंकि एक समूह में व्यैक्तिक भिन्नताएं होती है।
- निजी व सरकारी क्षेत्र में दिन ब दिन दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों की संख्या बढ़ रही है, जिसके कारण ऐसे संस्थानों की गुणवत्ता बनाए रखना कठिन हो गया है।
- दूरस्थ शिक्षा संस्थानों में पर्याप्त स्टॉफ नहीं है। बहुत सारे संस्थान विश्वविद्यालय के उपर निर्भर है तथा शिक्षा की गुणवत्ता सम्बद्ध कर्मचारियों के ऊपर निर्भर है।
- जनसंचार माध्यम की जगह मुद्रित माध्यम का प्रयोग किया जाता है। जबकि गुणवत्ता बढ़ाने के लिए विविध प्रकार की शिक्षण सामग्री अधिक फायदेमंद होती है।

- दूरस्थ प्रणाली की एक कमजोरी यह भी है कि इसके द्वारा उत्पन्न निधि अन्य औपचारिक प्रणाली में बंट जाती है। अतः दूरस्थ प्रणाली के छात्रों के लिए पुस्तकालयों, अध्ययन केन्द्रों और शिक्षार्थी समर्थन का अभाव है।
- देश में दूर शिक्षा के संख्यात्मक विकास की बहुत संभावनाएं है। 21वीं शताब्दी में प्राथमिक, माध्यमिक, तृतीयक तथा चतुर्थ स्तरों पर दूर शिक्षा का विकास तेजी से होगा। मुक्त विद्यालयों को अपना कार्यक्षेत्र प्राथमिक स्तर से उच्चतर माध्यमिक स्तर तक बढ़ाना होगा।
- दूर शिक्षा के संख्यात्मक विकास के अतिरिक्त इसको गुणात्मक रूप से भी शक्तिशाली बनाना होगा।
- दोहरी पद्धति में पत्राचार शिक्षा को दूर शिक्षा में बदलना होगा और बहु-माध्यमों पर आधारित 'स्व-अध्ययन' सामग्री विद्यार्थी सहायता सेवा, दूर शिक्षा पर आधारित तकनीक और सतत् मूल्यांकन प्रणाली आदि अपनानी होगी जो कि मुक्त विश्वविद्यालय में प्रचलित है।
- राष्ट्रीय स्तर पर दूर शिक्षा के साधनों की साझेदारी में संकाय विधि का पालन करना होगा। इस पद्धति द्वारा अनेक नवाचारपूर्ण और आवश्यकता आधारित कार्यक्रम आरम्भ होंगे।

(b) दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों के समक्ष चुनौतियाँ:

- दूरस्थ शिक्षा में रजिस्ट्रेशन और प्रवेश की प्रक्रिया समय और शक्ति खर्च करने वाली है।
- दूरस्थ शिक्षा के व्यवसायिक पाठयक्रमों का खर्च अधिक है।
- दूरस्थ शिक्षा में अधिगम सामग्री इतनी विस्तृत नहीं होती कि वह पूरे पाठयक्रम को समाहित कर सके।
- विद्यार्थियों के लिए अध्ययन केन्द्र एवं पुस्तक बैंकों की व्यवस्था बहुत कम है।
- व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रमों में विद्यार्थियों को विभिन्न क्रियाओं के लिए अवसर नहीं मिलते। उन्हें केवल व्याख्यान ही सुनने होते हैं।
- दूरस्थ शिक्षा में अध्यापक की अनुपस्थिति को अनुभव किया जाता है।
- अधिगम सामग्री का मुद्रण अच्छे स्तर का नहीं होता।
- अधिगम सामग्री विद्यार्थियों तक समय से नहीं पहुंचती है।
- दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन प्रणाली बहुत उपयोगी नहीं होती है।
- दूरस्थ शिक्षा में अनेक व्यावसायिक पाठयक्रम बिना किसी भौतिक संसाधनों के चलाए जाते हैं जिससे विद्यार्थियों को उपयुक्त अनुभव नहीं मिल पाते हैं।

(c) व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम (Personal Contact Programmes) में विद्यार्थियों की चुनौतियाँ:

- दूरस्थ -शिक्षण में व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम सहायक प्रणाली का कार्य करता है। इस प्रकार के कार्यक्रमों की व्यवस्था इसलिए की जाती है जिससे विद्यार्थियों एंव अध्यापकों के मध्य अन्तः प्रक्रिया हो सके और छात्र अपनी कठिनाइयों हेतु निर्देषन तथा समाधान प्राप्त कर सकें। इन कार्यक्रमों से छात्रों को शैक्षिक लाभ होता है , शिक्षकों से सम्पर्क होता है और छात्रों की भावनाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। सम्पर्क कार्यक्रमों में छात्रों की अध्ययन सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास किया जाता है, परन्तु इस कार्यक्रम का छात्रों को तभी लाभ होता है जब छात्रों ने पाठ्यक्रम सामग्री का पहले स्वाध्याय किया हो। अध्ययन सम्बन्धी विशिष्ट कठिनाइयों का ही स्पष्टीकरण किया जाता हैं सम्पर्क कार्यक्रम की अवधि सीमित होती है। इसलिए सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु का शिक्षण करना सम्भव नहीं होता है।
- दूरस्थ -शिक्षा में अधिकांश छात्र सेवारत होते हैं इसलिए उन्हें सम्पर्क कार्यक्रम हेतु अवकाश की आवश्यकता होती है। इतने लम्बे समय का अवकाश नहीं मिलता है। परिणाम यह होता है कि अवकाश न मिलने के कारण सम्पर्क कार्यक्रम के लाभ से वंचित रह जाते हैं। सम्पर्क कार्यक्रम के लिए छात्रों को यातायात तथा आवासीय सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए, परन्तु इस प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था संस्थाओं द्वारा नहीं हो पाती है। इसलिए भी छात्र इस कार्यक्रम का लाभ नहीं उठा पाते हैं। जिन केन्द्रों पर इस प्रकार की सुविधायें उपलब्ध होती हैं वहां अधिकांश छात्र इस कार्यक्रम का लाभ उठाते हैं।

(d) सामान्यतः निम्नलिखित शिक्षण सामग्री अध्ययन केन्द्रों पर सुलभ होनी चाहिये-

1. पाठ्य पुस्तकें तथा सहायक पुस्तकें तथा सन्दर्भ पुस्तकें उपलब्ध हों,
2. विज्ञान तथा तकनीकी प्रयोगशाला विषयों के अनुसार उपलब्ध हों,
3. दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री की सुविधा हो,
4. अन्य सूचनाओं सम्बन्धी सामग्री का होना,
5. कार्यालय सम्बन्धी सामग्री का होना
6. कक्षा-शिक्षण की सामग्री आदि का उपलब्ध होना,
7. फोटो कापियर की सुविधायें आदि उपलब्ध होना।

अध्ययन केन्द्रों पर उपरोक्त में से कुछ ही सामग्री उपलब्ध होती है, परन्तु न्यूनतम शिक्षण सामग्री उपलब्ध होनी चाहिये, जो अधिकांश छात्रों के लिए उपयोगी होती है। अध्ययन केन्द्र पर विशिष्ट सामग्री में पाठ्य-पुस्तकें दृश्य -श्रव्य सामग्री, मानचित्र आदि की सुविधा भी होनी चाहिये। अध्ययन केन्द्रों में शिक्षण सामग्री का अक्सर अभाव होता है, क्योंकि भंडारण की समस्या होती है। अध्ययन सामग्री के भण्डारण के लिए स्थान तथा कमरों की सुविधा होनी चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

3. दूरस्थ शिक्षा के समक्ष कौन-कौन सी मुख्य चुनौतियां हैं?

5.5 सारांश

दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों को शिक्षक के साथ जोड़ने में पाठ्यक्रम को सुचारू रूप से चलाने के लिए श्रव्य-दृश्य साधनों का प्रयोग होता है। दूरस्थ शिक्षा में क्रियात्मक अनुभव बहुत कम होता है। दूरस्थ शिक्षा से विद्यार्थियों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कक्षीय वातावरण में शिक्षण अधिगम एवं कक्षीय वातावरण की समस्याएं सम्मिलित है। इस इकाई में आपने दूरस्थ शिक्षा में गुणवत्ता आश्वासन, दूरस्थ शिक्षा की प्राथमिकताओं व चुनौतियों के बारे में अध्ययन किया। दूरस्थ शिक्षा में गुणवत्ता बढ़ाने में जो संस्थान कार्य कर रहे हैं उनकी भी चर्चा की।

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. गुणवत्ता आश्वासन गुणवत्ता प्रणाली में लागू की जाने वाली व्यवस्थित गतिविधियों को संदर्भित करता है ताकि एक उत्पाद या सेवा के लिए गुणवत्ता की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। औद्योगिक और व्यवसायिक क्षेत्रों में गुणवत्ता मूलमंत्र है। शिक्षा के क्षेत्र में बहुत विकास हुआ है तथा कई दूरस्थ व मुक्त विश्वविद्यालय स्थापित हुए हैं अतः इस विकास के प्रकाश में गुणवत्ता आश्वासन बहुत ही कठिन हो गया है। गुणवत्ता आश्वासन शिक्षक और शिक्षार्थियों की गुणवत्ता पर प्रकाश डालने में निर्णायक भूमिका निभाता है।
2. दूरस्थ शिक्षा सभी को शिक्षा प्राप्त करने हेतु समान अवसरों को सुलभ कराने में महत्वपूर्ण योगदान करती है। 'व्यावसायिक शिक्षा', 'क्रियात्मक साक्षरता', और 'सतत् शिक्षा' को उच्च प्राथमिकता देनी होगी।
3. निजी व सरकारी क्षेत्र में दिन ब दिन दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों की संख्या बढ़ रही है, जिसके कारण ऐसे संस्थानों की गुणवत्ता बनाए रखना कठिन हो गया है। बढ़ती जनसंख्या तथा सीमित सीटों के कारण दूरस्थ शिक्षण संस्थानों पर दबाव बढ़ता जा रहा है। छात्रों की एक बढ़ी संख्या से निपटना समस्या बन गया है। शिक्षक व विद्यार्थी में आमने- सामने सम्पर्क न होने के कारण विद्यार्थी आत्म मूल्याकंन नहीं कर सकता। दूरस्थ शिक्षा की मुख्य चुनौती यह है कि इसमें एक अध्यापक की अनुपस्थिति पाई जाती है। शिक्षा एक त्रिमुखी प्रक्रिया है। इसके तीन मुख्य धुरव होते है शिक्षक, छात्र व शिक्षण वातावरण। परन्तु दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक की भूमिका नगण्य होती है।

5.7 संदर्भ ग्रंथ

1. Reddy, V. V., and Manulika. S. (2000). The World of Open and Distance Learning. Viva Books Pvt. Ltd. New Delhi.
2. Goel, I., and Goel, S.G. (2000). Distance Education in the 21st Century. Deep Publications Pvt. Ltd. New Delhi-110027.
3. Bhaskara, D. (2001). Distance Education in Different Countries. APH Publishing Coorporation New Delhi.
4. Ramauijam, P.R. (2006). Globalisation, Education and Open Distance Learning. Shipra Publications Delhi.
5. Sahani, A., and Kaur. (1996). Managing Distance Education. Deep & Deep publications New Delhi.
6. Rao, M.S. (1995). Quality Assurance in Distance Education. Published by Dr. B.R. Ambedkar Open University, Hyderabad.
7. Ramanujam, P.R. (1995). Reflections on Distance Education for India. Mahak Publications New Delhi.
8. Venkataiah, S. (2001). Distance Education Challenge and Response. Anmol Publication Pvt. Ltd. New Delhi.
9. Purushothaman & Stella. (1998). Media Technology in Distance Education. The Indian Pubications Ambala Cantt.
10. Sharma, R.A. (1995) Distance Education Theory, Practice and esearch. R.A Eagle Books International Meerut Cantt.
11. Young, M., Perraton, H., Jenkins, J., and Dodd, T. (1980). Distance Teaching for the Third World. ROUTLEDGE & KEGAN PAUL, London, Boston & Henley.
12. Rai, A.N. (2000). Distance Education Open learning Vs. Virtual University Concepts. Authorspress New Delhi.
13. Reddy, M.V.L. (2001). Towards Better Practices in Distance Education. Kanishka Publishers Distributors, New Delhi.
14. Sahoo, P.K. (1994). Open Learning System. Uppal Publishing House New Delhi.
15. Sharma, S., and Panda. (1996). Open and Distance Education Research Analysis and Annotation. Indian Distance Education Association, Kakatiya University.

5.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. गुणवत्ता आश्वासन में विभिन्न संस्थाओं के योगदान की व्याख्या कीजिए।
2. दूरस्थ शिक्षा के समक्ष प्रस्तुत चुनौतियों का वर्णन कीजिए।

ईकाई 6 - दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन
- 6.3.1 मूल्यांकन एक परिचय
- 6.3.2 मूल्यांकन की अवधारणा
- 6.3.3 मूल्यांकन के कार्य
- 6.3.4 मूल्यांकन की मौलिक अवधारणाएं
- 6.3.5 दूरस्थ शिक्षा व मूल्यांकनकर्ता
- 6.3.6 परीक्षा, मापन, मूल्यांकन
- 6.3.7 परीक्षण, अनुमान तथा निष्कर्ष आधारित अंकन
- 6.3.8 ज्ञानात्मक, भावात्मक और मनोशारीरिक कौशल का मूल्यांकन
- 6.3.9 लिखित, मौखिक और प्रयोगात्मक परीक्षाएं
- 6.3.10 कार्यक्रम मूल्यांकन, पाठ्यक्रम मूल्यांकन और विद्यार्थी मूल्यांकन

6.4 मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्व
6.5 मूल्यांकन के आधार
6.6 मूल्यांकन के चरण
6.7 मूल्यांकन की प्रविधियां
6.8 सारांश
6.9 शब्दावली
6.10 अभ्यास के प्रश्नों के उत्तर
6.11 संदर्भ ग्रंथ
6.12 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
6.13 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

दूरस्थ शिक्षा से सम्बन्धित यह छठी इकाई है, इससे पहले भी इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि दूरस्थ शिक्षा क्या है? इसकी विशेषताएँ क्या हैं? दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन की व्याख्या इस इकाई में प्रस्तुत है। दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन की क्या अवधारणा है? मूल्यांकन के क्या कार्य हैं? मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्व का विश्लेषण इस इकाई में कर सकेंगे। दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसमें किसी वस्तु के लायक योग्यता की व्यवस्थित जाँच करना, तथा सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य छात्रों को ग्रेड प्रदान करना सम्मिलित है। इस इकाई के बाद आप दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन व विभिन्न प्रविधियों का विष्लेषण कर सकेगें।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. मूल्यांकन के अभिप्राय को स्पष्ट कर सकेंगे।
2. मूल्यांकन के कार्य तथा अवधारणाओं का वर्णन कर सकेंगे।
3. दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्व का विवेचन कर सकेंगे।
4. दूरस्थ शिक्षा में कार्यक्रम मूल्यांकन, पाठ्यक्रम मूल्यांकन विद्यार्थी का मूल्यांकन कर सकेंगे।
5. दूरस्थ शिक्षा में ज्ञानात्मक, भावात्मक और मनो शारीरिक कौशल का मूल्यांकन कर सकेंगे।

6.3 दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन

मूल्यांकन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा अधिगम परिस्थितियों तथा सीखने के अनुभवों के लिए प्रयुक्त की जाने वाली सभी विधियों एवं प्रविधियों की उपयोगिता की जांच की जाती है। शिक्षा मूल्यांकन शिक्षण व अधिगम व्यवस्था का साधारणतः अन्तिम सोपान है। शैक्षणिक प्रक्रिया की प्रभावशीलता मूल्यांकन का अविच्छिन्न अंग माना जाता है। आधुनिक मनोवैज्ञानिकों का विश्वास है कि जितने समय तक विद्यार्थी अपने शिक्षक के सम्मुख रहता है, मूल्यांकन की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। छात्र की बातचीत उसका व्यवहार तथा उसके कार्य करने के ढंग आदि सभी मूल्यांकन हेतु संकेत उपस्थित करते हैं। मूल्यांकन के द्वारा शिक्षण में मार्गदर्शन का कार्य आसान हो जाता है। दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन का अर्थ है, शैक्षिक उद्देश्य की प्राप्ति की ओर विद्यार्थियों की प्राप्ति का आंकलन करना है। दूरस्थ शिक्षा के पाठ्यक्रम सम्बन्धी अनुभव को उदबोधित करने के पूर्व यह प्रश्न उपस्थित होता है कि विद्यार्थियों में किन-किन दशाओं में क्या-क्या परिवर्तन अपेक्षित हैं, अमुक क्रिया करने के बाद छात्र कौन-कौन सी नई बातें सीखेगा और अध्यापन के बाद उसमें कौन-कौन से व्यावहारिक परिवर्तन हो सकेंगे।

दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसमें किसी वस्तु के लायक योग्यता की व्यवस्थित जांच करना; तथा सबसे महत्व उद्देश्य छात्रों को ग्रेड प्रदान करना सम्मिलित है। इसमें शिक्षक व्यवस्था तथा शिक्षण को आगे बढ़ाने की क्रियायें कितनी सफल रही है। यह सफलता शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति में कितनी सफल रही है। दूरस्थ शिक्षा में यह सफलता शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति में पृष्ठ पोषण का कार्य करती है। यदि उद्देश्य की प्राप्ति नहीं की जा सकी है तब अपनी शिक्षण परिस्थितियों का मूल्यांकन करके उसमें सुधार तथा परिवर्तन करता है। जिस प्रकार डॉक्टर अपनी औषधि का मूल्यांकन रोगी में होने वाले परिवर्तन के आधार पर करता है तो वकील अपनी बहस का मूल्यांकन जज महोदय द्वारा दिए निर्णय पर करता है। कारीगर अपने हाथ से बनी हुई वस्तुओं का मूल्यांकन अपने खरीददारों अथवा मालिकों की सम्मतियों से करता है। बाग का माली अपने कोमल पौधों का मूल्यांकन उनमें सुन्दर लगने की दृष्टि से करता है। इसी प्रकार शिक्षा प्रक्रिया में शिक्षक को भी मूल्यांकन करना पड़ता है। । सही एवं स्वस्थ शिक्षा प्रणाली की कसौटी विद्यार्थियों पर उसका प्रभाव और उसके द्वारा लाए गए उनके व्यवहार में परिवर्तन का पता मूल्यांकन द्वारा ही चल सकता है। मूल्यांकन के प्रयोजनों कार्यों एवं प्रविधियों में निरन्तर विस्तार तथा सुधार होता चला आया है; शिक्षक छात्र का मूल्यांकन करने में तीन कार्य प्रमुख रूप से क्रियान्वित करता है। अधिगम प्रणाली का मूल्यांकन अधिगम का मापन करना व अधिगम उद्देश्यों के द्वारा व्यवस्था करना।

6.3.1 मूल्यांकन: एक परिचय

कलारा एम. बराऊन का विचार: कभी न समाप्त होने वाले लक्ष्य निर्माण के वृत्त के लिए मूल्यांकन अनिवार्य है, यह उनकी प्रगति को मापन करता है और नई चेतावनियों के परिणामस्वरूप नवीन लक्ष्यों को निश्चित करता है। मूल्यांकन में मापन निहत है जिसका अर्थ वस्तुपरक गुणात्मक साध्य है। परन्तु यह मापन से अधिक व्यापक है क्योंकि इसमें कुछ मूल्यों तथा स्तरों का ध्यान रखा जाता है और विशिष्ट स्थिति के प्रकाश में साख्य की व्याख्या की जाती है।

डॉ0 बेंजमिन का विचार एक त्रिकोण पर आधारित है जिसमें शिक्षा के लक्ष्यों सीखने के अनुभव तथा मूल्यांकन शिक्षा में सम्बन्ध दिखाया गया है।

i. शिक्षा का लक्ष्य
ii. मूल्यांकन प्रक्रिया
iii. अधिगम अनुभव
iv. मूल्यांकन विधि

स्कूल विद्यार्थियों के लिए अनुभवों की व्यवस्था करता है। इन अनुभवों की सफलता इनके द्वारा किए जाने वाले वांछित परिवर्तनों के आधार पर आंकी जाती है। अतः लक्ष्यों सीखने के अनुभव तथा मूल्यांकन में अर्न्तसम्बन्ध है। तीनों एक दूसरे के अभिन्न अंग है। सीखने के अनुभव इस प्रकार आयोजित किये जाने चाहिए कि वे शिक्षा के लक्ष्यों के संदर्भ में विद्यार्थियों की उपलब्धियों का मापन किया जा सके। दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन के महत्वपूर्ण निहितार्थ होते हैं जो की उपलब्धि का मूल्यांकन व सतत छात्र निष्पादन का मूल्यांकन

करती है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षार्थियों का निष्पादन विषय आवंटन (असाइनमेन्ट) की अनुक्रिया व अवधि के अंत की परीक्षा से होता है। इस परिपेक्ष्य से परीक्षण रूपदेय एवं योगदेय होता है। रूपदेय परीक्षण का उपयोग अधिगम शिक्षण को प्रभावशाली बनाने तथा छात्रों की पाठ्यवस्तु की ईकाई के रूप में स्वामित्व एवं उद्देश्य की प्राप्ति हेतू किया जाता है

6.3.2 मूल्यांकन की अवधारणा

प्रत्येक कार्य को किसी न किसी उद्देश्य से आरम्भ करते हैं और आरम्भ करके, किये हुए काम का पुनरावलोकन करते हुए जब हम यह जानने की चेष्ठा करते हैं कि हमकों कुछ सफलता मिल भी पा रही है या नहीं और मिल रही है तो कितनी तो हमें अपने कार्य के मूल्यांकन की आवश्यकता पड़ती है। हम प्रत्येक क्षेत्र में मूल्यांकन करते हैं। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मूल्यांकन की आवश्यकता पड़ती है। मूल्यांकन हर क्षेत्र में लक्ष्य की दिशा और दूरी का पता लगाने में सहायता करता है। मूल्यांकन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें शिक्षक, शिक्षार्थी तथा शिक्षा के अन्य सभी पक्षों की पारस्परिक निर्भरता तथा उसकी उपादेयता की जांच होती है। इसके अन्तर्गत विद्यार्थी की उपलब्धि के आधार पर केवल विद्यार्थी की ही जांच नहीं होती बल्कि शिक्षक, शिक्षण पद्धति, पाठ्यपुस्तक तथा अन्य शैक्षणिक साधनों की उपयोगिता की जांच भी होती है।

रेमर्स तथा गेज के शब्दों में "मूल्यांकन के अन्दर व्यक्ति या समाज का दोनों की दृष्टि से जो अच्छा है अथवा वांछनीय है, उसको मान कर चला जाता है"

टारगेर्सन तथा एडम्स के शब्दों में "मूल्यांकन का अर्थ है किसी वस्तु या प्रक्रिया का मूल्य निश्चित करना। इस प्रकार शैक्षणिक मूल्यांकन से तात्पर्य है शिक्षण प्रक्रिया तथा सीखने की क्रियाओं से उत्पन्न अनुभवों की उपयोगिता के बारे में निर्णय देना। विद्यालय में हुए छात्रों के व्यवहार परिवर्तन में प्रदतों का संकलन तथा उनकी व्याख्या की प्रक्रिया को मूल्यांकन कहते हैं"

क्विलेन तथा हन्नर के शब्दों में "विद्यालय द्वारा हुए बालक के व्यवहार परिवर्तन के विषय में साथियों के संकलन तथा उनकी व्याख्या करने की प्रक्रिया ही मूल्यांकन है। अथवा जिस तरह का व्यवहार परिवर्तन होता है। जिस मात्रा में यह सम्भव होता है, उसके आधार पर ही यह पता लगाया जाता है कि सीखने से उत्पन्न अनुभव प्रभावपूर्ण हैं या नहीं। मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा निम्नलिखित तथ्यों के बारे में निश्चय किया जाता है:

1. किस हद तक किसी उद्देश्य की प्राप्ति हुई है? शिक्षण में जो उद्देश्य निश्चित किए जाते हैं उनकी प्राप्ति किस मात्रा अथवा किस सीमा तक हुई है। इस बात का पता मूल्यांकन प्रक्रिया द्वारा चलता है।
2. शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति कितने उत्तम ढंग से सम्पन्न हुई है। यह जानकारी भी मूल्यांकन प्रक्रिया का महत्वपूर्ण हिस्सा होता है।
3. कक्षा के अन्दर जो सीखने के अनुभव उत्पन्न किए गए, वह प्रभावोत्पादक रहे या नहीं। इस तथ्य की जांच मूल्यांकन के द्वारा की जाती है। मूल्यांकन प्रक्रिया का सम्बन्ध शिक्षण के मापन और अधिगम के उद्देश्यों की प्राप्ति से होता है। मूल्यांकन प्रक्रिया अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति होता है। मूल्यांकन

प्रक्रिया अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति के आधार पर अपने शिक्षण, शिक्षण प्रविधियों तथा सहायक सामग्री की उपयोगिता का मूल्यांकन करती है, क्योंकि छात्रों की सफलता और असफलता के लिए अधिगम परिस्थितियां ही वास्तव में उत्तरदायी होती हैं। परन्तु अभी इस प्रक्रिया का उपयोग शिक्षा में पूरी तरह नहीं हो पा रहा है, क्योंकि मूल्यांकन के लिए शिक्षा एवं प्रशिक्षण के उद्देश्य स्पष्ट नहीं है तथा शैक्षिक मापन अक्सर कठिन होता है।

6.3.3 मूल्यांकन के कार्य

i. छात्र निष्पादन/मूल्यांकन
ii. कोर्स मूल्यांकन, अनुदेशनात्मक प्रयोजना
iii. पाठ्यवस्तु की प्रभावशीलता का मूल्यांकन
iv. विद्यार्थी सहायक प्रणाली का मूल्यांकन
v. प्रणाली मूल्यांकन/विद्यार्थी उपलब्धि परीक्षण
vi. सामाजिक आवश्यकता विश्लेषण
vii. नीति का मूल्यांकन, विद्यार्थी अभिवृति

कार्यक्रम का मूल्यांकन, रूपदेय मूल्यांकन, परिवर्तन, पूर्व-परीक्षा, लागू करना, बाद की परीक्षा, योगदेय मूल्यांकन, निर्णय, आवश्यकता विश्लेषण

6.3.4 मूल्यांकन की मौलिक अवधारणाएं

i. मूल्यांकन शिक्षा का अभिन्न अंग है। मूल्यांकन शिक्षा के क्षेत्र में उसी प्रकार महत्वपूर्ण अंग है जिस प्रकार शैक्षिक उद्देश्य एवं शैक्षिक अनुभव। शिक्षा का क्षेत्र उद्देश्य, पाठ्यक्रम, मूल्यांकन शिक्षा के वृताकार क्षेत्र में उद्देश्य पाठ्यक्रम एवं मूल्यांकन पद्धतियां सभी एक दूसरे के इर्द-गिर्द घूमते हैं।
ii. मूल्यांकन निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। विद्यार्थियों में शिक्षा एक ऐच्छिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा छात्रों में वांछित परिवर्तन लाने का प्रयत्न किया जाता है। विषय और उससे सम्बन्धित प्रत्येक कार्यक्रम किसी न किसी रूप में उसमें परिवर्तन लाता रहता है।
iii. मूल्यांकन का कार्य-क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत एवं व्यापक है। शिक्षा में उसकी व्यापकता को शिक्षा की व्याख्या के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है।
iv. मूल्यांकन प्रक्रिया का कार्य-क्षेत्र व्यापक होते हुए भी उसका प्रयोग व्यवहारों के चुने हुए नमूनों तक ही सीमित रहता है। छात्रों की प्रगति का मूल्यांकन करने के लिए जिन व्यवहारों को परखा व जांचा जाता है वे नमूना मात्र होते हैं, क्योंकि उनके समूचे व्यवहार का मूल्यांकन सम्भव नहीं है।

मूल्यांकन की दृष्टि से शिक्षण तथा परीक्षण प्रगतिशील वैज्ञानिक युग में यदि शिक्षा द्वारा राष्ट्रीय विकास एवं समृद्धि केन्द्रित बनाना पड़ेगा। शिक्षा तथा परीक्षण दोनों क्रियाओं को उद्देश्यमुखी करना होगा। शिक्षा में मूल्यांकन का यही वास्तविक अभिप्राय है।

6.3.5 दूरस्थ शिक्षा व मूल्यांकनकर्ता

दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन की चुनौती एक जटिल प्रक्रिया है।

शिक्षक का कार्य:

i. विद्यार्थियों से पत्राचार करता है।
ii. आमने-सामने के सत्र आयोजित करता है।
iii. विद्यार्थियों को उनकी उन्नति पर त्वरित ठीक-ठीक पृष्ठपोषण देता है।
iv. गृहकार्यों पर अंक प्रदान करता है।
v. परिणाम भेजता है।
vi. विद्यार्थियों को दिशा निर्देशन तथा सलाह प्रदान करता है।
vii. विद्यार्थियों की समस्याओं तथा प्रक्रियात्मक कठिनाइयों पर पृष्ठपोषण प्रदान करता है।

अध्यापक को मूल्यांकन में प्रशिक्षण की आवश्यकतायें-

i. दूरस्थ शिक्षा व उसके विभिन्न पहलुओं तथा उसमें अध्यापक की भूमिका के विषय में जानना।
ii. मूल्यांकन की दूरस्थ शिक्षा में भूमिका।
iii. विषयवस्तु का ज्ञान तथा स्वामित्व होना।
iv. कार्यक्रमों, समय निर्धारणों, क्षेत्रीय सेवाओं, सुविधाओं की जानकारी।
v. विद्यार्थियों के साथ सम्प्रेक्षण कौशल।
vi. सलाह देने का कौशल।
vii. मानवीय सम्बन्धो में प्रशिक्षण प्रदान करना।

6.3.6 परीक्षा, मापन, मूल्यांकन

ये शब्द शिक्षा में प्रायः एक-दूसरे के लिए प्रयोग में आते हैं। परन्तु इन शब्दों में निहित संकल्पनाओं में अन्तर है। परीक्षा विद्यार्थी के विकास से सम्बन्धित साक्ष्य संकलित करने की प्रक्रिया है। यह आंकड़े इकट्ठे करने की विधि है। इसमें योजना बनाना, यंत्रों की रचना करना, यंत्रों का प्रयोग करना तथा उत्तरों का मूल्यांकन करना निहित है। इसके अन्तर्गत विद्यार्थी की संप्राप्ति अथवा कार्य के सम्बन्ध में अध्यापक द्वारा आवश्यक जानकारी एकत्रित करने के लिए प्रश्न-पत्र जैसे यंत्रों का प्रयोग किया जाता है। मापन, विद्यार्थी की संप्राप्ति और उसके विकास को निश्चित करने का कार्य है। इसके अन्तर्गत किसी गुण के सम्बन्ध में किसी उपयुक्त पैमाने के आधार पर तुलनात्मक निष्कर्ष निकाले जाते हैं जिससे उसे पैमाने के संदर्भ में उसे अंक दिए जा सकें। ये अंक 1,2,3,4 भी हो सकते हैं और क, ख, ग, घ भी। इसके द्वारा विद्यार्थियों के शैक्षिक संप्राप्ति, शारीरिक कौशल, बौद्धिक शक्ति अभिवृत्ति या किसी व्यक्तिगत या सामाजिक गुण का मापन किया जा सकता है। मूल्यांकन की पहली आवश्यकता मापन है पर मूल्यांकन मापन पर नहीं रूकता। मापन किसी भी संप्राप्ति तथा वस्तु मात्रा बताता है परन्तु मात्रा का सापेक्ष मूल्य मूल्यांकन द्वारा ज्ञात होता है। मूल्यांकन और मापन का सम्बन्ध ग्रॉनलुड ने निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत किया है।

मूल्यांकन = मापन $ मूल्य निर्णय

6.3.7 परीक्षण, अनुमान तथा निष्कर्ष आधारित अंकन

गुड्स के दृष्टिकोण के अनुसार परीक्षण सत्य, झूठ या किसी अनुमान को जानने का साधन या पद्धति है। यद्यपि अध्यापक अनुमान की प्रकृति तो नहीं जानते पर वे सामान्यतया परीक्षण की सहायता से अनुमान की जांच करना चाहते हैं। वास्तव में, वे एक या अधिक अनुमानों की जांच करते है जैसे - संकल्पनाओं के विकास, शैक्षणिक उद्देश्यों की प्राप्ति या दो या दो से अधिक वर्गों की तुलनात्मक संप्राप्ति। परीक्षण विद्यार्थियों के विकास से सम्बन्धित विशेष प्रकार की जानकारी एकत्रित करने के लिए परीक्षा का एक यन्त्र है। परीक्षा के अन्य यन्त्र है प्रेक्षण, जांच-पड़ताल, सूची विश्लेषण तालिका आदि। जांच किए जाने वाले अनुमान की प्रकृति पर आधारित होने के कारण परीक्षण मौखिक, लिखित या प्रायोगिक हो सकता है।

6.3.8 ज्ञानात्मक, भावात्मक और मनोशारीरिक कौशल का मूल्यांकन

ज्ञानात्मक मूल्यांकन का सम्बन्ध उन उद्देश्यों के परीक्षण से है जो विद्यार्थी के बौद्धिक विकास से सम्बन्धित है जैसे अर्थग्रहण ज्ञान का प्रयोग विश्लेषण, संश्लेषण और मूल्यांकन। इन छः उद्देश्यों को ज्ञानात्मक उद्देश्य कहा गया है। इन उद्देश्यों के संदर्भ में विद्यार्थियों की संप्राप्ति का मूल्यांकन ज्ञानात्मक मूल्यांकन कहलाता है। भावात्मक उद्देश्यों से सम्बन्धित मूल्यांकन भावात्मक मूल्यांकन कहलाता है। इसके अन्तर्गत अभिवृत्ति, प्रकृति, रूचि तथा व्यक्तिगत और सामाजिक गुणों के विकास का मूल्यांकन आता है। विद्यार्थियों के इस पक्ष के विकास का परीक्षण आंतरिक मूल्यांकन की सहायता से भली प्रकार होता है। इनके लिए कुछ विशेष विधियों और यंत्रों को प्रयोग किया जाता है। मनोशारीरिक कौशलों के अन्तर्गत वे उद्देश्य आते हैं जिनकी पूर्ति के लिए विद्यार्थियों को कोई कार्य या प्रयोग करना होता है। इसके अन्तर्गत विद्यार्थियों द्वारा किए गए कार्य का परिणाम और कार्य की प्रक्रिया दोनों का मूल्यांकन किया जाता है। कोई मनोशारीरिक क्रिया किसी वस्तु को बनाने की प्रक्रिया, किसी यंत्र को चलाने की विधि आदि। जैसे मनोशारीरिक कौशल के मूल्यांकन के लिए विद्यार्थी को काम या प्रयोग करते हुए देखा जाता है और उसके कार्य का मूल्यांकन किया जाता है। यह मूल्यांकन मनोशारीरिक कौशलों का मूल्यांकन कहलाता है।

6.3.9 लिखित, मौखिक और प्रयोगात्मक परीक्षाएं

इन तीनों प्रकार की परीक्षाओं की प्रकृति और व्याप्ति विद्यार्थियों के विकास से सम्बन्धित जानकारी एकत्रित करने की विधि पर निर्भर है। जब विद्यार्थियों के उतर लिखित रूप में एकत्रित किये जाते हैं तो वह परीक्षा लिखित परीक्षा कहलाती है। जब उनके उत्तरों का माध्यम मौखिक होता है। तो मौखिक परीक्षा कहलाती है। जब परीक्षण का माध्यम विद्यार्थी के द्वारा किया हुआ कोई कार्य होता है तो यह प्रयोगात्मक परीक्षा कहलाती है। लिखित परीक्षा कागज और कलम की सहायता से ली जाती है। स्वरूप की दृष्टि से यह ईकाई परीक्षण, प्रश्नपत्र या कोई भी लिखित कार्य हो सकता है। चूंकि कभी-कभी विद्यार्थियों से केवल रेखाचित्र खिंचवाए जाते हैं, इसलिए इन परीक्षाओं को केवल लिखित परीक्षा के स्थान पर कागज और कलम की परीक्षा कहना उपयुक्त होगा। अधिकतर कक्षाओं में दिए जाने वाले परीक्षण और सार्वजनिक परीक्षाएं इसी वर्ग में आते हैं।

6.3.10 कार्यक्रम मूल्यांकन पाठ्यक्रम मूल्यांकन और विद्यार्थी मूल्यांकन

कार्यक्रम मूल्यांकन के अन्तर्गत किसी कार्यक्रम या परियोजना के सभी सोपानों का प्रभाव आंका जाता है। कार्यक्रम के अन्तर्गत एक या एक से अधिक परियोजनाएं हो सकती है। उदाहरणार्थ, 'अनौपचारिक शिक्षा' के अन्तर्गत क्रियात्मक साक्षरता, प्रौढ़ शिक्षा नवाक्षरों के लिए साहित्य का निर्माण तथा विद्यार्थियों के विकास का मूल्यांकन कार्यक्रम के उद्देश्यों अथवा उन उद्देश्यों अथवा उन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयुक्त साधनों की दृष्टि से किया जा सकता है। चूंकि प्रत्येक कार्यक्रम का प्रभाव आदि विभिन्न पक्ष कार्यक्रम-मूल्यांकन के अन्तर्गत आते हैं। इसलिए संदर्भ मूल्यांकन, मूल्यांकन प्रक्रिया, परिणाम-मूल्यांकन, प्रभाव-मूल्यांकन, छात्र-मूल्यांकन, सामग्री-मूल्यांकन तथा पाठ्यक्रम-मूल्यांकन आदि कार्यक्रम मूल्यांकन के अन्तर्गत आते है। इसके अन्तर्गत आंकड़ों को एकत्रित करने के लिए प्रेक्षण, सम्मति संकलन, विश्लेषण और परीक्षण चारों मुख्य पद्धतियां प्रयुक्त होती हैं। निष्कर्ष निकालने की पद्धति कार्यक्रम के उद्देश्य अथवा कार्यक्रम के संदर्भ में निश्चित की जाती है। इसके आधार पर कार्यक्रम की स्वीकृति, कार्यक्रम में सुधार अथवा कार्यक्रम की समाप्ति के सम्बन्ध में निर्णय लिये जाते हैं।

पाठ्यक्रम मूल्यांकन कार्यक्रम मूल्यांकन का अंग होता है। पर यह स्वतंत्र परियोजना के रूप में भी लिया जा सकता है, यदि स्वयं पाठ्यक्रम का विकास ही कार्यक्रम का उद्देश्य हो। चूंकि पाठ्यक्रम की व्यापक संकल्पना में पाठ्यक्रम के उद्देश्य, उसकी विषयवस्तु, उसकी पद्धति और उसका मूल्यांकन सभी आते हैं, इसलिए इसके अन्तर्गत उद्देश्य पाठ्य सामग्री अथवा अन्य सामग्री अध्ययन और अध्यापन की पद्धति और विद्यार्थियों का विकास सभी का मूल्यांकन आता है। पाठ्यक्रम मूल्यांकन के अन्तर्गत उन सभी क्रियाओं का मूल्यांकन किया जाता है जो पाठ्यक्रम के विकास में प्रयुक्त होती है। निर्धारित उद्देश्य ठीक है या नहीं, विद्यार्थियों के संप्राप्ति से पाठ्यक्रम की संगति और उसकी उपयुक्तता की जानकारी होती है या नहीं शिक्षण अथवा अधिगम सामग्री उपयुक्त है या नहीं, शिक्षण प्रभावपूर्ण है या नहीं, आदि सभी प्रश्नों का उतर पाठ्यक्रम मूल्यांकन के अन्तर्गत खोजा जाता है। चूंकि पाठ्यक्रम की सफलता का एक महत्वपूर्ण पक्ष विद्यार्थियों का विकास है, इसलिए विद्यार्थियों की संप्राप्ति का मूल्यांकन पाठ्यक्रम मूल्यांकन का महत्वपूर्ण अंग माना जाता है। आंकड़े एकत्रित करने के लिए परीक्षण, प्रेक्षण सम्मति और विश्लेषण की विधियां प्रयुक्त होती है। पाठ्यक्रम के उद्देश्य, विद्यार्थी के विकास और अतिरिक्त प्रभाव की दृष्टि से निष्कर्ष निकाले जाते हैं। इसके आधार पर पाठ्यक्रम के सुधार और नवीनीकरण से सम्बन्धित निर्णय लिये जाते हैं। विद्यार्थी-मूल्यांकन के अन्तर्गत अध्ययन अथवा अध्ययन के आधार पर हुए विद्यार्थी के विकास का मूल्यांकन आता है। यह ज्ञानात्मक, भावात्मक या कौशलात्मक विकास का मूल्यांकन हो सकता है। यह आंतरिक और बाह्य दोनों हो सकता है। विद्यार्थी-मूल्यांकन पाठ्यक्रम का एक भाग है। किसी अन्य प्रकार के मूल्यांकन की भांति विद्यार्थी मूल्यांकन के सोपान साक्ष्य एकत्रित करना, विश्लेषण करना, निष्कर्ष निकालना और निर्णय लेना है। निष्कर्ष स्व-संदर्भित मानक संदर्भित या निष्कर्ष संदर्भित हो सकते हैं। निर्णयों का मुख्य उद्देश्य संप्राप्ति का उन्नयन या प्रमाण पत्र देना हो सकता है। विद्यार्थी मूल्यांकन का मुख्य उद्देश्य पूर्व निश्चित शैक्षणिक उद्देश्य के संदर्भ में विद्यार्थी के विकास की दृष्टि से अध्यापन

की क्रियाओं के प्रभाव को जांचना है। विद्यार्थी के विकास की दृष्टि से अध्यापन की क्रियाओं के प्रभाव को जांचना है। विद्यार्थी-मूल्यांकन के अन्तर्गत संप्राप्ति परीक्षण बुद्धि परीक्षण अभिवृत्ति परीक्षण, व्यक्तिगत परीक्षण व्यक्तिगत तथा सामाजिक गुणों और आदतों का मापन तथा प्रवृत्तियों और रूचियों का मूल्यांकन आता है। पारम्परिक रूप में विद्यार्थी-मूल्यांकन सबसे अधिक किया जाता है। जिसके आधार पर पाठ्यक्रम, कार्यक्रम अध्यापन अध्ययन, प्रेक्षण आदि सभी के सम्बन्ध में धारणा बनाई जा सकती है क्योंकि शैक्षिक कार्यक्रम का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपभोक्ता विद्यार्थी है और उसकी संप्राप्ति अनेक निष्कर्षों का आधार बनती है।

6.4 मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्व

मूल्यांकन पाठ्यक्रम में वांछनीय परिवर्तन लाने में सहायक सिद्ध होता है। शैक्षिक मूल्यांकन शिक्षा प्रक्रिया से सम्बन्धित समस्त व्यक्तियों यथा प्रशासकों अध्यापकों, निर्देशकों तथा अनुसन्धानकर्ता में से प्रत्येक के लिए कई तरह से महत्वपूर्ण है। मूल्यांकन विधियों के द्वारा छात्रों की उपलब्धियों, रूचियों अभिक्षमताओं आदि का पता लगाकर परिणामों को अधिकाधिक व्यवस्थित करके वस्तुनिष्ठ वृत तैयार करने का उपयोग लाया जाता है। तथा व्यक्ति या कक्षा के पूरे वर्ग की प्रगति का निर्वचन किया जाता है। मूल्यांकन द्वारा यह मालूम किया जाता है कि उद्दश्यों की प्राप्ति कहां तक हो सकती है। कक्षा में विद्यार्थियों के उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुसार स्तरीकरण किया जा सकता है। मूल्यांकन की प्रक्रिया शिक्षक तथा छात्र दोनों के लिए पुनर्बलन का कार्य करती है। मूल्यांकन द्वारा अध्यापक विभिन्न विषयों और अन्य पाठ्यक्रमीय क्रियाओं के सम्बन्ध में हर छात्र की प्रगति की जानकारी प्राप्त करते हैं, कक्षा के प्रतिभाशाली, सामान्य तथा कमजोर छात्रों का वर्गीकरण करते हैं। उनकी कठिनाइयां और उनके विकास की गति का विश्लेषण एवं निदान करते हैं। मूल्यांकन शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन में सहायक सिद्ध होता है। शिक्षण व्यूह रचना में सुधार तथा विकास किया जाता है तथा अनावश्यक अधिगम-स्त्रोतों को हटाया भी जा सकता है। अध्यापन विधि का निरूपण करने में भी उन्हें मूल्यांकन से सहायता मिलती है क्योंकि इससे अध्यापन की विधियों एवं शैक्षिक सामग्री के प्रभाव की परख भी की जा सकती है। विभिन्न मूल्यांकन प्रविधियां अनुसंधान में कई प्रकार से उपयोग में लाई जाती हैं।

मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्व की विवेचना निम्नलिखित हैः-

1. **निरन्तरता**- मूल्यांकन एक सतत् प्रक्रिया है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो सारा वर्ष चलती रहती है। इसे साप्ताहिक, मासिक एवं त्रैमासिक परीक्षाओं में बांटा जाता है। परीक्षाओं में विद्यार्थी के कार्य पर ही उसकी पदोन्नति का निश्चय किया जाता है।
2. **व्यापकता**- सच्चा मूल्यांकन व्यापक होता है। व्यक्तित्व के सभी तत्व-शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, सौन्दर्यात्मक आदि-निहित होते हैं। वास्तव में इस का लक्ष्य व्यक्तित्व के सभी पक्षों का सन्तुलित विकास करना है।मूल्यांकन केवल कक्षा तक सीमित नहीं। यह कक्षा के बाहर भी होता है। समाज सेवा, सहयोग और जीवन के ऐसे अन्य पक्षों का मूल्यांकनन कक्षा के बाहर की क्रियाओं में होता है।

3. **शिक्षा प्रक्रिया में सुधार**- मूल्यांकन समूची शिक्षा प्रक्रिया के सुधार के लिए किया जाता है। यह लक्ष्यों तथा सीखने के अनुभवों की प्रभावशीलता का निर्णय करता है और विद्यार्थियों एवं अध्यापक दोनों के लिए निर्देशक का काम करता है।
4. **विद्यार्थियों की उपलब्धि का परीक्षण करना**- मूल्यांकन का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य उपलब्धि का परीक्षण करना है। इसके बिना हम नहीं जान सकते कि विद्यार्थियों ने सम्बन्धित विषय में वांछित कुशलता प्राप्त कर ली है या नहीं।
5. **विद्यार्थियों के व्यक्तित्व को आंकना** -मूल्यांकन का सब से महत्वपूर्ण लक्ष्य विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का मापन करना है अर्थात् उनकी रूचियों, अभिरूचियों, उपलब्धियों, बुद्धि तथा उनके शारीरिक, भावात्मक, सामाजिक एवं नैतिक विकास का मापन। व्यक्तित्व के सन्तुलित विकास को निश्चित करने के लिए मूल्यांकन के प्रकाश में शिक्षा-कार्यक्रमों को बदला भी जा सकता है।
6. **शिक्षा में सफलता प्राप्त करना**-मूल्यांकन का एक और लक्ष्य शिक्षा में सफलता प्राप्ति को सम्भव बनाना है। मूल्यांकन द्वारा हम इसी बात को जान सकते हैं कि शिक्षा के लक्ष्य कहां तक प्राप्त हुए हैं।
7. **लक्ष्यों को स्पष्ट करना**- मूल्यांकन का एक और लक्ष्य शिक्षा के लक्ष्यों को स्पष्ट करने में सहायता करना है। मूल्यांकन द्वारा अध्यापकों को कई विषयों के विभिन्न प्रकरणों का स्पष्ट बोध हो जाता है।
8. **प्रेरणा के रूप में काम करना**- परीक्षाओं द्वारा विद्यार्थियों को वे लक्ष्य स्पष्ट करना है जिन्हें प्राप्त करना होता है।
9. **विद्यार्थियों के वर्गीकरण में सहायता**- मूल्यांकन के आधार पर विद्यार्थियों को विभिन्न वर्गों में बांटना मूल्यांकन का एक और लक्ष्य है। कई छात्र बहुत बुद्धिमान होते हैं।
10. **छात्रवृत्ति प्रदान करना**- उपलब्धि एवं बुद्धि परीक्षाओं के आधार पर योग्य विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियां प्रदान की जा सकती हैं।
11. **दाखिले का आधार प्रदान करना**- मूल्यांकन का एक और लक्ष्य अध्ययन के उच्च कोर्सों में दाखिले के लिए उम्मीदवारों की योग्यता तथा सामर्थ्य को निश्चित करना है।
12. **निर्देशन प्रदान करना**- मूल्यांकन का एक और लक्ष्य व्यक्तिगत योग्यताओं, रूचियों, अभिरूचियों, उपलब्धियों तथा व्यक्तित्व के अन्य तत्वों के विभिन्नकरण में सहायता करना है। मूल्यांकन के आधार पर विद्यार्थियों को शैक्षिक एवं व्यासायिक निर्देशन प्रदान किया जा सकता है।
13. **पाठ्यक्रम में सुधार करना**- मूल्यांकन द्वारा पाठ्यक्रम में परिवर्तन किये जा सकते हैं। पाठ्यक्रम को कभी स्थाई नहीं रहना चाहिए बल्कि इसे बदलते रहना चाहिये। मूल्यांकन पाठ्यक्रम के सुधार में सहायता प्रदान करता है।
14. **सीखने को प्रभावित करना**- परीक्षायें विद्यार्थियों को कोर्स दोहराने, विषय-वस्तु को याद रखने, प्रश्नों का उत्तर देने के लिये विषय-वस्तु को संगठित करने और ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग करने के अवसर प्रदान करती हैं।
15. **प्रगति की रिपोर्ट करना**- परीक्षा के परिणामों के आधार पर ही विद्यार्थियों के माता-पिता को उनकी प्रगति-रिपोर्ट भेजी जाती है।

16. **अनुसन्धान के लिए सामग्री प्रदान करना**- परीक्षायें अनुसन्धान-कार्य के लिए पर्याप्त सामग्री प्रदान करती हैं; इसके आधार पर शिक्षा और परीक्षा-पद्धति में कई प्रकार के सुधार किये जा रहे हैं।

6.5 मूल्यांकन के आधार

मूल्यांकन की प्रक्रिया में शिक्षा और शिक्षार्थी की भीतर होने वाली आदान-प्रदान की मात्रा एवं उपयुक्तता पर ध्यान दिया जाता है। मूल्यांकन का सम्बन्ध वैसे तो शिक्षा की समस्त क्रियाओं से है, परन्तु उद्देश्यों का स्पष्टीकरण तथा सीखने के अनुभव ऐसी क्रियाएं हैं जिनमें से गुजरते हुए ही हम मूल्यांकन तक पहुंचते हैं। अतः मूल्यांकन प्रक्रिया के अन्तर्गत निम्नलिखित क्रियाओं का समावेश महत्वपूर्ण हैः-

क. शिक्षण उद्देश्य का निर्धारण एवं परिभाषीकरण।
ख. शैक्षणिक क्रियाओं द्वारा अनुभव उत्पन्न करना।
ग. व्यवहार परिवर्तन के आधार पर मूल्यांकन करना।

(क) शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण एवं परिभाषीकरण

किसी क्रिया के प्रारम्भ करने के पूर्व का अन्तिम कल्पित दृश्य उद्देश्य है। जिसकी और व्यक्ति कार्य करने के लिए प्रेरित होते हैं और उसकी प्राप्ति हेतु वर्तमान परिस्थिति में परिवर्तन लाने के लिए योजनाबद्ध तरीके से अपेक्षित क्रियाओं में जुट जाते हैं। शिक्षण उद्देश्यों को निर्धारित करने के लिए शिक्षार्थी, समाज, विषयवस्तु की प्रकृति, शिक्षा-मनोविज्ञान व शिक्षा का स्तर पर ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है। शिक्षण उद्देश्य के निर्धारण में बालक के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, रूचियां, अभिरूचियां व योग्यताओं को ध्यान में रखना पड़ता है। इन सभी सूचनाओं के आधार पर शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण किया जा सकता है। समाज के आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आधार पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है। विद्यालयों में पढ़ाए जाने वाले प्रत्येक विषय का अपना विशेष महत्व होता है। जिस प्रकार गणित स्वभाव से अनुशासनात्मक प्रभाव डालता है तो भाषा एक कुशलता के रूप में सामाजिक आदान-प्रदान को पुष्ट बनाती है। अतः शिक्षण-उद्देश्यों का निर्धारण विषय-वस्तु के इस स्वभाव को समझकर करना चाहिए। अधिगमानुभव का ज्ञान मूल्यांकन करने के लिए महत्वपूर्ण है।उद्देश्य निर्धारित करने के पश्चात इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के साधन जुटाने का प्रश्न उपस्थित होता है। ये साधन हैं अधिगमानुभव, अर्थात् सीखने के अनुभव, सीखने के लिए आवश्यकता है अनुभवों की, और केन्द्रित सीखने के अनुभवों की प्राप्ति किन्ही विशेष परिस्थितियों में होती है। शिक्षण-उद्देश्यों का निश्चय करने के बाद उन्हें स्पष्ट एवं वास्तविक रूप में परिभाषित करना पड़ता है। प्रत्येक शिक्षण का अन्तिम लक्ष्य बालक के व्यवहार में परिवर्तन लाना होता है। शिक्षण उद्देश्यों को परिभाषित करने के लिए यह आवश्यक है कि उनके दो अंगों पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित किया जाए।

(अ) व्यवहार परिवर्तन। (ब) विषय वस्तु का क्षेत्र जिसमें परिवर्तन होना है।

(ख) शैक्षणिक क्रियाओं द्वारा अनुभव उत्पन्न करना

अधिगमानुभवों का ज्ञान मूल्यांकन करने के लिए दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता है अधिगमानुभवों से पूर्ण परिचय। सीखने के लिए आवश्यकता है अनुभवों की और वांछित सीखने के अनुभवों की प्राप्ति किन्ही विशेष परिस्थितियों में होती है। शिक्षक को एक ऐसी परिस्थिति का निर्माण करना पड़ता है जिसके अन्तर्गत बालक को शिक्षण अनुभव प्राप्त हो सके। शिक्षण अनुभव के साधन है जिनके द्वारा अभीष्ट शिक्षण उद्देश्यों की पुष्टि होती है। अध्यापक को चाहिए कि वह कक्षा के अन्दर ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करें जिससे बालक वांछित प्रतिक्रिया व्यक्त करे। किसी एक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कई तरह के शिक्षण-अनुभवों को उत्पन्न करना पड़ता है। इस प्रक्रिया में अध्यापक व विद्यार्थी को सक्रिय योगदान देना पड़ता है। कक्षा की प्रक्रिया में शिक्षक की क्रियाओं का असर शिक्षार्थी पर पड़ता है और शिक्षार्थी अपनी क्रियाओं के द्वारा कुछ ऐसे अनुभव अर्जित करता है जो उसके व्यक्तित्व का अंग बन जाते हैं। अध्यापक को इस प्रक्रिया के लिए सहायक कार्य करना पड़ता है।

(ग) व्यवहार परिवर्तन के आधार पर मूल्यांकन करना

बालक के व्यवहार में परिवर्तन लाना शिक्षा का अन्तिम लक्ष्य है। विभिन्न प्रकार की परीक्षाओं से विद्यार्थियों की विभिन्न विषयों में उपलब्धि, सामान्य बुद्धि, अभिक्षमताएं इत्यादि का मापन किया जाता है। विद्यालय में पढ़ाए जाने वाले सब विषय बालक के ज्ञानात्मक, भावात्मक व क्रियात्मक पक्षों का विकास करते हैं। प्रेक्षण के आधार पर विद्यार्थियों के व्यक्तित्व की विशेषताओं का कुछ अनौपचारिक परिस्थितियों में अनुमान लगाया जाता है प्रश्नावलियों, सूचियों के सहारे से शिक्षार्थियों के व्यक्तित्व, समायोजन, सामाजिक एवं आर्थिक स्तर के बारे में पता लगाया जाता है। शिक्षा में मूल्यांकन के द्वारा बालक के व्यवहार में होने वाले परिवर्तन के विषय में पता लगाया जाता है। शिक्षण की प्रक्रिया में जब कभी मूल्यांकन किया जाता है तो उसका आधार व्यवहार के ज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक पक्ष होते हैं।

6.6 मूल्यांकन प्रक्रिया के चरण

शिक्षण के प्रत्येक सोपान, प्रत्येक अंश तथा प्रत्येक पहलू का मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन की **प्रक्रिया शिक्षण प्रक्रिया के साथ-चलती रहती है। मूल्यांकन प्रक्रिया के चरणों में उद्देश्य-चयन, उद्देश्य-** विश्लेषण, परिस्थितियों का चुनाव, प्रविधियों का चुनाव, प्रविधियों का प्रयोग एवं परिणाम अंकन एवं परिणामों का निर्वचन अथवा उनकी व्याख्या सम्मिलित है।

1. उद्देश्य चयन- मूल्यांकन प्रक्रिया के प्रथम चरण में उद्देश्यों का चुनाव किया जाए जिनका मूल्यांकन करना है और जिसकी प्राप्ति के लिए संस्थान में योजनाबद्ध तरीके से परिस्थितियों का आयोजन किया गया है।

2. उद्देश्य विश्लेषण - मूल्यांकन प्रक्रिया के दूसरे चरण में चुने हुए उद्देश्यों का व्यावहारिक शब्दों में विश्लेषण किया जाना चाहिए। विद्यार्थियों के अपेक्षित ज्ञान, कुशलताओं, रुचियों, अभिवृत्तियों इत्यादि को विशिष्टताओं के साथ स्पष्टतः परिभाषित किया जाए।
3. परिस्थितियों का चुनाव - मूल्यांकन प्रक्रिया के तीसरे चरण में परिस्थितियों का चुनाव किया जाए तो उन उद्देश्यों के अनुरुप विद्यार्थियों के व्यावहारिक पक्ष से सम्बन्धित ऐसे प्रमाण जुटाने में सहायक हो सके जिनसे यह निश्चित करने में सहायता मिले कि आपेक्षित परिवर्तन हुए हैं या नहीं यदि हुए हैं तो किस सीमा तक
4. प्रविधियों का चुनाव - मूल्यांकन प्रक्रिया के चतुर्थ सोपान में उद्देश्य प्राप्ति के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष या परोक्ष रुप से प्रमाण प्रस्तुत करने के लिए यथोचित मूल्यांकन प्रविधियों का चुनाव किया जाना चाहिए।
5. प्रविधियों का प्रयोग एवं परिणाम अंकन - इस सोपान में समुचित का मूल्यांकन करने हेतु चुन लेने के बाद उन्हें प्रयोग करके आधार सामग्री एकत्रित की जाए। प्रविधियों को जिन परिस्थितियों में अपनाया गया है उसके परिणामों अथवा प्रतिक्रियाओं का व्यापक अंकन किया जाना चाहिए।
6. परिणामों का निर्वचन अथवा उनकी व्याख्या - मूल्यांकन के अन्तिम चरण में परिणामों का निर्वचन किया जाए। जब छात्र व्यवहार व परिवर्तनों सम्बन्धी परिणामों को विभिन्न प्रविधियों द्वारा एकत्रित कर लिया जाए तब ध्यानपूर्वक उनका विश्लेषण करने की आवश्यकता है। निर्वचन उद्देश्यों के आधार पर होना चाहिए। यह सहज, स्वाभाविक व निष्पक्ष तथ्यों पर आधारित होना चाहिए। मूल्यांकन द्वारा अन्त में यह निश्चित कर लिया जाना चाहिए कि निर्धारित उद्देश्यों में से किस उद्देश्य की प्राप्ति कहां तक हो पाई है। परिणामों के आधार पर शिक्षार्थियों की कमियों एवं योग्यताओं का लेखा-जोखा उनके विकास के प्रयत्नों के लिए सम्भव हो सके तभी मूल्यांकन वास्तव में सार्थक है।

6.7 मूल्यांकन की प्रविधियाँ

मूल्यांकन की प्रक्रिया ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के सम्बन्ध में प्रदत का संकलन करती है। मूल्यांकन की सबसे प्रमुख समस्या यह है कि मूल्यांकन अधिक से अधिक सन्तोषजनक ढ़ंग से किस प्रकार किया जाए। मूल्यांकन की कुछ प्रविधियाँ परीक्षात्मक होती हैं और कुछ प्रेक्षणात्मक प्रविधियाँ। संरक्षणात्मक प्रविधियाँ मूल्यांकन में प्रयुक्त की जाती हैं। दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन की निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण प्रविधियाँ हैं जिनके प्रयोग से विद्यार्थियों का मूल्यांकन किया जाता है

क. मानक सम्बन्धित परीक्षण
ख. मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षण
ग. रुपदेय परीक्षण
घ. योगदेय परीक्षण

ङ. साक्षात्कार
च. प्रेक्षणात्मक विधियाँ
छ. उपलब्धि-परीक्षण
ज. निबन्धात्मक परीक्षण
झ. अधिगम-मापन की परीक्षायें, गृह कार्य

(क) मानक सम्बन्धित परीक्षण

मानक परीक्षण के प्रयोग से यह विदित होता है कि छात्रों ने पाठ्यवस्तु कहां तक सीखी है। मानक परीक्षणों से छात्र ने कितने प्रश्नों के उत्तर सही दिए हैं उसके स्तर का बोध होता है। मानक परीक्षणों के परिणामों का अर्थापन कक्षा समूह के स्तर के रुप में किया जाता है । छात्र की कमजोरियों तथा उपलब्धियों का अर्थापन समूह में उसके स्थान पर किया जाता है। मानक परीक्षण की रचना में शिक्षण की समस्त पाठ्य-वस्तु की दृष्टि से कई उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है मानकों का विकास नहीं किया जाता है जिससे उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है। उद्देश्यों का वर्गीकरण किया जाता है। मानक परीक्षण से शिक्षक को अपने विकास के लिए कोई दिशा नहीं मिलती है। सभी वैषयिक परीक्षण मानकीकृत नहीं होते। मानकीकृत परीक्षण ऐसे विषय निष्ठ परीक्षण को कहते हैं जिनके मानक तैयार किये गये हों। ये मानक किसी आयु, कक्षा अथवा स्तर के लिए बनाये जाते हैं। मानक तैयार करने के लिए परीक्षणों का निर्माण योजनाबद्ध तरीके से एक विशेष ढंग से तथा बड़ी सावधानी से किया जाता है। पूरे पाठ्यक्रम में विभिन्न प्रकार के विषयनिष्ठ प्रश्नों की सावधानी से रचना की जाती है। मापक तैयार करने से पूर्व उन्हें कई बार विद्यार्थियों पर प्रयोग करके उनके प्रबन्ध, परीक्षण विधि तथा अंकन हेतु विशेष नियम बना दिये जाते हैं और उन्हीं के अनुसार परीक्षण और अंकन किया जाता है।

मानक सम्बन्धित परीक्षण का मुख्य उद्देश्य व्यक्तिगत भेदों का मूल्यांकन करना है। यह चयन हेतु प्रयुक्त होता है। चयन का कोटा निर्धारित करने के लिए बहुत उपयोगी है। यह विद्यार्थियों का ग्रेड निर्धारित करने में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। यह परीक्षण इस तथ्य की रिपोर्ट देता है कि विद्यार्थी ने कितने प्रश्नों के सही उत्तर दिये।

i. मानक परीक्षण में आसान व कठिन दोनों प्रकार के प्रश्न होते हैं।
ii. इस परीक्षण में अधिगम-क्षेत्र से सम्बन्धित प्रश्नों का व्यापक वितरण किया जाता है।
iii. इस परीक्षण की रचना विशेष रुप से परीक्षण अंकों की अधिकतम विभिन्नता लाने के लिए की जाती है।
iv. मानक परीक्षण में अंकों का चयन वांछित संख्यात्मक मूल्यों के आधार पर किया जाता है, न कि इन आधार पर कि वे विषय वस्तु के किस क्षेत्र से प्रतिनिधित्व कर रहे हैं।

परीक्षण की सभी परिस्थितियाँ जैसे परीक्षण समय, भवन परीक्षण-विधि निर्देशन, समय-सीमा, आवश्यक सावधानियाँ पूर्व निश्चित होती हैं। मानकीकृत परीक्षणों में अन्तर्वस्तु की वैधता, महत्वपूर्ण होती है। मानकीकृत परीक्षणों में निम्नलिखित विशेषताएँ दिखाई देती हैं।

i. अर्न्तवस्तु की वैधता
ii. समान ढंग से संचालन
iii. जाँचने की सुगमता और वस्तुनिष्ठता
iv. मानक
v. विश्वसनीयता और वैधता

(ख) मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षण

मापन के क्षेत्र में वर्ष 1960 में नई शब्दावली का विकास हुआ जिसे मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षण कहते हैं। इन्हें उद्देश्य केन्द्रित परीक्षण भी कहते हैं। मानदण्ड परीक्षण अधिक उपयोगी होते हैं। इनमें अधिगम शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति के सम्बन्ध में विशिष्ट जानकारी होती है। स्टाँग ले ने (1960) में नवीन प्रकार से शैक्षिक परीक्षाओं का विकास किया जो परम्परागत परीक्षणों से भिन्न है। स्टाँग ने इन्हें मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षण की संज्ञा दी जिनकी रचना तथा उपयोग मनोवैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है। मानदण्ड परीक्षण के प्रयोग से यह ज्ञात होता है कि अनुदेशन तथा शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति को बतलाते हैं तथा यह भी जानकारी होती है कि छात्र के सीखने में कहां पर कमजोरी रही है। । उद्देश्यों पर प्रश्नों की रचना की जाती है, जिसे उद्देश्यों की दृष्टि से वैध बनाया जा सके। मानदण्ड परीक्षण पर छात्रों के उत्तरों के अंकन से यह विदित होता है कि छात्रों में उद्देश्यों की प्राप्ति में कितनी सफलता रही है। मानदण्ड परीक्षण के परिणाम छात्र की अपेक्षा शिक्षक के लिए उपयोगी होते हैं जिनसे वह अपने अनुदेशन की प्रक्रिया में सुधार तथा विकास कर सकता है। यह पुनर्बलन का कार्य करता है। मानदण्ड परीक्षण के निर्माण में शिक्षण-अधिगम उद्देश्यों को प्राथमिकता दी जाती है।

मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षण वह परीक्षण है जिस का निर्माण ऐसे मापों के लिये किया जाता है जो विशिष्ट निष्पत्ति स्तरों की प्रत्यक्ष व्याख्या कर सकें। यह परीक्षण किसी सुपरिभाषित व्यवहार क्षेत्र में व्यक्ति का स्तर निश्चित करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इस परीक्षण में वह समूचा व्यवहार सम्मिलित किया जाता है जिसे अन्तिम व्यवहार कहते हैं।

i. मानदण्ड परीक्षण का सम्बन्ध शिक्षण अथवा अनुदेशन के अन्तिम व्यवहार के साथ होना चाहिए।
ii. इस परीक्षण के प्रश्नों का कठिनाई मूल्य होना चाहिए और उन में विभेदीकरण की जाँच की शक्ति होनी चाहिए। वह विश्वसनीय एवं वैद्य होना चाहिए।
iii. मानदण्ड परीक्षण का संचालन सुगम होना चाहिए और उसका अंकन भी आसान होना चाहिए।

(ग) रुपदेय परीक्षण

रुपदेय परीक्षण का उपयोग शिक्षण-अधिगम को प्रभावशाली बनाने तथा छात्रों की पाठ्यपुस्तक को ईकाई के रुप में स्वामित्व एवं उद्देश्यों की प्राप्ति को महत्त्व देने के लिए किया जाता है। शिक्षण तथा अनुदेशन के प्रस्तुतीकरण में पाठ्यवस्तु को इकाइयों में बांट कर शिक्षण किया जाता है। अतः प्रत्येक ईकाई के अन्त में परीक्षण किया जाना चाहिए, छात्रों की अपेक्षित प्राप्ति न होने पर निदान किया जाए तथा पुनः सुधारात्मक

शिक्षण दिया जाये। रुपदेय मूल्यांकन तब होता है जब विद्यार्थी उन वर्षों में से गुजर रहे होते हैं जब उनके रुप का निर्माण होता है। इस का निहित अर्थ है 'अनुदेशन के दौरान विद्यार्थियों का मूल्यांकन। इस में पाठ्यक्रम की छोटी एवं स्वतन्त्र इकाईयों को आधार बनाया जाता है। प्रत्येक इकाई के अन्त में विद्यार्थियों का परीक्षण होना चाहिए और उनकी कमजोरियों का निदान होना चाहिए। निदान के पश्चात् उपचारात्मक शिक्षण होना चाहिए और फिर रुपदेय मूल्यांकन किया जाना चाहिए। रुपदेय मूल्यांकन विद्यार्थियों को निर्धारित विषय वस्तु में प्रवीणता प्राप्त करने का अवसर प्रदान करता है। रुपदेय परीक्षायें शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाती हैं। इनमें लक्ष्यों की प्राप्ति पर अधिक बल दिया जाता है। अनुदेशन की प्रत्येक इकाई या अध्याय पर विशिष्ट परीक्षाएं तैयार की जाती हैं। ये सामान्यतः अध्यापक द्वारा तैयार की जाती हैं। रुपदेय मूल्यांकन विद्यार्थी एवं अध्यापक दोनों को अधिगम की सफलता एवं असफलता के सम्बन्ध में निरन्तर पृष्ठपोषण प्रदान करता रहता है।

रुपदेय मूल्यांकन की विषेषतायें

1. इकाई का चुनाव - रुपदेय मूल्यांकन में अधिगम की किसी एक विषिष्ट इकाई का चुनाव किया जाता है।
2. इकाई की विशिष्टता- इकाई के भागों का विशिष्टताओं के रुप में विश्लेषण किया जाता है। इकाई की विशिष्टताओं में सम्मिलित है:
   (क) विषय-वस्तु
   (ख) विद्यार्थी का व्यवहार
   (ग) विषय-वस्तु के सम्बन्ध में प्राप्त किये जाने वाले लक्ष्य
3. विषय वस्तु निर्धारित करना -रुपदेय मूल्यांकन में इकाई की नयी विषय-वस्तु निर्धारित की जाती है। इसमें नए शब्द, नये सम्बन्ध तथा नई प्रक्रियायें सम्मिलित हैं।
4. अधिगम-परिणाम निर्धारित करना - विषय साम्रगी के नये तत्व से सम्बन्धित अधिगम के परिणाम या विद्यार्थी का व्यवहार निर्धारित किया जाता है।

रुपदेय मूल्यांकन की उपयोगितायें

रुपदेय मूल्यांकन अध्यापक एवं विद्यार्थी दोनों के लिए उपयोगी है।

विद्यार्थियों के लिये उपयोगिता

विद्यार्थियों के लिए रुपदेय मूल्यांकन की निम्नलिखित उपयोगिताये हैं-

1. विषय-वस्तु का अधिगम - यह विद्यार्थियों को प्रत्येक अधिगम-इकाई की विषय-वस्तु जानने और उसके अनुरुप व्यवहार सीखने में सहायता प्रदान करता है।
2. अधिगम में निपुणता- यह विद्यार्थियों को सीखने में निपुणता प्राप्त करने की गति तेज करने में सहायता प्रदान करता है।

3. अधिगम के लक्ष्य- इससे सीखने के लक्ष्य निर्धारित किये जा सकते हैं।
4. अधिगमक्रम-इस से विद्यार्थियों के अधिगम-क्रम को छोटी-छोटी इकाईयों में बांटने में सहायता मिलती है।
5. प्रभावशाली पुनर्बलन- इसके परिणामस्वरुप विद्यार्थियों को अधिगम-इकाई में निपुणता प्राप्त करने का पुनबर्लन मिलता है।
6. निदानात्मक महत्व- इसका निदानात्मक महत्व है। इससे विद्यार्थियों की समस्याओं का निदान होता है और फिर उनके समाधान के लिये उचित उपाय किये जा सकते हैं।

(घ) योगदेय परीक्षण

योगदेय परीक्षण में पाठ्यवस्तु को सभी इकाई के शिक्षण के अन्त में जब छात्र सभी इकाइयों को पृथक्-पृथक् , रुप में देय परीक्षणों को पास कर लेते हैं तो उसके अन्त में योगदेय परीक्षण को दिया जाता है जिससे छात्रों को सामान्य स्तर पर बोध होता है और छात्रों की सफलता के आधार पर शिक्षण व अनुदेशन की प्रभावशीलता का मूल्यांकन होता है, जिससे शिक्षक तथा अनुदेशन को पुनर्बलन मिलता है और अपने आगे के शिक्षण के नियोजन तथा व्यवस्था में सहायता मिलती है।योगदेय मूल्यांकन एक प्रकार का मूल्यांकन है जिसका प्रयोग निश्चित कालावधि, कोर्स या कार्यक्रम के पश्चात ग्रेडिंग, प्रमाणीकरण, प्रगति के मूल्यांकन या पाठ्यक्रम, अध्ययन-कोर्स, शैक्षिक योजना की प्रभावशीलता के अनुसंधान के लिये किया जाता है।

i. योगदेय परीक्षण द्वारा विद्यार्थियों के सामान्य स्तर का ज्ञान होता है।
ii. योगदेय परीक्षण द्वारा शिक्षण एवं अनुदेशन की प्रभावशीलता का मूल्यांकन किया जाता है।
iii. इस परीक्षण के द्वारा विद्यार्थियों के कार्य से इस बात का भी अनुमान लगाया जा सकता है कि शिक्षा के लक्ष्यों की कहाँ तक प्राप्ति हुई है।

योगदेय मूल्यांकन की परीक्षक की संरचना के लिए अध्यापकों को विशिष्टताओं की तालिका विकसित करनी चाहिए, या उसे अपनाना चाहिए। अध्यापक को सम्बन्धित परीक्षण मुद्दों का विकास करना चाहिए या उन्हें अपनाना चाहिए।

उचित अंकन विधि अपनाई जानी चाहिए। योगदेय परीक्षणों में परीक्षण मदों का विधिवत योजना के अनुसार 'सरल से कठिन की ओर' संकलन होना चाहिए।

अतः हम कह सकते हैं कि रुपेदय मूल्यांकन तथा योगदेय मूल्यांकन एक दूसरे के पूरक हैं।रूपदेय मूल्यांकन कठिनाइयों को जानने में अधिक सहायता प्रदान करता है जबकि योगदेय मूल्यांकन में शिक्षण की प्रभावशीलता की अधिक जाँच होती है।

योगदेय मूल्यांकन की विशेषतायें-

1. कोर्स के अन्त में - योगदेय मूल्यांकन एक निश्चित कालावधि, कोर्स, कार्यक्रम अथवा सेमेस्टर के अन्त में होता है।
2. अन्तिम एवं निर्णयात्मक - योगदेय मूल्यांकन अन्तिम एवं निर्णयात्मक होता है।
3. अनुदेशन लक्ष्य - योगदेय मूल्यांकन का गठन इस बात को निर्धारित करने के लिये किया जाता है कि विद्यार्थियों ने कहां तक अनुदेशन के लक्ष्य प्राप्त किये हैं। योगदेय मूल्यांकन के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं:
    a. विद्यार्थियों का ग्रेड निर्धारित करना और उन्हें प्रमाणित करना।
    b. प्रगति का मूल्यांकन करना।
    c. अध्यापक की प्रभावशीलता की जाँच करना
    d. पाठ्यक्रम, अध्ययन कोर्स अथवा शैक्षिक योजना की प्रभावशीलता का जाँच करना ।
4. निर्धारित कोर्स-मूल्यांकन का आधार - विशिष्ट कालावधि अथवा सैमेस्टर के लिए निर्धारित किया गया कोर्स संकलित मूल्यांकन का आधार बनता है।

ब्लूम एवं उसके दो साथियो ने दो प्रकार के योगदेय मूल्यांकनों का उल्लेख किया है:-

a. अन्तर्वती योगदेय मूल्यांकन - इसका सम्बन्ध अधिक सीधे, कम सामान्यीकृत तथा कम स्थानान्तरण परिणामों से होता है।
b. दीर्घकालीन योगदेय मूल्यांकन

इस मूल्यांकन का सम्बन्ध मूल्यांकन के लिये प्रस्तुत मॉडल के अपेक्षित समूचे परिणामों में विद्यार्थी द्वारा प्राप्त उपलब्धि से है अर्थात विद्यार्थी ने अपेक्षित समूचे परिणामों में कहां तक उपलब्धि प्राप्त की है। दोनों प्रकार के मूल्यांकन का अपना-अपना महत्व है। प्रो. ब्लूम और उन के साथियों का कथन है, 'अन्तर्वर्ती तथा दीर्घकालीन दोनों प्रकार का योगदेय मूल्यांकन महत्त्वपूर्ण है और दोनों में से किसी को भी कम महत्व नहीं देना चाहिए। परन्तु यदि मूल्यांकन को शिक्षण और अधिगम दोनों प्रक्रियाओं का सहायक बनाना है और ये मूल्यांकन प्रक्रियायें चल रही हों तो उनमें संशोधन हो सकता है।

योगदेय मूल्यांकन की उपयोगितायें

ब्लूम तथा उसके साथियों ने योगदेय मूल्यांकन की निम्नलिखित उपयोगिताओं का उल्लेख किया है:-

i. **ग्रेड देने का आधार -** योगदेय मूल्यांकन ग्रेड देने का आधार प्रदान कराता है। ग्रेड अंकों में भी दिये जा सकते हैं और अक्षरों में भी। ग्रेडिंग से विद्यार्थियों के वर्गीकरण में सहायता मिलती है।
ii. **प्रमाणीकरण का आधार**- योगदेय मूल्यांकन विद्यार्थियों की योग्यताओं एवं कुशलताओं के प्रमाणीकरण का आधार प्रस्तुत करता है।

iii. **सफलता की भविष्यवाणी**- योगदेय मूल्यांकन आगामी सम्बन्धित कोर्स में विद्यार्थियों की सफलता की भविष्यवाणी करता है। यह उन्हें शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करने का आधार प्रस्तुत करता है।

iv. **प्रगति का ज्ञान**- रूपदेय मूल्यांकन के समान योगदेय मूल्यांकन भी विद्यार्थियों को अपनी प्रगति का ज्ञान प्रदान करता है। इनसे उन्हें अपनी कमियों को जानने तथा उन्हें दूर करने में सहायता मिलती है। इस प्रकार यह विद्यार्थियों के लिये उपयोगी पृष्ठपोषण का काम करता है।

v. **अनुदेशन का आरम्भ**- योगदेय मूल्यांकन विद्यार्थी की उपलब्धि स्तर का ज्ञान प्रदान करता है। यह इस बात का निर्णय लेने में सहायक होता है कि विद्यार्थी के लिए आगामी कोर्स कब आरम्भ किया जाये।

vi. **समूहों की तुलना**- योगदेय मूल्यांकन विभिन्न अध्यापकों द्वारा पढ़ाये गये विभिन्न विद्यार्थी समूहों के परिणामों की तुलना करने में सहायता प्रदान करता है।

रूपदेय मूल्यांकन तथा योगदेय मूल्यांकन एक दूसरे के पूरक हैं। रूपदेय मूल्यांकन विद्यार्थियों को सीखने की कठिनाइयों को जानने में अधिक सहायता प्रदान करता है जबकि योगदेय मूल्यांकन में शिक्षण की प्रभावशीलता की अधिक जांच होती है। रूपदेय मूल्याकंन सीखने की प्रक्रिया का महत्त्वपूर्ण अंग है।

(ड.) साक्षात्कार

साक्षात्कार व्यक्तिनिष्ठ विधि होते हुए भी मूल्यांकन प्रक्रिया के लिए महत्वपूर्ण होता है। इसके द्वारा कई प्रकार की ऐसी सूचनाएं व तथ्य एकत्रित हो सकते हैं जो परीक्षणों के द्वारा सम्भव नहीं होते। मौखिक अभिव्यक्ति का मूल्यांकन के लिए अपना अलग महत्व है जो साक्षात्कार के द्वारा ही सम्भव है। साक्षात्कार विधि के सम्बन्धों में दो प्रमुख बातें स्पष्ट होनी चाहिए।

i. साक्षात्कार में दो या दो से अधिक व्यक्ति एक -दूसरे के समक्ष होते हैं। एक वह जो साक्षात्कार करता है या साक्षात्कार हेतु प्रश्न पूछता है तथा दूसरा वह जिससे वार्तालाप किया जाता है।

ii. साक्षात्कार किसी विशिष्ट उद्देश्य को लेकर निर्दिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति या प्राप्ति करने के लिए किया जाता है। उद्देश्यों के आधार पर साक्षात्कार के मुख्य चार प्रकार बताए गये है। परिचयात्मक, तथ्य निरूपणात्मक, सूचनात्मक और उपचारात्मक। मूल्यांकन की दृष्टि से परिचयात्मक तथा तथ्य निरूपणात्मक साक्षात्कार अत्यन्त उपयोगी है। इस प्रकार के साक्षात्कार का उपयोग साक्षाकृत व्यक्ति के बारे में विस्तृत परिचय और सम्बद्ध तथ्यों, उसकी उपलब्धियों, सम्मतियों, अभिवृत्तियों, व्यक्तिगत अनुभवों आदि का पता लगाने के लिए किया जाता है।

तथ्य निरूपणात्मक अथवा सर्वेक्षण साक्षात्कार इसलिए भी उपयोगी है कि इसके द्वारा कई व्यक्तियों से तथ्य एकत्रित करके किसी संस्था से सम्बन्धित समस्या अथवा वर्तमान दोषों का मूल्यांकन किया जा सकता है। ऐसी अवस्था में एक ही व्यक्ति मुख्य दिलचस्पी का पात्र नहीं होता। उसमें दिलचस्पी मात्र इतनी ही होती है कि वह एक समस्या के बारे में अपनी सम्मति या मत प्रकट कर सकता है, पर उस समस्या का निर्वचन कई

व्यक्तियों द्वारा दिये गये तथ्यों के आधार पर किया जाता है। इसका उदाहरण सार्वजनिक जनमत-संग्रह में किये जाने वाले साक्षात्कार हैं। छात्रों अथवा संरक्षकों की आवश्यकताओं को विद्यालय कहां तक संतुष्ट कर रहा है इस सन्दर्भ में विद्यालय का मूल्यांकन करने में भी इस प्रकार के साक्षात्कार सहायक हो सकते हैं।

उपचारात्मक साक्षात्कार का उपयोग मुख्यतः व्यक्ति का किसी विशिष्ट समस्या या परिस्थिति के साथ समायोजन करने में सहायता देने के लिए किया जाता है। अतः इस सम्बन्ध में यहां अधिक जानकारी देना उपयुक्त नहीं है।

साक्षात्कार विधि के कुछ विशिष्ट उपयोग नीचे दिये जा रहे हैं –

i. साक्षात्कार विद्यार्थी के विषय में व्यक्तिगत सूचनाएं प्राप्त करने एवं समस्याएं जानने के लिए सुन्दर उपाय है। इसके द्वारा उपलब्धियों, आन्तरिक भावनाएं, इच्छाएं धारणाएं आदि से सम्बन्धित अज्ञात तथ्यों की प्राप्ति सम्भव है जिनको साधारण परीक्षण व प्रेक्षण आदि अन्य विधियों द्वारा एकत्रित करना कई बार कठिन होता है। उत्तर-प्रत्युत्तर की स्थिति में सूचनादाता अनुकर्त्ता के रूप में प्रेरित एवं उत्साहित रहता है, जिससे बातचीत के क्रम के बढ़ने के साथ-साथ विषय से सम्बन्धित नये-नये पहलू स्वतः अपने आप सामने आते रहते हैं। इससे उत्तरदाता के जीवन की भूतकालीन घटनाओं का अध्ययन भी सम्भव है।
ii. आमने-सामने की स्थिति में वार्तालाप करने से प्रश्नोत्तर के साथ-साथ सूचनादाता के भावात्मक उतार-चढ़ाव का निरीक्षण करना भी सम्भव होता है।
iii. अन्य विधियों द्वारा संगृहीत सामग्री का सत्यापन एवं नियन्त्रण करने में साक्षात्कार सहायक सिद्ध हो सकता है।

साक्षात्कार कैसे किया जाय? इस सम्बन्ध में साक्षात्कार की पूर्व तैयारी, प्रारम्भ में एकांतता स्थापित करना प्रश्न पूछने की कला, सूचनाओं को लिपिबद्ध करना आदि बातें महत्त्वपूर्ण हैं, जिन पर संक्षेप मे कुछ प्रकाश डालना आवश्यक है।

साक्षात्कार की पूर्व तैयारी करते समय किन-किन प्रश्नों को कब व किस क्रम से पूछना है यह निश्चित कर लेना चाहिए। समय भी निश्चित होना चाहिए। साक्षात्कार कितने समय में कर लेना चाहिए। यह उसके उद्देश्य पर निर्भर है स्थान का चयन सावधानीपूर्वक किया जाय जिससे साक्षात्कार शान्त व सौहार्दपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हो सके। जिससे साक्षात्कार किया जाय उसे पूर्व-सूचना देने के साथ-साथ साक्षात्कार का उद्देश्य भी स्पष्ट बता दिया जाय।

साक्षात्कार के प्रथम चरण में, तथ्य एकत्रित करने अथवा अन्य जानकारी प्राप्त करने के पूर्व, व्यक्ति से परिचय प्राप्त किया जाय। उससे एकतानता स्थापित करने के लिए मित्रता का वातावरण स्थापित किया जाय, पारस्परिक समझ उत्पन्न करके विश्वास व सद्भावना के भाव जाग्रत किये जाय तथा यदि कुछ संवेगात्मक बाधाएं हों तो उन्हें दूर करने का प्रयत्न किया जाए जिससे विश्वस्त एवं वांछित सूचनाएं प्राप्त हो सकें।

दूसरे चरण में , विषयाधारित छोटे-छोटे,भ्रांतिरहित, स्पष्ट व उद्देश्य केन्द्रित प्रश्न पूछे जाएं। एक साथ दो प्रश्न न पूछे जाएं। बीच-बीच में प्रेरणाप्रद वाक्य कहते रहना चाहिए। कभी-कभी प्रश्न पूछते समय अध्यापक क्रोधित

हो जाते हैं या अत्यन्त गम्भीर अथवा रोब जताते हुए दिखाई देते हैं। इस प्रकार की हरकतों से छात्र या तो उदासीन होकर प्रश्नों के उत्तर देते हैं या निराश व हतोत्साहित होकर बला टालने का प्रयत्न करते हैं।

प्रश्न पूछते समय यदि अति आवश्यक बिन्दु लिखने हों तो इस ढंग से व शीघ्रता से लिखे जाए कि वार्ता की तारतम्यता अथवा एकरूपता नष्ट न हो जाए। ये प्रश्न विवादग्रस्त है कि एक साक्षात्कार कर्त्ता सभी बातें लिखे या याद रखे या किसी अन्य व्यक्ति को लिपिबद्ध करने को कहे। यह उचित है कि साक्षात्कार की महत्त्वपूर्ण बातें उसी समय लिख लेनी चाहिए। इसमें कठिनाई यह है कि यदि व्यक्ति अत्यधिक संवेगशील है तो वह नोट लिखने में भड़क सकता है तथा कुछ बातें गुप्त रख सकता है। पर यह बात विशेषतया परामर्श हेतु व्यक्ति की समस्याओं में सहायता के लिए किए साक्षात्कार के साथ लागू होती है। जब समस्या संवेगपूर्ण न हो तथा व्यक्ति भी इतना अधिक संवेगशील न हो, तब साथ-साथ तथ्यों को लिपिबद्ध कर लेना ही ठीक होगा। यदि किसी तरह यह सम्भव न हो तो साक्षात्कार समाप्त हो जाने पर समस्त बातों का अभिलेख रख लेना चाहिए। अन्यथा कई मूल बातें या महत्त्वपूर्ण तथ्य छूट सकते हैं, क्योंकि साक्षात्कार कर्त्ता समस्त बातों को काफी समय तक क्रमबद्ध ढंग से मस्तिष्क में नहीं रख सकता।

अन्त में, साक्षात्कार कर्ता के लिये एक बात स्पष्ट कर देनी चाहिए । साक्षात्कार के द्वारा विद्यार्थियों से जानकारी प्राप्त करना यद्यपि सरल जान पड़ता है तथापि व्यक्तिगत समस्याओं पर साक्षात्कार करना नितान्त दुष्कर कार्य है। ऐसी दशा में साक्षात्कार-कर्ता का ज्ञान विस्तृत, और अनुभव विशाल होना चाहिए तथा उसे अपने संवेगों एवं पूर्वाग्रहों पर नियन्त्रण होना चाहिए। साक्षात्कार की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि साक्षात्कार-कर्ता का व्यवहार, सलीका व दृष्टिकोण कैसा है। यदि उसका व्यवहार भला है, स्नेह एवं ममत्व से परिपूर्ण है, वह क्रोध दिलाने वाली, ठेस पहुंचाने वाली, अथवा हीनता के भाव उत्पन्न करने वाली कोई बात नहीं करता तथा शिक्षा के आदर्शों के अनुसार मनोवैज्ञानिक सलीका अपनाता है तो साक्षात्कार एक उच्चस्तरीय मूल्यांकन -विधि सिद्ध हो सकता है।

6.8 प्रेक्षणात्मक विधियाँ

प्रेक्षण एक बहुत ही पुरानी गतिमान प्रक्रिया है जिससे परस्पर सम्पर्क में रहने वाले व्यक्ति सभी तथ्यों, घटनाओं एवं अनुभवों को ज्ञानेन्द्रियों के प्रत्यक्ष उपयोग से ग्रहण करते हैं एवं एक-दूसरे के प्रति अपना मत निश्चित करते हैं। मूल्यांकन तथा अनुसंधान की विधि के रूप में प्रेक्षण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस विधि को अधिक से अधिक परिष्कृत किया गया है और इसके आधार पर निर्धारण मापनी तथा उपाख्यानक प्रणाली आदि विधियों का विधान किया गया है। इस प्रकार यह विधि मूल्यांकन तथा अनुसंधान के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

यह विधि व्यक्ति की विषेषताओं का संकेत देने की दृष्टि से मूल्यवान है। अध्यापक, जो कि निरन्तर अपने विद्यार्थियों के सम्पर्क में रहते है, उनकी योजनाओं अभिरूचियों और व्यवहार के विशिष्ट लक्षणों को प्रेक्षण की सहायता से बहुत कुछ जान सकते हैं। अध्ययन की विधि किसी विशेष कार्य में सहयोग देने की योग्यता,

किसी कार्य को सावधानीपूर्वक करने की भावना अथवा तत्परता आदि लक्षणों का पता प्रेक्षण द्वारा लगाया जा सकता है।

प्रेक्षण कई तरह से किया जाता है। उपपत्ति या निर्देशित प्रेक्षण, नियंत्रित अनियंत्रित या मिश्रित प्रेक्षण, प्रमापीकृत या स्वाभाविक प्रेक्षण अलग रहकर बाह्य रूप या भागग्राही बनकर प्रेक्षण, सुनियोजिक या अतीत प्रभावी प्रेक्षण, वैयक्तिक या सामूहिक प्रेक्षण आदि इसके विभिन्न रूप हैं जो विभिन्न परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न उद्देश्यों के लिए प्रयुक्त किये जाते हैं। इन्हीं में से एक रूप है उपाख्यान जिसका प्रयोग अध्यापक कक्षा के भीतर व बाहर कर सकते हैं।

उपाख्यान का तात्पर्य है प्रेक्षित आकस्मिक व्यावहारिक घटनाएं। व्यावहारिक लक्षणों का प्रेक्षण करने के लिए कक्षा या कक्षा के बाहर होने वाली घटनाओं का ब्यौरा उपयोगी होता है। प्रत्येक अध्यापक किसी कार्ड या कागज पर विद्यार्थियों के अनेक प्रकार की व्यवहार सम्बन्धी घटनाएं अंकित कर सकता है। व्यवहार संबंधी तथ्य प्रशंसनीय भी हो सकते हैं और अशिष्टतापूर्ण कार्य भी। इसके लिए यह आवश्यक है कि अध्यापक छात्रों के व्यवहार का प्रेक्षण अत्यन्त सावधानी व तत्परता से करें। कुछ महत्वपूर्ण घटनाएं निरीक्षण में जब भी पायी जाए, लड़कों के नाम के साथ जोड़ दी जाए। उदाहरण के लिए कक्षा में पढ़ाते समय कुछ लड़कों की निकम्मे बैठे रहने अथवा इधर-उधर झांकने की आदत होती है। कक्षा में जो पढ़ाया जाता है उसकी ओर वे ध्यान नहीं देते। कुछ विद्यार्थी गृहकार्य दूसरे लड़कों की नकल करके ले आते हैं जबकि कुछ आशातीत कार्य कर लाते हैं। कभी-कभी वे ऐसी हरकतें करते हैं जिनसे उनकी सृजनात्मक शक्तियों का पता चल सकता है। इस प्रकार की घटनाएं एकत्रित करने के लिए लगातार निरीक्षण करना पड़ता है।

(छ) उपलब्धि-परीक्षण

उपलब्धि उप-परीक्षणों में किसी न किसी विषय की अध्ययन सामग्रियों के सम्बन्ध में प्रश्न सम्मिलित होते हैं जिनसे यह ज्ञात किया जाता है कि किस सीमा तक विद्यार्थियों ने इन अध्ययन सामग्रियों को ग्रहण किया है। इन परीक्षणों की सहायता से विद्यार्थियों द्वारा विभिन्न विषयों में अर्जित ज्ञान का मापन किया जाता है, उनका श्रेणीकरण किया जाता है तथा परिणामों के आधार पर उन्हें उत्तीर्ण अथवा अनुत्तीर्ण घोषित किया जाता है। इनकी सहायता से एक छात्र की दूसरे छात्र से, एक कक्षा के छात्रों की दूसरी कक्षा के छात्रों से, अथवा एक शाला के छात्रों की दूसरी शाला के छात्रों से विभिन्न विषयों में उपलब्धि अथवा अर्जित ज्ञान की तुलना की जा सकती है।

चूंकि ऐसे परीक्षणों का प्रयोजन यह होता है कि विद्यार्थियों का सर्वेक्षण किया जाए, इसलिए उन्हें हम सर्वेक्षण उपलब्धि परीक्षण कह सकते हैं। अतः सर्वेक्षण उपलब्धि परीक्षण वे परीक्षण हैं जो आम तौर पर विद्यालयों में समय -समय पर प्रयोग में लाये जाते हैं, इसलिये अधिकतर लोग इनके किसी न किसी रूप से परिचित होते हैं। परन्तु सर्वेक्षण के अतिरिक्त कुछ उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोजन भिन्न भी हो सकता है। विद्यार्थियों की विषय सम्बन्धी दुर्बलताओं का निदान करने अथवा उनकी विषय सम्बन्धी भविष्य की सफलताओं का कुछ सीमा तक पूर्वाभास करने के लिए भी ये परीक्षण प्रयोग में लाए जाते हैं। ऐसे परीक्षणों को क्रमशः निदानात्मक और पूर्वाभास परीक्षण कहते हैं।

निदानात्मक परीक्षणों में सम्मिलित विभिन्न प्रकार के उप-परीक्षणों के परिणामों की व्याख्या से विषय की विशिष्ट उपलब्धियों सम्बन्धी विद्यार्थी की समस्याओं का पता लगता है। इन परीक्षणों की सहायता से प्रत्येक विद्यार्थी की किन्हीं विषय इकाइयों में दुर्बलताओं की जानकारी कर उपचार किया जाता है। जिस प्रकार एक रोगी को डाक्टर विभिन्न प्रकार से देखता है, उसकी दुर्बलताओं का अध्ययन करता है और उसक पश्चात् रोग का इलाज करता है, उसी प्रकार से अध्यापक सर्वप्रथम अलग -अलग विषयों में छात्र की दुर्बलताओं तथा कमियों का निदान करता है। अतः निदानात्मक परीक्षण अध्यापक को विद्यार्थियों की विषय सम्बन्धी कमियों को समझने तथा उनको दूर करने में अत्यन्त सहायक होते हैं।

पूर्वाभास परीक्षणों से विद्यार्थी की किसी विशिष्ट विषय में अध्ययन करने की या उच्च शिक्षा प्राप्त करने की तत्परता का अध्ययन किया जाता है। छात्र भविष्य में किस क्षेत्र में अधिक ज्ञान अर्जित कर सकेगा अथवा किस विषय का अध्ययन अधिक सफलता के साथ कर सकेगा, इन प्रश्नों का उत्तर कुछ हद तक पूर्वाभास परीक्षण दे सकते हैं। इस प्रकार के परीक्षणों की जानकारी अभिक्षमता परीक्षण वाले अध्ययन में दी जाएगी।

प्रकार

किसी क्षेत्र में व्यक्ति की उपलब्धि मौखिक, लिखित एवं क्रियात्मक विधि से देखी जा सकती है। अतः परीक्षण विधि की दृष्टि से उपलब्धि परीक्षण तीन प्रकार के होते हैः मौखिक, लिखित व क्रियात्मक । इनमें से लिखित परीक्षण सब से अधिक प्रयोग में लाए जाते हैं और ये परीक्षण कई प्रकार के होते हैं, जैसे, निबन्धात्मक और वस्तुनिष्ठ तथा अध्यापक द्वारा निर्मित और मानकीकृत। यह वर्गीकरण नीचे एक सारणी द्वारा दिखाया गया है और उसके बाद इन विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

मौखिक विधि में परीक्षार्थियों से प्रश्न मौखिक रूप से पूछे जाते हैं जिनके उत्तर भी वे मौखिक रूप से ही देते हैं। आजकल मौखिक परीक्षणों का प्रयोग सामान्यतः विद्यालयों में प्रायः नहीं के बराबर होता है। इसके कुछ कारण यह है कि मौखिक रूप से एक समय में केवल एक ही परीक्षार्थी की परीक्षा हो सकती है, जिससे परीक्षार्थियों की बड़ी संख्या की परीक्षा लेने में समय अधिक लगता है। दूसरी बात यह है कि परीक्षार्थियों से पूछे गये प्रश्न भिन्न-भिन्न होते हैं। यह अवसर की बात हो सकती है कि किसी परीक्षार्थी से पूछे गये प्रश्न पूछ लिये जाएं जो सब के सब उसे आते हों, या उनमें से कोई भी न आता हो, या केवल कुछ ही आते हों। इसके अतिरिक्त परीक्षक प्रायः परीक्षार्थी की योग्यता के स्थान पर उसके व्यक्तित्व, बोलचाल के ढंग, उत्तरों की भाषा आदि बातों से प्रभावित हो जाता है। इस दशा में उसका मूल्यांकन उसके व्यक्तिगत दृष्टिकोण के कारण विषयनिष्ठ न होकर व्यक्ति निष्ठ रह जाता है।

इन परिसीमाओं के होते हुए छोटी कक्षाओं में, जहां पाठ्यक्रम बहुत थोड़ा होता जा रहा है, इस प्रकार के परीक्षणों का कुछ प्रयोग किया जाता है। भाषा-ज्ञान में अभिव्यक्ति आदि की जांच करने के लिए, तथा परीक्षार्थी के उच्चारण की शुद्धता आदि का पता लगाने के लिए, इनका विशेष महत्त्व है। ऊंची कक्षाओं में विषय ज्ञान की गहराई आंकने के लिए भी मौखिक परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। इससे परीक्षार्थी की

योग्यता का मापन तो होता ही है, परीक्षार्थी के सोचने और तर्क करने का ढंग, विचारों की शुद्धता,और क्रमबद्धता आदि का पता भी लग सकता है।

क्रियात्मक परीक्षणों में परीक्षार्थी किसी कार्य के द्वारा अपने विषय की उपलब्धि का परिचय देते हैं। इस प्रकार के क्रियात्मक परीक्षण संगीत, सिलाई, बुनाई, कताई , शिल्पकला, गृहविज्ञान तथा लकड़ी, कागज व चमड़े का काम आदि विषयों में लिये जाते हैं। इन विषयों में केवल पुस्तकीय ज्ञान ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि क्रियात्मक दक्षता अधिक महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि उसके बिना उस विषय का पुस्तकीय ज्ञान बेकार सा रहता है।

लिखित परीक्षण ही ऐसे है जिनका प्रयोग विद्यालयों में सब से अधिक किया जाता है। अतः अब उनके मुख्य प्रकारों (निबन्धात्मक तथा विषयनिष्ठ परीक्षणों) की विस्तृत चर्चा की जाएगी।

(ज) निबन्धात्मक परीक्षण

निबन्धात्मक परीक्षणों में छात्र पूछे गए प्रश्नों पर मनचाही टिप्पणी करते हैं, विचार प्रकट करते हैं, तर्क-वितर्क के माध्यम से कथन की पुष्टि करते हैं तथा आलोचना -समालोचना या प्रत्यालोचना भी करते हैं। इस प्रकार प्रश्न का उत्तर एक निबन्ध का स्वरूप ले लेता है।

निबन्धात्मक परीक्षणों की एक लम्बे समय से आलोचना की जाती रही है परन्तु इनका प्रयोग कम नहीं होता। कुछ ऐसी विशेषताएं अवश्य हैं जिनके आधार पर इनका महत्व अक्षुण्ण है। इन परीक्षणों के माध्यम से विद्यार्थी अपनी अभिव्यक्ति, भाषा, शैली, तर्क तथा विचार शक्ति का प्रदर्शन कर सकता है। इस विधि में प्रश्न इस प्रकर पूछे जाते हैं कि विद्यार्थी अपनी समस्त तर्क-वितर्क विचार-विश्लेषण, गहनता आदि विचार-क्षमताओं को प्रयुक्त कर लेता है। इससे उसकी मानसिक क्षमताओं का अध्ययन सहज में ही हो सकता है। साथ ही छात्र की स्वतन्त्रता का हनन नहीं होता। वह स्वतन्त्रतापूर्वक विचार प्रकट कर सकता है। अतः ये परीक्षण विषय सम्बन्धी तथ्यों की उपलब्धि को मापने के साथ ही साथ अन्य उच्च मानसिक शक्तियों का तथा उपस्थित परिस्थितियों में उनके प्रयोग करने की योग्यता का आभास भी कराते हैं।

जहां तक इन परीक्षणों की कमियों तथा त्रुटियों का प्रश्न है, वे सर्वविदित है। प्रचलित निबन्धात्मक परीक्षणों को देखने से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि इनमें काफी दोष है। एक अच्छे परीक्षण में जो विशेषताएं होनी चाहिए उनका उनमें प्रायः अभाव पाया जाता है।

प्रथम, निबन्धात्मक परीक्षणों में बहुत कम प्रश्न होने की वजह से ये प्रायः पूरे पाठ्यक्रम का पूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं करते । केवल कुछ ही प्रश्नों द्वारा पाठ्यक्रम के चुने हुये अंशों पर बल दिया जाता है और कई उद्देश्यों को भुला दिया जाता है। परिणामतः विद्यार्थी सम्पूर्ण पाठ्यक्रम में से कुछ गिने-चुने प्रश्न कुंजियों की सहायाजा से ही याद कर लेते हैं। शेष सारी पुस्तकें और पाठ्यक्रम धरा रह जाता है। पाठ्यक्रम के छोटे-छोटे महत्त्वपूर्ण स्थलों पर विद्यार्थी ध्यान नहीं देते। इस प्रकार विषय का उन्हें अधूरा ही ज्ञान रहता है।

प्रायः यह दावा किया जाता है कि निबन्धात्मक प्रश्नों द्वारा छात्रों के आलोचनात्मक चिंतन करने, तथ्यों की व्याख्या कर सकने व सामग्रियों को संगठित और व्यवस्थित कर सकने आदि की योग्यताओं का मापन किया जा सकता है। निबन्ध परीक्षाओं के अनेक प्रश्नों का अध्ययन करके यह अनुभव किया जा सकता है कि अधिकतर पुराने रटे हुए ज्ञान के प्रत्यास्मरण से कुछ अधिक वांछनीय नहीं होता। जो छात्र जितना अधिक रट लेता है वह उतना ही अधिक सफल माना जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मूल्यांकन की यह कसौटी दोषपूर्ण है।

निबन्धात्मक परीक्षाओं की न्यूनताएँ

प्रचलित परीक्षा प्रणाली में निबन्धात्मक परीक्षाएं अधिक प्रयुक्त होती हैं। उनके दोषों की चर्चा आये दिन सुनने को मिलती है। कुछ मुख्य दोष इस प्रकार हैः-

i. इनमें सूचना-स्तर पर ज्ञान की परीक्षा के प्रति अधिक जोर दिया जाता है। शिक्षण के अन्य उद्देश्यों की जांच करने की गुंजाइश नहीं होती है।
ii. प्रश्न -पत्रों में प्रश्नों का चुनाव शिक्षण-उद्देश्यों को ध्यान में रखे बिना किया जाता है और पाठ्य-वस्तु का नमूनाकरण दोषपूर्ण होता है।
iii. उत्तर -पुस्तिकाओं का अंकन करने में शिक्षक की आत्मनिष्ठता का प्रभाव पड़ता है।
iv. बहुत से अनावश्यक तथ्य केवल परीक्ष में उत्तीर्ण होने के लिए ही याद किए जाते हैं।
v. परीक्षाओं का इतना अधिक आधिपत्य है कि अध्यापक अपने विषय से सम्बन्धित कार्य को समाप्त करने में अधिक सक्रिय होता है और बालक के विकास आदि महत्त्वपूर्ण बातों पर ध्यान तक नहीं दे पाता है।
vi. परीक्षाओं द्वारा छात्रों को उत्तीर्ण अथवा अनुत्तीर्ण घोषित करना मुख्य लक्ष्य होता है। यह कभी कोशिश नहीं की जाती है कि उनसे छात्रों की अच्छाइयों तथा न्यूनताओं का पता लगाया जाए।
vii. प्रचलित निबन्धात्मक परीक्षाओं में गति तथा सुलेख का मूल्यांकन होता है,क्योंकी ऐसे छात्र जो तीव्र गति तथा सुन्दर लेख में उत्तर देते हैं, उन्हें प्रायः अच्छे अंक प्राप्त होते हैं।

गृह-कार्य

विद्यालयों में गृह-कार्य देने की प्रथा बहुत पुरानी है। बालकों को विषय से सम्बन्धित गृह-कार्य दिए जाते हैं। अधिकतर गृह-कार्य पाठ्य-पुस्तकों पर आधारति होते हैं। गृह-कार्य के सम्बन्ध में शिक्षा शास्त्रियों का मत एक जैसा नहीं है। कुछ शिक्षा-शास्त्री यह तर्क रखते हैं कि गृह-कार्य बालकों के मस्तिष्क पर अधिक बोझ लादने में सहायक होते हैं। बालकों को विद्यालय के अन्दर बहुत सी क्रियाएं करनी पड़ती है जिससे उन्हें शारीरिक तथा मानसिक थकान होना आवश्यक है। ऐसी दशा में गृह-कार्य की परम्परा अमनोवैज्ञानिक है। इसके विपरीत अनेक शिक्षा-शास्त्री यह स्वीकार करते हैं कि बालक के अन्दर कक्षा की क्रियाओं द्वारा उत्पन्न सीखने के अनुभवों को संगठित करने के लिए गृह-कार्य बहुत आवश्क है। उनके अनुसार गृह-कार्य अनुभवों के पुनबर्लन का कार्य करते हैं। कक्षा में जो अनुभव एवं ज्ञान बालक अर्जित करता है, उन्हें दृढ़ बनाने की दृष्टि से गृह-कार्यों

का बहुत योग-दान है। किन्तु गृह-कार्यो को प्रभावशाली एवं उपयोगी बनाने के लिए सावधानी बरतनी होगी। इसके लिए कुछ सिद्धान्तों पर बल देना चाहिए जो इस प्रकार है:-

i. **रुचि का सिद्धान्त-**गृह-कार्य बालकों की रुचि एवं स्वाभाविक प्रवृत्तियों के अनुकूल हो।
ii. **उपयुक्तता का सिद्धान्त**-गृह-कार्यों का चयन करते समय यह स्मरण रखना चाहिए कि वो पढ़ाए गए पाठों से सम्बन्धित हो और उनके द्वारा पाठ के मुख्य तथा महत्वपूर्ण पक्षों के दृढ़ीकरण पर जोर दिया जा रहा हो।
iii. **मितव्ययिता का सिद्धान्त**-कम से कम गृह-कार्यों द्वारा अधिक से अधिक सीखने के अनुभवों एवं ज्ञान का पुनर्गठन अभीष्ट होना चाहिए।
iv. **यथार्थता का सिद्धान्त**-गृह-कार्य भाषा तथा विषय दोनों ही दृष्टियों से शुद्ध होने चाहिये।
v. **स्पष्टता का सिद्धान्त**- गृह-कार्य की भाषा, सरल, स्पष्ट तथा बोधगम्य होनी चाहिए। विषय-वस्तु का कठिनाई-स्तर छात्रों की मानसिक योग्यता एवं विकास की अवस्था के अनुकूल होना आवश्यक है।
vi. **क्रमिकता एवं स्तरीकरण का सिद्धान्त**- गृह-कार्यों को क्रमिक रुप में तथा स्तरित तरीके से प्रस्तुत करना चाहिए। । गृह-कार्यों का क्रमपूर्वक व्यवस्थित होना ही पर्याप्त नहीं है। उन्हें स्तरित ढंग से रखे बिना उनकी उपयोगिता कम हो जाती है।

इस सिद्धान्तों पर ध्यान रखकर गृह-कार्यों का निर्माण तथा वितरण करना चाहिए।

गृह-कार्यो का स्तरीकरण

गृहकार्यो का स्तरीकरण तार्किक तथा मनोवैज्ञानिक दोनों ही दृष्टियों से न्यायसंगत है। बालक के सीखने की प्रक्रिया में तर्क पूर्ण विधि से व्यवस्थित सामग्रियां अधिक उपयोगी सिद्ध होती है। गृहकार्यो का एक तर्कपूर्ण श्रृंखला में व्यवस्थित कर देना ही स्तरीकरण कहलाता है। यह स्तरीकरण उनकी मानसिक योग्यता, रूचि एवं विकास अवस्था का दृष्टिगत रखकर किया जाता है। इस प्रकार गृह-कार्यो के स्तरीकरण में मनोवैज्ञानिक पक्ष बड़ा महत्त्वपूर्ण होता है।

स्तरीकरण के आधार

गृह-कार्यो का स्तरीकरण किस आधार पर किया जाना आवश्यक है? इस प्रश्न के उत्तर पर ही स्तरीकरण के बारे में आगे विचार किया जा सकता है। विद्यालयों में गृह-कार्य देते समय निम्नांकित आधार पर स्तरीकरण होना चाहिए।

i. छात्र के आधार-इसके अन्तर्गत छात्र की बौद्धिक एवं मानसिक क्षमता, परिपक्वता, आदानात्मकता तथा रुचि आदि बातों पर ध्यान दिया जाता है।
ii. शिक्षण के आधार पर-शिक्षक ने जिस स्तर पर शिक्षण आयोजित किया है तथा जिन सीखने के अनुभवों को प्रस्तुत किया है, उन्हें दृष्टिगत रखकर गृह-कार्य का स्तरीकरण सम्भव है।

iii. सीखने के स्तर के आधार पर-बालक किस गति के साथ नवीन ज्ञान तथा अनुभव अर्जित कर रहा है तथा किस स्तर एवं मात्रा में ग्रहण कर रहा है, से सभी बातें गृह-कार्यों को स्तरित करने में सहायक होती है।

iv. अपेक्षित शैक्षिणक स्तर के आधार पर- विद्यार्थी जिस कक्षा में पढ़ रहा है, उसमें किस प्रकार का स्तर अपेक्षित है, इस तथ्य पर भी ध्यान देना आवश्यक है।

गृह-कार्य का स्तरीकरण कैसे किया जाए?

गृह-कार्य को स्तरित करने के लिए जिन शिक्षण-सूत्रों का प्रयोग करना अत्यन्त आवश्यक है, वे इस प्रकार हैं-

i. **ज्ञात से अज्ञात की ओर**-गणित, विज्ञान तथा भाषा के पाठों में गृह-कार्य देते समय उनका स्तरीकरण इस सूत्र के अनुसार करना चाहिए। पहले तथ्य को प्रस्तुत करना जरुरी है जिससे बालक में चिन्तन शक्ति विकसित हो।

ii. **मूर्त से अमूर्त की ओर-** गृह-कार्यों का स्तरीकरण करने में इस सूत्र का प्रयोग करना नितान्त आवश्यक है। सर्वप्रथम ऐसे गृह-कार्य दिए जायें जो मूर्त तथ्यों से सम्बन्धित हों और तदुपरान्त अमूर्त तथ्यों से सम्बन्धित गृह-कार्यों को उपस्थित करना चाहिए।

iii. **सरल से जटिल की ओर**- शिक्षण का यह सूत्र बड़ा महत्वपूर्ण है।

iv. गृह-कार्यों का चुनाव कर लेने के पश्चात् वितरित करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि सबसे कठिन गृह-कार्य अन्त में हो।

गृह-कार्यों के स्तरीकरण के लिए प्रयोगात्मक विधि अपनाई जा सकती है। शिक्षक अपने विषय से सम्बन्धित सम्पूर्ण सत्र के गृह-कार्यों का चयन करके उन्हें प्रयोगिक रुप में छात्रों को दे सकता है और उनकी अभ्यास पुस्तिकाओं को देखकर कठिनाई स्तर का अनुमान लगा सकता है।इस तरह वस्तु-निष्ठ प्रमाणों के आधार पर गृह-कार्यों को स्तरित किया जाना सम्भव बन जाता है।

गृह-कार्यों के स्तरीकरण में सावधानियाँ-प्रायोगिक या तार्किक रुप में गृह-कार्यों का स्तरीकरण करते समय निम्नांकित सावधानियाँ बरतनी चाहिए:-

i. गृह-कार्यों को पठित विषय-वस्तु के अनुकूल होना चाहिए।

ii. गृह-कार्यों का क्रमिक ढंग से रखा जाना नितान्त आवष्यक है। उन्हें एक कड़ी के रुप में विकसित करना चाहिए।

iii. गृह-कार्य में परस्पर सामंजस्य होना चाहिए।

iv. गृह-कार्य को कठिनाई स्तर के अनुकूल व्यवस्थित करना चाहिए। उनके कठिनाई स्तर के बारे में वस्तुनिष्ठ एवं ठोस प्रमाण प्राप्त कर लेना चाहिए।

v. गृह-कार्यों का स्तरीकरण छात्रों की बोधग्रह्यता, रुचि एवं परिपक्वता पर आधारित होना आवश्यक है।

vi. गृह-कार्यों के स्तरीकरण में ऐसी व्यवस्था लाई जाए जिससे छात्रों के मस्तिष्क को एक प्रकार की उत्तेजना प्राप्त हो।

vii. गृह-कार्य नपे-तुले, निश्चित तथा ठोस हों।

अभ्यास प्रश्न

1. मूल्यांकन की क्या अवधारणा है?
2. मूल्यांकन के कार्य क्या है?
3. मूल्यांकन के कौन-कौन से चरण हैं?
4. रुपदेय मूल्यांकन तब होता है जब विद्यार्थी उन वर्षों से गुजर रहे होते हैं जब इन के रुप का निर्माण होता है।(सत्य /असत्य)
5. योगदेय मूल्यांकन एक निश्चित कालावधि, कोर्स, कार्यक्रम अथवा सैमेस्टर के प्रारम्भ में होता है। (सत्य/असत्य)
6. मानदण्ड सम्बन्धित मूल्यांकन का मुख्य उद्देश्य अभिक्रम/अनुदेशन की प्रभावशीलता का मापन करना है। (सत्य/असत्य)
7. मूल्यांकन एक----------प्रक्रिया है।
8. मूल्यांकन ---------- के सिद्धान्त पर आधारित होना चाहिए।
9. रुपदेय मूल्यांकन तथा ----------मूल्यांकन एक दूसरे के पूरक हैं।
10. ---------- ने सन् 1963 में मानदण्ड सम्बन्धित परीक्षण का प्रयोग किया था।
11. मानदण्ड परीक्षण का निर्माण अभिक्रम के अनुदेशात्मक उद्देश्यों की जाँच के लिये किया जाता है। इसमें प्रश्नों का प्रयोग होता हैः
    i. पूर्ति प्रश्न व बहुवचन प्रश्न
    ii. विकल्प प्रश्न
    iii. युगली करण प्रश्न
    iv. उपरोक्त सभी
12. मूल्यांकन प्रक्रिया के चरण हैं -
    i. उद्देश्य चयन
    ii. उद्देश्य विश्लेषण
    iii. प्रविधियों का चुनाव
    iv. उपरोक्त सभी

6.9 सारांश

इस इकाई अध्ययन के बाद आप यह जान चुके हैं कि दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन किस तरह कार्य करता है। मूल्यांकन की विभिन्न अवधारणायें क्या हैं। कभी न समाप्त होने वाले लक्ष्य निर्माण के वृत के लिए मूल्यांकन अनिवार्य है। सावधानीपूर्ण अंकन द्वारा किसी चीज के मूल्य या मात्रा का निर्णय या निश्चय करने की प्रक्रिया मूल्यांकन है। अतः हम कह सकते हैं कि दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसमें किसी वस्तु के लायक योग्यता की व्यवस्थित जाँच करना, तथा सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य छात्रों को ग्रेड प्रदान करना सम्मिलित है।

6.10 शब्दावली

1. **दूरस्थ शिक्षा**-दूरस्थ शिक्षा अधिगम विधि की कुछ ऐसी विषेषताओं को प्रकट करती है जो शिक्षा संस्थानों को अधिगम विधि से अलग करती है।
2. **मूल्यांकन**: यह उन निर्णयों की प्रक्रिया है जो योजना के आधार पर प्रयुक्त किए जाते हैं।

6.11 अभ्यास के प्रश्नों के उत्तर

1. मूल्यांकन का अर्थ है किसी वस्तु या प्रक्रिया का मूल्य निष्चित करना। यह उन निर्णयों की प्रक्रिया है जो योजना के आधार के तौर पर प्रयुक्त किए जाते हैं । इसमें लक्ष्यों की स्थापना, लक्ष्यों की ओर प्रगति के लक्ष्यों को संषेधन सम्मिलित है।
2. मूल्यांकन के निम्नलिखित कार्य हैं-
   i. छात्र निष्पादन/मूल्यांकन
   ii. कोर्स मूल्यांकन, अनुदेशनात्मक प्रयोजना
   iii. पाठ्यवस्तु की प्रभावशीलता का मूल्यांकन
   iv. विद्यार्थी सहायक प्रणाली का मूल्यांकन
3. मूल्यांकन के निम्न चरण हैं:
   i. उद्देश्य चयन
   ii. उद्देश्य विश्लेषण
   iii. परिस्थितियों का चुनाव
   iv. प्रविधियों का प्रयोग एवं परिणाम अंकन
   v. परिणामों का निर्वचन अथवा उनकी व्याख्या।
4. सत्य
5. असत्य
6. सत्य
7. निरन्तर

8. विद्यार्थी केन्द्रियता
9. योगदेय
10. ग्लेजर
11. उपरोक्त सभी
12. उपरोक्त सभी

6.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. वालिया॰ जे॰ एस (2009) शिक्षा तकनीकी, अहम पाल पब्लिशर्स, जालन्धर शहर (पंजाब)।
2. शर्मा॰ आर॰ ए॰ (2004) शिक्षा तकनीकी के तत्व एंव प्रबन्धन आर॰ लाल॰ बुक डिपो, मेरठ-2500
3. सक्सैना, एन॰ आर॰ स्वरुप (1994) शिक्षण कला एवं पद्धतियाँ (शिक्षण एवं परीक्षण के सिद्धान्त, लाल बुक डिपो, मेरठ।
4. वालिया जे॰ एस (1998) आधुनिक भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ, पाल पब्लिशर्स, जालन्धर (पंजाब)।
5. भाटिया एम॰ एम, नांरग सी॰ एल॰ (2009) हिन्दी शिक्षण विधियाँ विनोद प्रकाशन, लुधियाना।
6. पाण्डेय के॰ पी॰ (1998) शिक्षा में मूल्यांकन, मीनाक्षी प्रकाशन बेगम ब्रिज, मेरठ।
7. शर्मा आर॰ ए॰ (2011) अध्यापक शिक्षा एवं प्रशिक्षण तकनीकी आर॰ लाल॰ बुक, डिपो, मेरठ-25000।

6.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन की व्याख्या कीजिए। परीक्षा और मूल्यांकन में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
2. मूल्यांकन की अवधारणा की व्याख्या कीजिए। मूल्यांकन के कार्यों की विवेचना कीजिए।
3. रुपदेय मूल्यांकन क्या है? रुपदेय मूल्यांकन की विशेषताओं सिद्धान्तों एवं लक्ष्यों का उल्लेख कीजिए।
4. मान-दण्ड सम्बन्धित मूल्यांकन तथा मानक सम्बन्धित मूल्यांकन में विश्लेषण कीजिए।
5. दूरस्थ शिक्षा में कार्यक्रम-मूल्यांकन, पाठ्यक्रम-मूल्यांकन और विद्यार्थी मूल्यांकन की विवेचना कीजिए।
6. निम्नलिखित पर संक्षिप्त में नोट लिखो।
   i. मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्व।
   ii. लिखित, मौखिक और प्रयोगात्मक परीक्षाएँ

इकाई 7- दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों की विशेषताएं और समस्याएं

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 दूरस्थ शिक्षा एवं विद्यार्थियों की विशेषताएँ
7.4 शिक्षक अधिगम की समस्यायें
7.5 विद्यार्थी सहायक प्रणाली
7.6 दूरस्थ शिक्षा की विकासात्मक समस्याएं
7.7 व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम
7.8 अध्ययन केन्द्र
7.9 परामर्श सेवायें
7.10 सारांश
7.11 शब्दावली
7.12 अभ्यास के प्रश्नों के उत्तर
7.13 संदर्भ ग्रंथ सूची
7.14 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री
7.15 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

दूरस्थ शिक्षा से सम्बन्धित यह सातवीं ईकाई है, इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते है कि दूरस्थ शिक्षा क्या है? दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों की विशेषताएं समस्याओं का अध्ययन इस इकाई में प्रस्तुत है दूरस्थ शिक्षा की सहायक प्रणाली का सामान्य स्वरूप कैसा है? इसका विश्लेषण इस इकाई में कर सकेंगे। दूरस्थ शिक्षा अंश-औपचारिक शिक्षा की आधुनिक पद्धति है। दूरस्थ शिक्षा अधिगम विधि की कुछ ऐसी विशेषताओं को प्रकट करती है जो उसे शिक्षा-संस्थाओं की अधिगम विधि से अलग करती है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षार्थी अपनी गति से प्रगति कर सकता है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षार्थी अपने घर में एकान्त अध्ययन कर सकते हैं। वे किसी भी समय सुविधा अनुसार अध्ययन कर सकते हैं। दूरस्थ शिक्षा को परम्परागत शिक्षा प्रणाली का एक विकल्प मानते हैं। प्रत्येक शिक्षा प्रणाली की विद्यार्थी सहायक व्यवस्था को महत्वपूर्ण

पक्ष माना जाता है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों की विशेषताओं और समस्याओं तथा विद्यार्थी सहायक प्रणाली का विश्लेषण कर सकेगें।

7.2 उद्देश्य

इस ईकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।
2. दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों की समस्याओं की व्याख्या कर सकेंगे।
3. दूरस्थ शिक्षा की विद्यार्थी सहायक प्रणाली का विश्लेषण कर सकेगें।

7.3 दूरस्थ शिक्षा एवं विद्यार्थियों की विशेषताएं

दूरस्थ शिक्षा आज एक लम्बा रास्ता तय कर चुकी है। आज यह शैक्षिक प्रणाली का अभिन्न अंग ही नहीं बल्कि एक स्वतन्त्र और महत्वपूर्ण अनुशासन है। दूरस्थ शिक्षा अपनी अंतर्निहित गुणवत्ता के कारण तथा पारम्परिक शिक्षा से भिन्न होने के कारण वर्तमान परिदृश्य में अधिक उपयोगी और कारगार सिद्ध हो रही है।

प्रोफेसर कुलन्दयी स्वामी के अनुसार ''दूरस्थ शिक्षा कोई चुनाव या विकल्प का मुद्दा नहीं है, बल्कि यह समय की अनिवार्य मांग है''।

दूरस्थ शिक्षा वह शिक्षा व्यवस्था है जिसमें विद्यार्थी शिक्षा से भौगोलिक दृष्टि से दूर रह कर मुद्रित सामग्रियों तथा संचार माध्यमों के प्रभावशाली सम्प्रेषण द्वारा शिक्षा प्राप्त करते हैं। दूरस्थ शिक्षा विभिन्न शैक्षिक पृष्ठभूमि वाले तथा विविध भौगोलिक क्षेत्रों में विखरे शिक्षार्थियों या अधिगमकर्ताओं की एक बड़ी संख्या को उनकी रूचि और सुविधा के अनुकूल शिक्षा प्रदान करने का तरीका है, जिसमें उच्चकोटि की अधिगम सामग्री सम्प्रेषण तकनीकी तथा संचार माध्यमों का समुचित और व्यापक प्रयोग होता है। दूरस्थ शिक्षा में शिक्षण अधिगम भाषण या व्याख्यान द्वारा नहीं होता बल्कि शिक्षक संवाद या सम्प्रेषण की अति औपचारिक भाषा में तैयार की गई मुद्रित सामग्री दृश्य श्रव्य या श्रव्य दृश्य सामग्री द्वारा शिक्षार्थी को स्वतः स्फूर्त अधिगम में सहायता पहुंचाता है।

7.3.1 दूरस्थ शिक्षा की मुख्य विशेषताएं

1. दूरस्थ शिक्षा में पारम्परिक शिक्षा से भिन्न सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया और शिक्षार्थी के मध्य दूरी बनी रहती है।

2. दूरस्थ शिक्षा शिक्षार्थी केन्द्रित होती है। यह शिक्षार्थी की आवश्यकताओं एवं सुविधा पर केन्द्रित होती है। शिक्षार्थी अपनी गति एवं सुविधा के अनुसार सीखता है और उसे कोर्सों के चयन की स्वतन्त्रता होती है।
3. शिक्षक और शिक्षार्थियों को आपस में जोड़ने के लिए तथा पाठयक्रम को सुचारू रूप से चलाने के लिए मुद्रित सामग्रियों तकनीकी माध्यमों, श्रव्य दृश्य साधनों तथा कम्पयूटर आदि का प्रयोग होता है।
4. दूरस्थ शिक्षा जन शिक्षा की पद्धति है। यह शिक्षा को उन लाखों लोगों के पास ले जाती है जो किसी संस्था में नियमित रूप से शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके।
5. अधिगम की पूरी प्रक्रिया में शिक्षार्थियों का कोई समूह नहीं होता बल्कि शिक्षार्थी को व्यक्तिगत रूप से ही शिक्षण दिया जाता है इस सम्भावना के साथ कि समय-समय पर और समाजीकरण की दृष्टि से शिक्षक-शिक्षार्थी के मध्य साक्षात सम्पर्क का आयोजन किया जाएगा।
6. दूरस्थ शिक्षा पर खर्चा भी ज्यादा नहीं होता अतः यह कम खर्चीली है।
7. दूरस्थ शिक्षा समय और सीमा से मुक्त है।
8. दूरस्थ शिक्षा में रेडियो, दूरदर्शन,कम्प्यूटर आदि जनमाध्यमों का प्रयोग होता है।
9. दूरस्थ शिक्षा पारम्परिक शिक्षा से भिन्न है क्योंकि इसका दृष्टिकोण औद्योगिक है।
10. दूरस्थ शिक्षा अप्रत्यक्ष शिक्षा पद्धति है क्योंकि इसमें आमने सामने शिक्षा प्रदान नहीं की जाती।

7.3.2 दूरस्थ शिक्षा एवं विद्यार्थी

शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच कार्य सम्पादन ही शैक्षिक प्रक्रिया के केन्द्र बिंदु है अतः दूरस्थ शिक्षा को दूरी की बाधा दूर करते समय इस सत्यता को हमेशा ध्यान में रखना चाहिए। दूरस्थ शिक्षा वास्तव में दूरी से शिक्षा है। यह दूरी केवल भौतिक दूरी है। दूरस्थ शिक्षा में अधिगम पर सीखना विद्यार्थी की सुविधा एवं आवश्यकतानुसार होता है।

1. विद्यार्थी अपनी स्वेच्छा तथा स्वक्रिया द्वारा शिक्षा प्राप्त करता है।
2. विद्यार्थी अपनी गति व आवश्यकतानुसार विषय वस्तु सीखता है।
3. शिक्षक भौगोलिक दृष्टि से दूर रहकर ही पत्राचार संचार माध्यमों के द्वारा विद्यार्थी से जुड़कर अधिगम में आने वाली कठिनाइयों को दूर करते हैं।
4. दूरस्थ शिक्षा में वे विद्यार्थी सम्मलित होते हैं जो दूर ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं और जहां उच्च शिक्षा संस्थाए नहीं है।
5. दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक विद्यार्थियों द्वारा उतर पुस्तिकाओं पर शिक्षक अपनी टिप्पणियां भी लिखता है।
6. दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक से साक्षात शिक्षा न ग्रहण करते हुए भी विद्यार्थी अपने आप को शिक्षक से जुड़ा पाता है और अपने स्व अध्ययन की प्रवृत्ति को विकसित करने में समर्थ होता है।
7. दूरस्थ शिक्षा विद्यार्थी को कठोर औपचारिक नियमों और समय-सीमा में नहीं बांधती।

8. यह शिक्षा समूह अधिगम के स्थान पर व्यक्तिगत अधिगम पर अत्याधिक बल देती है।
9. दूरस्थ शिक्षा में शिक्षक और शिक्षार्थी के मध्य पत्राचार ही संचार का माध्यम होता है तथा जिसमें शिक्षार्थी और शिक्षक के मध्य एक अंतक्रिया आवश्यक होती है।
10. दूरस्थ शिक्षा दो आयामों पर केन्द्रित होती है, शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच की दूरी तथा शिक्षण अधिगम कार्यक्रमों का संरचनात्मक स्वरूप।
11. दूरस्थ शिक्षा अपनी अंतर्निहित गुणवत्ता के कारण जनसमूह की शैक्षिक मांग को पूरा करने में सक्षम है।
12. विभिन्न विद्यार्थियों की विभिन्न आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करने के लिए दूरस्थ शिक्षा जरूरी है क्योंकि इतनी विभिन्न आवश्यकतायें औपचारिक शिक्षा पद्धति से पूरी नहीं हो सकती।
13. कई विद्यार्थी आर्थिक भौतिक, भावात्मक एवं पारिवारिक स्थितियों के कारण दूसरों से अलग थलग हो जाते हैं। दूरस्थ शिक्षा ऐसे लोगों के लिए सहायक सिद्ध होती है।
14. जो विद्यार्थी उचित शिक्षा से वंचित रहा है। उसके आत्म विकास के लिए दूरस्थ शिक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
15. दूरस्थ शिक्षा में शिक्षार्थी अपनी गति से प्रगति कर सकता है।
16. दूरस्थ शिक्षा नियमित विद्यार्थियों के अध्ययन में पूरक का कार्य करती है।
17. दूरस्थ शिक्षा व्यवस्था विद्यार्थियों को आत्म निर्भरता तथा व्यवस्था योग्य अपेक्षित कुशलता प्रदान करने में समर्थ है तथा बदली हुई समाजिक आर्थिक एवं व्यवसायिक परिस्थितियों के लिए सर्वथा प्रासंगिक भी है।

दूरस्थ शिक्षा विद्यार्थियों की समस्याएं

दूरस्थ शिक्षा में क्रियात्मक अनुभव बहुत कम होता है। दूरस्थ शिक्षा पद्धति में विद्यार्थियों को सांस्कृतिक परिवर्तन एवं सामाजिक विकास के प्रति सचेत करने की सम्भावनाएं बहुत सीमित होती है। दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

i. दूरस्थ शिक्षा रजिस्ट्रेशन और प्रवेश की प्रक्रिया में समय और शक्ति खर्च करने वाली है।
ii. दूरस्थ शिक्षा के व्यवसायिक पाठ्यक्रमों का खर्च अधिक है।
iii. दूरस्थ शिक्षा में अधिगम सामग्री इतनी विस्तृत नहीं होती कि वह पूरे पाठयक्रम को समाहित कर सके।
iv. विद्यार्थियों के लिए अध्ययन केन्द्र एवं पुस्तक बैंकों की व्यवस्था बहुत कम है।
v. दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों को पाठय सामग्री डाक द्वारा भेजी जाती है। परन्तु इस पर रेडियो तथा दूरदर्शन पर उचित विचार विमर्श नहीं होता।

vi. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रमों में विद्यार्थियों को विभिन्न क्रियाओं के लिए अवसर नहीं मिलते। उन्हें केवल व्याख्यान ही सुनने होते हैं।
vii. दूरस्थ शिक्षा में अध्यापक की अनुपस्थिति को बहुत अनुभव किया जाता है। विद्यार्थी मार्गदर्शन को प्रतीक्षा करते है परन्तु उन्हें मार्गदर्शन नहीं मिलता।
viii. अधिगम सामग्री का मुद्रण अच्छे स्तर का नहीं होता।
ix. अधिगम सामग्री विद्यार्थियों तक समय से नहीं पहुंचती है।
x. दूरस्थ शिक्षा में मूल्यांकन प्रणाली बहुत विश्वसनीय और उपयोगी नहीं होती है।
xi. दूरस्थ शिक्षा में अनेक व्यावसायिक पाठ्यक्रम बिना किसी भौतिक संसाधनों के चलाए जाते हैं जिससे विद्यार्थियों को उपयुक्त साक्षात अनुभव नहीं मिल पाते हैं।
xii. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम कक्षाएं बहुत प्रभावशाली और उपयोगी नहीं होती है।
xiii. दूरस्थ शिक्षा में शिक्षण माध्यम भाषा पर विकल्प के प्रति ध्यान नहीं दिया दिया जाता है।
xiv. पत्राचार शिक्षण में शिक्षण सामग्री के लिए प्रयोग में आने वाला कागज अच्छा न होने के कारण लिखित सामग्री का जीवन बहुत कम होता है, जो अधिगम कर्ताओं को अधिगम के प्रति उदासीन कर देता है

अभ्यास प्रश्न

1. दूरस्थ शिक्षा की विशेषतायें क्या हैं?
2. दूरस्थ शिक्षा की समस्यायें क्या है?
3. पत्राचार शिक्षण वह शिक्षण विधि है जिसमें..... के मध्य पत्राचार ही संचार का माध्यम होता है तथा जिसमें शिक्षार्थी और शिक्षण के मध्य एक .....आवश्यक होती है।
4. दूरस्थ शिक्षा..... शिक्षा पद्धति है।
5. दूरस्थ शिक्षा रेडियो, दूरदर्शन कम्पयूटर आदि जन माध्यमों का प्रयोग नहीं करती है।(सत्य /असत्य)
6. दूरस्थ शिक्षा में क्रियात्मक अनुभव कम होता है। (सत्य /असत्य)

7.4.1 दूरस्थ शिक्षा में कक्षीय समस्याएं

कक्षीय समस्याओं को निम्नलिखित दो शीर्षकों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः-शिक्षण-अधिगम की समस्याएं ,कक्षीय प्रबन्धन की समस्याएं।

शिक्षण-अधिगम की समस्यायें

शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है क्योंकि इस में अध्यापक, विद्यार्थी और विषय-सामग्री तीनों का सम्बन्ध रहता है। यही शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया के तीन ध्रुव या तत्व हैं। शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में अध्यापक का व्यक्तित्व एंव व्यवहार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कारक है। विद्यार्थी भी कक्षा में कई प्रकार की

समस्यायें पैदा करते हैं। विषय-वस्तु एवं अधिगम-क्रियाओं के कारण भी कई समस्यायें उत्पन्न होती है। शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया से सम्बन्धित समस्याओं को कई उप-वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

1. अध्यापक के व्यवहार से सम्बन्धित समस्यायें,
2. अधिगम क्रियाओं से सम्बन्धित समस्यायें,
3. सामाजिक-संवेगात्मक समस्यायें।

अध्यापक के व्यवहार एंव अनुदेशन से सम्बन्धित समस्यायें-

किसी भी शिक्षा-पद्धति में अध्यापक का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। परन्तु शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में वह तब तक प्रभावशाली नहीं हो सकता जब तक वह विद्यार्थियों के साथ अच्छा क्रियाशील सम्पर्क स्थापित नहीं करता। अध्यापक के व्यवहार एंव व्यक्तित्व के साथ सम्बन्धित कक्षीय समस्यायें निम्नलिखित हैं-

i. **ज्ञान एंव तैयारी का अभाव-** अध्यापक में ज्ञान का अभाव कक्षा में कई समस्याओं का कारण बनता है। यदि उस का ज्ञान आधुनिकतम नहीं है तो वह प्रभावशाली ढंग से नहीं पढ़ा सकेगा। अध्यापकों के व्यावसायिक विकास तथा ज्ञान वृद्धि में कार्यशालायें सम्मेलन कोर्स, शैक्षिक मेले, विस्तार-भाषण आदि सहायक सिद्ध हो सकते हैं।
ii. **अध्यापक के व्यक्तित्व से सम्बन्धित समस्यायें**-अध्यापक का दुर्बल चरित्र उस का बुरा भावात्मक एंव मानसिक स्वास्थ्य उस की हताशायें और उस का तानाशाही अन्यायपूर्ण एंव पक्षपातपूर्ण व्यवहार कक्षा में कई प्रकार की समस्याओं का कारण बन सकते हैं। अध्यापक को मानसिक एंव भावात्मक रूप से स्वस्थ होना चाहिए।
iii. **कठोर व्यवहार अध्यापक का कठोर व्यवहार-** कई कक्षीय समस्याओं को जन्म देता है। विद्यार्थियों की मूल प्रवृतियों तथा भावात्मक एंव रचनात्मक शक्तियों और शारीरिक क्रियाओं का कठोर दमन विद्यार्थियों में तनाव बेचैनी घबराहट, हताशा आदि पैदा कर के उन के मानसिक स्वास्थ को प्रभावित कर सकता है।
iv. **अल्प-उपलब्धि एंव पिछड़ापन-** पिछड़े हुये बच्चे वे होते हैं जो कक्षा में अच्छी तरह नहीं चल सकते। वे पढ़ाई में कमजोर होते हैं और परीक्षाओं में अच्छे अंक प्राप्त नहीं करते। ऐसे बच्चे कक्षा की प्रगति में बाधक सिद्ध होते हैं क्योंकि इन्हें भी कक्षा के साथ घसीटना पड़ता है।
v. **समस्यापूर्ण व्यवहार-** अध्यापक के सहानुभूतिहीन एंव कठोर व्यवहार के कारण विद्यार्थियो में इस प्रकार का समस्यापूर्ण व्यवहार उत्पन्न हो सकता है। कक्षा में कठोर अनुशासन, अरोचक शिक्षण विधियां, विद्यार्थियों की भीड, विद्यार्थियों के प्रति अमनोवैज्ञानिक व्यवहार, पाठ्य सहायक क्रियाओं का अभाव एंव निर्देशन का अभाव आदि के कारण विद्यार्थियों में समस्यापूर्ण व्यवहार उत्पन्न हो सकता है।

सीखने की क्रियाओं से सम्बधित क्रियायें

i. **कठोर और बोझिल पाठ्यक्रम** - अध्यापक से समय पर पाठ्यक्रम समाप्त करने की आशा की जाती है। ऐसा पाठ्यक्रम जो कठोर, अत्यधिक पुस्तकीय, सैद्धान्तिक, अमनोवैज्ञानिक, परीक्षा उन्मुख तथा जीवन से असम्बन्धित होता है। वह विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुकूल पाठ्यक्रम में परिवर्तन नहीं कर सकता।

ii. **कठोर समय सारिणी**-बोझिल पाठ्यक्रम के कारण समय सारिणी इस प्रकार बनाई जाती है कि क्रियाओं के लिये समय ही नहीं रहता समय सारिणी इतनी लचीली अवश्य होनी चाहिए कि विभिन्न पाठ्य-सहायक क्रियाओं को समय दिया जा सके। यह लचीलेपन, विविधता, थकान, विश्राम एंव मनोरंजन के सिद्धान्तों पर आधारित होनी चाहिए।

iii. **ब्लैक-बोर्ड की समस्याएं**- कई-कक्षाओं में ब्लैक-बोर्ड नहीं होता । अधिकांश कक्षाओं के ब्लैक-बोर्डों पर पालिश नहीं होती। कहीं डस्टर और चाक नहीं होते। कई बार ब्लैक-बोर्ड पर लिखा हुआ साफ़ पढ़ा नहीं जाता या फिर दिखाई नहीं देता कक्षा में ब्लैक-बोर्ड, चाक और डस्टर अवश्य होने चाहिए।

7.4.1.1.3समाजिक-संवेगात्मक समस्यायें

अध्यापक को कक्षा में कई प्रकार की सामाजिक-संवेगात्मक समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। अध्यापक एंव विद्यार्थी में व्यक्तित्व का टकराव हो सकता है। इस संघर्ष में उसे कई प्रकार के मनोवैज्ञानिक तनावों में से गुजरना होता है।

किशोरावस्था में समस्यापूर्ण व्यवहार (सामाजिक-संवेगात्मक समस्याओं) के मुख्य कारण निम्नलिखित हैः-

i. **तीव्र शारीरिक वृद्धि**- किशोरावस्था में व्यक्ति की शारीरिक वृद्धि तेजी के साथ असन्तुलित रूप से होती है। शारीरिक अंगों की वृद्धि में सन्तुलित अनुपात नहीं होता।

ii. **संवेगात्मक बेचैनी-** किशोरावस्था संवेगात्मक बेचैनी की अवस्था है। इस अवस्था में व्यक्ति को मानसिक शान्ति एंव स्थिरता प्राप्त नहीं होती।

iii. **बौद्धिक विकास-** किशोरावस्था में बौद्धिक विकास भी चरमोत्कर्ष की ओर बढ़ने लगता है। इस अवस्था में तर्कपूर्ण चिन्तन, अमूर्त तर्क एकाग्रता, आलोचनात्मक चिन्तन, कल्पना आदि बौद्धिक शक्तियों का अच्छा विकास होता है।

iv. **घर का वातावरण**-किशोर कभी कभी घर और कक्षा के वातारण में सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाता। घर में सामंजस्य सम्बन्धी समस्यायें इस लिये पैदा होती हैं कि उस की आवश्यकतायें बढ़ जाती हैं और माता-पिता उन आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पाते।

7.4.1.2 कक्षीय प्रबन्ध की समस्यायें

1. **अपर्याप्त प्रकाश एंव वायु संचार-**अच्छे कक्षीय वातावरण में प्रभावशाली कार्य हो सकता है इस में प्रकाश और वायु संचार तथा फर्नीचर एंव बैठने का अच्छा प्रबन्ध सम्मिलित हैं। कक्षा में प्रकाश एंव वायु संचार की अपर्याप्त व्यवस्था विद्यार्थियों के लिये कई प्रकार की समस्यायें खड़ी कर देती है। कक्षा में प्रकाश और वायु संचार की सुव्यवस्था होनी चाहिए। कक्षायें खुली, साफ, सुथरी, हवादार तथा विद्यार्थियों के लिये सुविधाजनक होनी चाहिएं।
2. **अपर्याप्त फर्नीचर एंव बैठने की व्यवस्था-**अपर्याप्त एंव दोषपूर्ण फर्नीचर तथा बैठने की व्यवस्था के कारण कई प्रकार की कक्षीय समस्यायें उत्पन्न हो सकती हैं। विद्यार्थी लम्बे समय तक सख्त बैंचों पर नहीं बैठ सकते। बैठने के अपर्याप्त प्रबन्ध के कारण विद्यार्थी आराम से कक्षा में काम नहीं कर पाते। उन के लिये पढ़ाई में ध्यान देना कठिन हो जाता है।
3. **कक्षा में अत्यधिक भीड़-** अधिकांश स्कूलों में विद्यार्थियों की अत्यधिक भीड़ होती है। कहीं-कहीं में 70-80 से भी अधिक विद्यार्थी होते हैं। विद्यार्थियों से खचा-खच भरी कक्षा में अध्यापक के लिये कुशलतापूर्वक पढ़ाना कठिन हो जाता है
4. **अपर्याप्त उपकरण-**खचा-खच भरी कक्षा में सभी विद्यार्थियों के लिये उपकरणों की व्यवस्था करना अत्यन्त कठिन होता है। ऐसी स्थिति में विद्यार्थियों के लिये क्रियात्मक अभ्यास करना कठिन होता है।
5. **नित्यचर्या का अभाव-** नित्यचर्या के टूटने से कक्षा में अनुशासनहीनता उत्पन्न होती है। उपस्थिति लेने, प्रयोग करने कक्षा में आने और जाने तथा अन्य क्रियाओं में नित्यचर्या का पालन करना चाहिए।
6. **संशोधन कार्य की समस्यायें-** विद्यार्थियों से खचा-खच भरी हुई कक्षा में विद्यार्थियों के लिखित कार्य को शुद्ध करना असम्भव होता है।
7. **कक्षाओं का एक दूसरे के निकट होना-** अधिकांश कक्षायें एक दूसरे के इतनी निकट होती हैं कि एक कक्षा का शोर दूसरी कक्षा के विद्यार्थियों के काम में बाधक बन जाता है। इस से पढ़ाई की हानि होती है।
8. **अनुशासनहीनता की समस्यायें-**अध्यापक को कक्षा में अनुशासनहीनता की कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। प्रायः पीछे बैठने वाले विद्यार्थी अनुशासन भंग करते हैं।
9. **अनुपस्थिति की समस्यायें-** अध्यापक और विद्यार्थियों में अनुपस्थित रहने की प्रवृति के कारण कक्षीय शिक्षण पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

अभ्यास प्रश्न

7. शिक्षण अधिगम की क्या समस्याएं हैं?
8. कक्षीय प्रबन्ध की क्या समस्याएं हैं?

7.5.1 विद्यार्थी सहायक प्रणाली

शिक्षा की सहायक प्रणाली सामान्य स्वरूप के अतिरिक्त आवश्यक होती है। इसका सम्बन्ध विद्यार्थी अध्यापक अन्तः प्रक्रिया से होता है। इसके अन्तर्गत छात्रों को निर्देशन दिया जाता है तथा छात्रों की कठिनाइयों के लिये सुधारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जाती है। अध्ययन केन्द्रों पर विद्यार्थियों को पुस्तकालय की सुविधा दी जाती है अनुवर्ग-शिक्षण किया जाता है।

7.5.2 दूरस्थ -शिक्षा की विकासात्मक समस्याएं

क. शैक्षिक कार्यकर्ता
ख. गैर-शैक्षिक कार्यकर्ता
ग. सम्पर्क सेवा का भुगतान
घ. पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्रों का विकास
ङ. सॉफ्टवेयर तथा हार्डवेयर माध्यमों का विकास, तथा
च. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम।

1. **शैक्षिक कार्यकर्ता** - शैक्षिक कार्यकर्ता दूरस्थ शिक्षा की स्वतन्त्र संकाय होनी चाहिए, जिसके अन्तर्गत आचार्य, सहआचार्य व सहायक आचार्य नियुक्त किये जायें। इन पदों के चयन के समय विशिष्ट प्रवीणता के अभ्यर्थियों को नियुक्त किया जाये, इन्हें दूरस्थ छात्र की आवश्यकताओं तथा समस्याओं की जानकारी होनी चाहिए तथा अध्ययन तथा अनुदेशन सामग्री को लिखने का कौशल होना चाहिए।
2. **गैर-शैक्षिक कर्मचारी-** दूरस्थ शिक्षा में गैर-शैक्षिक कर्मचारी डाक-व्यवस्था में कुशल होने चाहिये। अभी तक इस दिशा में गम्भीरता से विचार नहीं किया गया है। इसके लिए कोई मानक भी विकसित नहीं हुआ है।

   गैर-शैक्षिक कर्मचारियों को अध्ययन सामग्री, तथा गृह-कार्यों को भेजना और पुस्तकालय व अध्ययन केन्द्रों की व्यवस्था के मुख्य कार्य होते हैं। परीक्षा तथा मूल्यांकन का आयोजन करना होता है। इसके लिए अलग से कोई नियुक्तियां भी नहीं होती हैं, और इन्हें कोई विशिष्ट प्रशिक्षण भी नहीं दिया जाता है।

   पत्राचार शिक्षा के लिये प्रूफरीडर, कार्टोग्राफर डिजाइनर, पाठ्य-सामग्री को रखने वाले तथा माध्यमों हेतु तकनीशीयनों की आवश्यकता होती है। परन्तु इस प्रकार के कर्मचारियों की नियुक्तियां नहीं की जाती है।
3. **सम्पर्क सेवाओं का भुगतान-** दूरस्थ -शिक्षा की आदर्श परिस्थिति यह होती है,कि समस्त क्रियाओं की व्यवस्था संस्था के अन्तर्गत की जाए परन्तु विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा विश्वविद्यालय के स्वरूप के अन्तर्गत सभी क्रियाओं हेतु सुविधायें तथा अर्थव्यवस्था नहीं की गई है। इसलिए पत्राचार-शिक्षा के अनेक कार्य, सम्पर्क कार्यक्रम, सम्पर्क सेवाओं से ही किये जाते हैं । इनका भुगतान समय पर नहीं होता है या निम्न दर से किया जाता है। इसलिये इसकी क्रियाओं में गुणवत्ता नहीं रहती है। भुगतान हेतु कोई मानक भी विकसित नहीं हुआ है।

4. **पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्रों का विकास-** विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने इस प्रकार के केन्द्रों के विकास पर बल दिया है तथा मानक भी निर्धारित किया गया है। इस प्रकार के केन्द्रों का लक्ष्य यह है पाठ्य सामग्री के अतिरिक्त अच्छी पुस्तकों पत्र पत्रिकाओं तथा निर्देशन व परामर्श की सुविधाओं को दूरस्थ -छात्रों को उपलब्ध करा सके। इसके लिए अच्छा भवन, कक्षायें, तथा शिक्षक आदि की सुविधायें मूल आवश्यकता है।
5. **सॉफ्टवेयर तथा हार्डवेयर का विकास-** कुछ विशेषज्ञों का विचार है कि दूरस्थ -शिक्षण हेतु शैक्षिक दूरदर्शन का उपयोग करना चाहिए। अध्ययन सामग्री को टेप करके अध्ययन केन्द्रों पर पहुंचाना चाहिए। पूना विश्वविद्यालय इस दिशा में अधिक प्रयास कर रहा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की समिति ने इसके शैक्षिक कार्यक्रमों का अवलोकन किया तथा स्नातक स्तर के छात्रों के लिए संस्तुति भी की है। शिक्षा के प्रसार तथा संचार हेतु दृश्य-टेप प्रयुक्त किये जायें। इसके लिए सॉफ्टवेयर सहायक सामग्री की आवश्यकता होती है। इस विचार को व्यवहारिक बनाने हेतु आर्थिक सहायता की आवश्यकता है।
6. **दूरस्थ शिक्षा की प्रमुख सहायक प्रणाली-** दूरस्थ शिक्षा की प्रमुख सहायक प्रणाली व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम है। शैक्षिक दृष्टि से यह आवश्यक है कि पाठ्यवस्तु को तैयार करके सम्पर्क कार्यक्रम में शिक्षण करे।

   दूरस्थ -शिक्षा संस्थाओं के शिक्षकों को इस कार्यक्रम के आयोजन की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। शिक्षक कार्यक्रम स्वयं तैयार करे और छात्रों की सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों को भी ध्यान में रखें।

7.5.3 व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम

दूरस्थ -शिक्षण में व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम सहायक प्रणाली का कार्य करता है। इस प्रकार के कार्यक्रमों की व्यवस्था इसलिए की जाती है जिससे विद्यार्थियों एंव अध्यापकों के मध्य अन्तः प्रक्रिया हो सके और छात्र अपनी कठिनाइयों हेतु निर्देशन तथा समाधान प्राप्त कर सकें। इन कार्यक्रमों से छात्रों को शैक्षिक लाभ होता है और शिक्षकों से सम्पर्क होता है। छात्रों की भावनाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, जिससे उन्हें स्वास्थ्य हेतु पुनर्बलन तथा मार्गदर्शन मिलता है।

सम्पर्क कार्यक्रमों में छात्रों की अध्ययन सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास किया जाता है, परन्तु इस कार्यक्रम का छात्रों को तभी लाभ होता है जब छात्रों ने पाठ्यक्रम सामग्री का पहले स्वाध्याय किया हो। अध्ययन सम्बन्धी विशिष्ट कठिनाइयों का ही स्पष्टीकरण किया जाता हैं सम्पर्क कार्यक्रम की अवधि सीमित होती है। इसलिए सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु का शिक्षण करना सम्भव नहीं होता है।

7.5.3.1 सम्पर्क कार्यक्रम में उपस्थिति

कुछ व्यावसायिक पाठ्यक्रमों तथा पुस्तकालय डिप्लोमा पाठ्यक्रम को छोड़कर अन्य सभी पाठ्यक्रमों में छात्रों की उपस्थिति अनिवार्य नहीं होती है। छात्रों की इच्छा पर निर्भर करता है, वह चाहे तो सम्पर्क कार्यक्रम

में सम्मिलित हों अथवा न हों। कुछ संस्थाएं सम्पर्क कार्यक्रमों की व्यवस्था भी नहीं करती है। विभिन्न संस्थायें सम्पर्क कार्यक्रम की प्रभावशीलता अपने-अपने ढंग से देखती हैं। कुछ इसे आवश्यक समझती है, कुछ नहीं समझती है। सम्पर्क कार्यक्रम संस्थाओं की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। वित्तीय साधनों का अभाव होने तथा पर्याप्त शिक्षक उपलब्ध न होने के कारण उचित व्यवस्था नहीं कर पाते हैं।

दूरस्थ -शिक्षा संस्थाओं के समक्ष विभिन्न प्रकार की कठिनाइयां तथा बाधायें होती हैं। जिस कारण से सम्पर्क कार्यक्रम की व्यवस्था नहीं करते हैं।

अपर्याप्त वित्तीय सहायता का होना- छात्रों को सम्पर्क कार्यक्रम हेतु समय अथवा अवकाश नहीं मिलता है। सम्पर्क कार्यक्रम के लिए स्थान तथा यातायात की समस्या होती है तथा संस्थाओं में सम्पर्क कार्यक्रम में शिक्षण हेतु अध्यापकों का अभाव होता है।

अपर्याप्त वित्तीय सहायता-सामान्य रूप से व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रमों की व्यवस्था उन्हीं स्थानों पर की जाती है जिन स्थानों पर छात्रों की संख्या 200 के लगभग केन्द्रित हो। इसलिए सम्पर्क केन्द्रों की संख्या भी सीमित होती है। इस कारण अधिकांश छात्रों को सम्पर्क कार्यक्रम का लाभ नहीं होता है। यदि वित्तीय सहायता पर्याप्त उपलब्ध हो तो सम्पर्क कार्यक्रमों की व्यवस्था अधिक स्थानों पर की जा सकती है।

अवकाश न मिलने की कठिनाई- दूरस्थ -शिक्षा में अधिकांश छात्र सेवारत होते हैं इसलिए उन्हें सम्पर्क कार्यक्रम हेतु अवकाश की आवश्यकता होती है। इतने लम्बे समय का अवकाश नहीं मिलता है। परिणाम यह होता है कि अवकाश न मिलने के कारण सम्पर्क कार्यक्रम के लाभ से वंचित रह जाते है।

यातायात तथा आवास की समस्या- सम्पर्क कार्यक्रम के लिए छात्रों को यातायात तथा आवासीय सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए, परन्तु इस प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था संस्थाओं द्वारा नहीं हो पाती है। इसलिए भी छात्र इस कार्यक्रम का लाभ नहीं उठा पाते हैं। यातायात में इस प्रकार के छात्रों को किसी प्रकार की सुविधा नहीं दी जाती है। जिन केन्द्रों पर इस प्रकार की सुविधायें उपलब्ध होती हैं वहाँ अधिकांश छात्र इस कार्यक्रम का लाभ उठाते हैं। दूरस्थ -छात्रों को रहने के लिए आवास की कठिनाई रहती है।

व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम की व्यवस्था में इन समस्याओं का ध्यान रखना होगा तभी दूरस्थ छात्र इसका पूरा लाभ उठा सकते हैं।

पत्राचार शिक्षा के विद्यार्थी सम्पर्क कार्यक्रम के महत्व की सराहना करते हैं कि उन्हें इस कार्यक्रम से पाठ्यवस्तु को समझने में सरलता एंव सुगमता मिलती है। दूरस्थ छात्रों का यह भी सुझाव होता है कि इसकी अवधि कम है, इस अवधि को बढ़ा देना चाहिये। भारतवर्ष में विभिन्न दूरस्थ शिक्षा की संस्थाओं के सम्पर्क कार्यक्रम की अवधि में भारी भिन्नता है। 2-3 दिन से लेकर 15 दिन तक की अवधि के लिए सम्पर्क क्रम किये जाते हैं। कुछ संस्थायें पाठ्यक्रम की आवश्यकता की दृष्टि से 20 से 30 दिन की अवधि के लिये सम्पर्क कार्यक्रमों का आयोजन करती है। अवधि का समय अधिक कर देने से छात्रों को अवकाश की कठिनाई होती है।

7.5.3.3 प्रयोगशाला, पुस्तकालय तथा अध्ययन केन्द्रों की सुविधायें

दूरस्थ -शिक्षा संस्थायें विज्ञान तथा तकनीकी विषयों के शिक्षण की भी व्यवस्था करने लगी है, जिसके लिए उन्हें प्रयोगशाला की सुविधा देनी होती है। इसके लिए अपनी स्वयं की प्रयोगशाला स्थापित करनी होती है। या अन्य संस्थाओं की प्रयोगशाला की सहायता लेनी होती है। इस प्रयोगशाला का उपयोग दूरस्थ छात्र अवकाश के दिनों में ही करते हैं। विज्ञान तथा तकनीकी विषयों को समझाने की दृष्टि से प्रयोग किए जाते हैं। सम्पर्क कार्यक्रम में प्रदर्शन भी किए जाते हैं। इन विषयों के शिक्षण हेतु प्रयोगशाला की सुविधा होना आवश्यक होता है।

7.5.4 अध्ययन केन्द्र

अध्ययन केन्द्र दूरस्थ -शिक्षा की सहायक प्रणाली का ही अंग होता है। इस प्रणाली की अध्ययन सम्बन्धी मूल सहायता इन्हीं केन्द्रों द्वारा दी जाती है। पाठ्यवस्तु सम्बन्धी सहायता, कौशल कठिनाइयों का निराकरण तथा पृष्ठ-पोषण व अभ्यास इन्हीं केन्द्रों पर किया जाता है। अध्यापक छात्रों से अपनी टिप्पणियों के सम्बन्ध में ज्ञात करते है कि छात्रों की क्या प्रतिक्रिया है? इसके आधार पर शिक्षक छात्रों को परामर्श देते हैं। सम्पर्क कार्यक्रम के समय छात्रों की सहायता करते हैं।

अध्ययन केन्द्र निरन्तर छात्रों के अध्ययन के लिए खुले रहते हैं छात्र सेमीनार, अध्ययन तथा परामर्श हेतु अध्ययन केन्द्र पर आते रहते हैं। इन केन्द्रों के खुलने का समय निर्धारित किया जाता है। इसमें छात्रों की सुविधा हो, तथा जो भवन किराये पर लिए गए हैं उसकी उपलब्धता को भी ध्यान में रखा जाता है। शिक्षक तथा अन्य कर्मचारी भी अंश कालिक होते हैं और परम्परागत शिक्षा संस्थाओं में ही इनकी व्यवस्था की जाती है। अध्ययन केन्द्र अवकाश के दिनों में अथवा सामान्य समय के अतिरिक्त समय में खोले जाते हैं। इस प्रकार साँयकाल तथा रविवार को यह केन्द्र खोले जाते हैं। दूरस्थ -शिक्षा में सेवारत छात्र होते हैं। इसलिए अवकाश के दिनों में अथवा सामान्य समय के अतिरिक्त समय में खोले जाते हैं। इस प्रकार सायंकाल तथा रविवार को यह केन्द्र खोले जाते हैं दूरस्थ -शिक्षा में सेवारत छात्र होते हैं। इसलिए अवकाश के दिनों में इन केन्द्रों को खोला जाता है।

दूरस्थ -शिक्षण के निर्धारण के लिए कुछ मानदण्डों को ध्यान में रखना चाहिये। अमुक अध्ययन केन्द्र पर अनुमानित छात्रों की संख्या कितनी होगी जो उस केन्द्र पर अध्ययन हेतु आयेंगे। उस केन्द्र पर पहुँचने के लिए छात्रों को कितनी दूरी तय करनी होगी तथा पहुँचने के साधन उपलब्ध होगें अथवा नहीं होंगे। यात्रा व्यय छात्रों को कितना करना होगा, उनकी पहुंच के अन्तर्गत होना आवश्यक होता है, तभी अध्ययन केन्द्रों का लाभ दूरस्थ छात्रों को मिल सकेगा। दूरस्थ -छात्र कब- कब अध्ययन के लिए आना चाहेंगे। इन सभी प्रश्नों के उत्तरों के बाद ही निर्णय करना होगा कि अमुक विद्यालय को अध्ययन केन्द्र बनाना सम्भव है अथवा नहीं है। अतः अधिकांश छात्रों की सुविधाओं को ध्यान में रखा जा सकता है। इस प्रकार के छात्रों के लिए अन्य माध्यमों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण सामग्री तथा अन्य सुविधाओं की भी आवश्यकता होती है। प्रधानाचार्य तथा विद्यालय के शिक्षकों की सहमति तथा सहयोग भी अपेक्षित होता है, क्योंकि विद्यालय की प्रयोगशाला तथा अन्य शिक्षण सामग्री मानचित्र, चार्ट आदि का भी उपयोग किया जाता है। शिक्षा संस्थाओं में ही यह सुविधायें उपलब्ध होती है। अन्य संस्थाओं में यह सुविधायें उपलब्ध नहीं होती है। सामान्यतः निम्नलिखित शिक्षण सामग्री अध्ययन केन्द्रों पर सुलभ होनी चाहिये-

1. पाठ्य पुस्तकें तथा सहायक पुस्तकें तथा सन्दर्भ पुस्तकें उपलब्ध हों,
2. विज्ञान तथा तकनीकी प्रयोगशाला विषयों के अनुसार उपलब्ध हो,
3. दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री रेडियो, दूरदर्शन भाषा प्रयोगशाला की सुविधा हो,
4. अन्य सूचनाओं सम्बन्धी सामग्री का होना,
5. कार्यालय सम्बन्धी सामग्री का होना
6. कक्षा-शिक्षण की सामग्री आदि का उपलब्ध होना,
7. स्टेशनरी तथा कार्यालय सम्बन्धी सामग्री का होना,
8. फोटो कॉपियर की सुविधायें आदि उपलब्ध होना।

अध्ययन केन्द्रों पर उपरोक्त में से कुछ ही सामग्री उपलब्ध होती है, परन्तु न्यूनतम शिक्षण सामग्री उपलब्ध होनी चाहिये, जो अधिकांश छात्रों के लिए उपयोगी होती है। सभी सामग्री का उपयोग कुछ ही छात्र करते हैं। न्यूनतम सामग्री में शिक्षण-कक्ष मेज, कुर्सी, श्यामपट, चाक तथा डस्टर होना चाहिए। अध्ययन केन्द्र पर विशिष्ट सामग्री में पाठ्य-पुस्तकें दृश्य-श्रव्य सामग्री, मानचित्र आदि की सुविधा भी होनी चाहिये।

7.5.4.1 अध्ययन सामग्री के भण्डारण की समस्याएँ

अध्ययन केन्द्रों में शिक्षण सामग्री का अक्सर अभाव होता है, क्योंकि भंडारण की समस्या होती है। इसलिए अध्ययन सामग्री को किराये पर लाना होता है, जिसमें व्यय अधिक करना होता है। अध्ययन केन्द्रों पर उपरोक्त सभी सामग्री उपलब्ध होनी चाहिये, तब अधिक किराया देना होगा, यह स्थायी व्यय हो जायेगा। अध्ययन सामग्री का भण्डारण केन्द्र पर किया जाये और आवश्यकता के समय अन्य केन्द्रों को दिया जाये। अध्ययन सामग्री के भण्डारण के लिए स्थान तथा कमरों की सुविधा होनी चाहिए।

अध्ययन सामग्री के सम्बन्ध में अन्य समस्या यह है कि सभी स्थानों पर बिजली नहीं होती है। इसलिए कम्प्यूटर तथा दृश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। दूरस्थ छात्रों को कई किलोमीटर यात्रा करके पहुंचना होता है। यातायात की सुविधा भी होनी चाहिए।

7.5.4.2 अध्ययन केन्द्रों की विशेषताएँ - अध्ययन केन्द्रों की स्थापना इसलिये की जाती है, जिससे दूरस्थ छात्रों को अध्ययन की सूविधाएं दी जा सकें। यह भी सहायक प्रणाली का अंग माना जाता है। इस प्रकार के केन्द्रों को शिक्षा संस्थान में भी स्थापित किया जाता है, जिससे दूरस्थ शिक्षा संस्थान को कम व्यय करना होता है। अध्ययन केन्द्रों की निम्नलिखित विशेषताएं होती हैं-

1. स्थानीय शिक्षा संस्थाओं में अध्ययन केन्द्र स्थापित किए जाते हैं जिससे अध्ययन का वातावरण भी छात्रों को दिया जा सके।
2. शिक्षण सामग्री की सुविधाएं सुगमता से मिल जाती हैं।
3. विभिन्न विषयों के शिक्षक तथा विशेषज्ञ भी उपलब्ध हो जाते हैं।
4. अध्ययन केन्द्रों के खुलने का समय अवकाश के दिनों में तथा सांयकाल का होता है।
5. दूरस्थ -छात्रों को सरलता से मिल जाता है। खोजने में कठिनाई नहीं होती।

अध्ययन केन्द्रों के कार्य

अध्ययन केन्द्रों के कार्य परम्परागत शिक्षा से बिल्कुल भिन्न प्रकार के होते हैं। एक अच्छी दूरस्थ -शिक्षा संस्था की प्रमुख विशेषता यह होती है कि परम्परागत शिक्षण के समान अध्ययन के अवसर दे सकें, परन्तु इस शिक्षण में सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु का अध्ययन नहीं किया जाता, अपितु कुछ चुनें हुए ही प्रकरणों का शिक्षण किया जाता है। अधिकांश समय शिक्षण के अतिरिक्त क्रियाओं में किया जाता है। दूरस्थ शिक्षा में अध्ययन केन्द्रों की एक क्रिया शिक्षण की होती है, जबकि परम्परागत में शिक्षण ही प्रमुख क्रिया होती है, अन्य क्रियायें गौण मानी जाती है। इस प्रकार शिक्षण एक प्रमुख क्रिया मानी जाती है।

क. शिक्षण समूह - शिक्षण एक अतिरिक्त क्रिया है, जो अध्ययन की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण होती है। इसकी पांच प्रमुख विषेषताएं होती हैं-

i. शिक्षण से अध्ययन कौशल का विकास होता है, जो दूरस्थ -छात्रों के लिए अधिक आवश्यक होती है।
ii. पाठ्यवस्तु सम्बन्धी कठिनाइयों तथा समस्याओं का समाधान किया जाता है, जिससे विषय को अधिक बोधगम्य बनाया जाता है।
iii. छात्रों को प्रयोगात्मक कार्य का अवसर दिया जाता है।
iv. छात्रों को समूह में रहकर अध्ययन का अवसर मिलता है।
v. व्यक्तिगत शिक्षण भी किया जाता है। भावात्मक पक्षों का विकास शिक्षण के सम्पर्क से ही होता है। अनुदेशन सामग्री से नहीं किया जाता है।

अध्ययन केन्द्रों पर सेमीनार तथा सामूहिक वाद-विवाद की व्यवस्था की जाती है। छात्रों में अध्ययन से आत्म-विश्वास का विकास होता है, कि वह जो कार्य कर रहे थे, वह बिल्कुल ठीक है।

i. अध्ययन केन्द्रों पर छात्रों के समूहों के बनाने में उनकी कठिनाइयों तथा समस्याओं को ध्यान में रखा जाता है। समूहों में इस प्रकार की सजातीयता रखी जाती है। कमजोर छात्रों को अधिक सहायता की आवश्यकता होती है।
ii. अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण में अतिरिक्त पाठ्य सामग्री का प्रस्तुतीकरण नहीं किया जाता है, अपितु उसी पाठ्य सामग्री को पढ़ाया जाता है जिसे पाठ सामग्री के रूप में उन्हें भेजा है या अन्य माध्यमों द्वारा प्रस्तुत किया है।

iii. सम्पर्क कार्यक्रम के शिक्षण में गृह-कार्यों के उत्तर किस प्रकार लिखें जाए, यह भी स्पष्ट हो जाता है। परीक्षा सम्बन्धी प्रश्नों को किस प्रकार लिखा जाये।

iv. माध्यमों के द्वारा कुछ प्रकरणों का प्रस्तुतीकरण कठिन होता है, ऐसे प्रकरण के लिये शिक्षण आवश्यक हो जाता है। शिक्षण द्वारा भावनात्मक अध्ययन को बढ़ावा मिलता है जो अन्य माध्यमों द्वारा संभव नहीं होता।

v. अध्यापक छात्रों की अन्तः प्रक्रिया द्वारा छात्रों के भावनात्मक पक्ष का विकास किया जाता है।

vi. गृह-कार्यों सम्बन्धी समस्याओं पर भी चर्चा की जाती है। प्रयोग-प्रदर्शन का विवरण सोपान के क्रम में किया जाता है। प्रवचन-विधि का भी अनुसरण किया जाता है।

vii. अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण के समय यह सभी क्रियायें करनी होती है। शिक्षण से पूर्व छात्रों की उपस्थिति भी ली जानी चाहिए। जो छात्र नियमित रूप से कक्षा में उपस्थित नहीं रह सकते हैं, उन्हें अन्य विकल्प से सहायता देनी चाहिए।

ख. **शिक्षण में माध्यमों का उपयोग-** कुछ दूरस्थ -शिक्षा संस्थायें शिक्षण में अन्य माध्यमों का भी प्रयोग करते हैं। केसिट का प्रयोग अधिक किया जाने लगा है। इसे शिक्षा की शक्तिशाली विधि मानते हैं, क्योंकि यह छात्रों के नियन्त्रण में होते हैं, इन्हें जब चाहे सुविधानुसार प्रयोग करते हैं।

अध्ययन केन्द्रों के शिक्षकों को इस प्रकार स्त्रोत तथा माध्यमों की जानकारी होनी चाहिए। इसके लिए प्रशिक्षण की तथा निर्देशन की आवश्यकता होती है। इन माध्यमों का उपयोग प्रभावशाली ढंग से किया जा सकता है। इनका उपयोग स्थानीय शिक्षकों द्वारा किया जा सकता है। पर्यवेक्षक स्वयं भी सीख और सामूहिक वाद विवाद की व्यवस्था कर सकते हैं।

ग. **व्यक्तिगत शिक्षण**-दूरस्थ -शिक्षा प्रणाली में पत्राचार के माध्यम से ही व्यक्तिगत सम्पर्क होता है, विशेष रूप से जब शिक्षक गृह कार्य दूरस्थ शिक्षा की प्रमुख सहायक प्रणाली की जांच करता है। पत्राचार से पृष्ठपोषण देना महत्वपूर्ण कार्य माना जाता है। पत्राचार में शिक्षण उतम प्रकार का होना चाहिए, क्योंकि दूरस्थ शिक्षा संस्थाएं इस पर अधिक ध्यान देती हैं। पत्राचार शिक्षा में इस तथ्य का विवेचन किया गया है।

पत्राचार का शिक्षक स्थानीय अध्ययन केन्द्र पर कार्य करता है, इसलिए छात्रों से संपर्क भी होता है। स्थानीय शिक्षकों को छात्रों की कठिनाईयों तथा समस्याओं का ही ज्ञान होता है, क्योंकि छात्रों की संख्या अधिक होती है और समय कम होता है। इसलिए छात्र एवं शिक्षक सम्पर्क अनौपचारिक तथा कभी-कभी ही होता है।

घ. **स्त्रोतों का उपयोग -** अध्ययन केन्द्रों को शिक्षण सामग्री से सुसज्जित करना अधिक महंगा होता है। इसलिए अध्ययन केन्द्रों पर कम-से -कम आवश्यक शिक्षण सामग्री की व्यवस्था ही की जाती है। दूरस्थ छात्रों को पाठ्य पुस्तकें, दूरदर्शन तथा रेडियों की सुविधाएं उपलब्ध होनी चहिए।

i. अध्ययन केन्द्र छात्रों के लिए वैकल्पिक व्यवस्था भी करते हैं। इसलिए छात्रों हेतु इन्हें अतिरिक्त स्त्रोत कहते हैं।

ii. दूरस्थ छात्रों को अध्ययन सामग्री जो घर पर भेजी जाती है, उसके लिए अध्ययन केन्द्र पूरक सामग्री का कार्य करते हैं।

iii. अतिरिक्त स्त्रोत साधन पाठयक्रम के सम्बन्धित होते है, जो पाठ्य अतिरिक्त आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

iv. पाठ्य पुस्तकों में सन्दर्भ के रूप में उल्लेख होता है जो उनसे सम्बन्धित होती है या जिनकी शिक्षकों द्वारा संस्तुति की जाती है। अध्ययन केन्द्रों पर पुस्तकालय की सुविधा होनी चाहिए और इस प्रकार की सहायक पुस्तकों को रखा जाए। छात्रों को बैठकर पढनें की सुविधा भी दी जानी चाहिए।

v. अध्ययन केन्द्रों पर महत्वपूर्ण पुस्तकों को रखा जाए, जिन्हें विश्वविद्यालय स्तर पर पढाया जाता है। दूरस्थ छात्र जो आन्तरिक क्षेत्रों में रहते हैं और उन्हें अच्छी पुस्तकें तथा पुस्तकालय देखने का कभी अवसर नहीं मिलता है।

vi. छात्रों को भेजी जाने वाली पाठ्य सामग्री इस दृष्टि से पूर्ण होनी चाहिए जिससे छात्रों को अतिरिक्त अध्ययन की

vii. अध्ययन केन्द्रों पर रिकॉर्डिंग की भी सुविधा होनी चाहिए जिन पाठ्यक्रमों का दूरदर्शन तथा रेडियो से प्रसारण किया जाता है, उनका रिकार्डिंग कर लिया जाए, और आवश्यकता पड़ने पर छात्रों को पुनः दिखाया या सुनाया जा सके, तथा जो छात्र वंचित रह गये, उन्हें भी उसका लाभ दिया जा सके।

viii. अध्ययन केन्द्रों पर इस प्रकार की सुविधाओं के सम्बन्ध में यह सुनिश्चित नहीं कर सकते कि सभी दूरस्थ छात्र इन स्त्रोत तथा साधनों का लाभ उठा सकेंगें। क्योंकि छात्रों को यातायात, रहने तथा बैठने आदि की व्यवस्था स्वयं करनी होगी। यदि वे सेवारत है तब दूरी के छात्रों को अवकाश लेना होगा। इस प्रकार के अध्ययन केन्द्र के समीपवर्ती छात्र पूरा-पूरा लाभ उठा सकते हैं।

ङ. **अन्य छात्रों से सम्पर्क-** दूरस्थ छात्र आपसी सम्पर्क तथा अन्तः प्रक्रिया से वंचित रहता है। यह सुविधा तथा अवसर अध्ययन केन्द्रों पर उन्हें मिल पाता है। इसके अतिरिक्त थोड़े समय के लिए व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम में अन्तः प्रक्रिया होती है। इसलिए छोटे समूह बनाकर वाद-विवाद की व्यवस्था करनी चाहिए। जिससे आपस में अन्त प्रक्रिया थोड़े समय में भी अधिक हो सके, क्योंकि बड़े समूह में अन्तः प्रक्रिया सम्भव नहीं होती है।

च. **प्रशासनिक क्रियायें**- अध्ययन केन्द्रों की शैक्षिक क्रियाओं तथा साधनों का वर्णन किया गया, परन्तु केन्द्रों के संचालन हेतु प्रशासनिक क्रियाओं का विशेष महत्व है।

छ. **अध्ययन केन्द्रों पर परामर्श सेवायें** - अध्ययन केन्द्रों पर कई प्रकार की क्रियायें की जाती हैं। एक या दो सप्ताह सम्पर्क के बाद छात्र जब अपने घर लौटता है तब उसे कई प्रकार के सुझाव तथा परामर्श दिये जाते हैं अध्ययन केन्द्रों पर दूरस्थ छात्रों की सभी प्रकार के निर्देशन तथा परामर्श की सेवाओं की व्यवस्था की जाती है।

7.5.5 दूरस्थ शिक्षा के पुस्तकालय

दूरस्थ शिक्षा की तीसरी सहायक क्रिया पुस्तकालय की सुविधा है। शैक्षिक क्रियाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पुस्तकालय के कर्मचारियों के सहयोग की आवश्यकता होती है। पुस्तकालयाध्यक्ष को अनुदेशन सामग्री तथा व्याख्यानों की व्यवस्था समुचित ढंग से करनी चाहिए। पुस्तकालय के उपयोग सम्बन्धी निर्देशन भी छात्रों को दिये जाएं। पोस्टर, नियमावली को सूचनापट्ट पर लगा देना चाहिए। छात्रों को पुस्तकालय के उपयोग हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए।

7.5.5.1 दूरस्थ छात्र हेतु पुस्तकालय सेवायें

दूरस्थ छात्रों के लिए पुस्तकालय तथा सूचना सेवाओं की सुविधा की व्यवस्था होना अधिक महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि ऐसी ही सुविधायें नियमित छात्रों के लिए होती है। विभिन्न दूरस्थ शिक्षा विश्वविद्यालयों की पुस्तकालय नीति अलग-अलग होती है।

भारतीय मुक्त विश्वविद्यालयों में छात्रों को डाक द्वारा पुस्तकें उधार लेने की व्यवस्था की गई है। कुछ विश्वविद्यालयों में फोटो कापी की सुविधा है। इसके लिए छात्रों से कोई अतिरिक्त फीस नहीं ली जाती है। उन्हें डाक द्वारा यह सुविधायें दी जाती हैं। यह सेवायें केन्द्रीय पुस्तकालय द्वारा ही की जाती है। कुछ संस्थायें अध्ययन केन्द्र के समीप की सरकारी पुस्तकालय का भी उपयोग करते हैं।

दूरस्थ संस्थाओं के पुस्तकालयों का लाभ हजारों विभिन्न वर्गों के छात्रों को मिलता है। यहां तक कि सम्पूर्ण देश के प्रौढ़ छात्रों को लाभ मिलता है। केन्द्रीय पुस्तकालय को इसकी व्यवस्था हेतु अनेक चुनौतियों का सामना करना होता है।

7.5.6 परामर्श सेवायें

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के विकास की सहायक क्रिया परामर्श सेवायें होती है।

मासलों के अनुसार परामर्श का अर्थ है।

" स्वयं तथा पर्यावरण के मध्य क्रमबद्ध खोज है जिसे परामर्शदाता स्वयं समझकर उसके व्यवहार परिवर्तन के लिए वैकल्पिक वातावरण के लिए परामर्श देता है। यह निर्णय या परामर्श ज्ञानात्मक तथा भावात्मक पक्षों की समझ के आधार पर होता है।

7.5.6.1 परामर्श के सिद्धान्त

सामान्य रूप से परामर्श मनोविज्ञान की एक शाखा है। एक डॉक्टर भी बीमार का मनोवैज्ञानिक उपचार करता है। सामान्य बीमारियों का उपचार मनोवैज्ञानिक ढंग से ही करता है और मरीज ठीक हो जाते हैं उपचार के सिद्धान्त की प्रकृति मनोवैज्ञानिक तथा भौतिक दोनों ही होती है।

मनोवैज्ञानिक उपचार 'फ्राइड' ने सर्वप्रथम दिया था। जो उसके मनोविश्लेषण सिद्धान्त पर आधारित है। बीमारिय अचेतन मस्तिष्क के दबाव का ही परिणाम होता है। आवश्यकताओं की सन्तुष्टि न होने पर अचेतन में दब जाती है।

मानववादी मनोवैज्ञानिक के कई समूह है जिनमें आपस में ही मतभेद है। जिनमें प्रमुख है - रोगेरियन जिसके प्रवर्तक कार्ल रोजर्स है। यह सिद्धान्त बहुत सरल है इसे अप्रत्यक्ष निर्देशन भी कहते है। बात-चीत के माध्यम से समस्या का स्पष्टीकरण किया जाता है। इससे परामर्श का कार्य किया जाता है। वह अपने ढंग से समस्या का उपचार करता है। इसके लिए विशिष्ट कौशल की आवश्यकता होती है।

7.5.6.2 परामर्शदाता की विशेषतायें

रोजर्स ने एक प्रभावशाली परामर्शदाता की विशेषताओं की पहचान की है, जिनमें प्रमुख विशेषतायें है - सच्ची लगन, स्वीकृति यथार्थता तथा सहानुभूति।

i. **सच्ची लगन-** इसमें परामर्शदाता सच्ची लगन से छात्र का स्वागत करता है जिससे वह अपने महत्व को समझने लगे। बडे उत्साह एवं प्रसन्न मुद्रा मे स्वागत करना चाहिए। इस व्यवहार में स्वाभाविकता होनी चाहिए।
ii. **स्वीकृति-** अन्य व्यक्तियों के विचारों तथा भावनाओं को भी स्वीकृति देनी चाहिए। आलोचना तभी करनी चाहिए जब उनकी भावनाओं तथा विचारों से हानि तथा कष्ट की सम्भावना हो।
iii. **यथार्थता -** परामर्शदाता के सुझाव में यथार्थता होनी चाहिए। तथ्यों को स्पष्ट रूप में रखना चाहिए। बचाव पक्ष के रूप में नहीं रखना चाहिए। छात्र तथ्यों की यथार्थता को समझ सके तथा अनुभव भी करने लगे।
iv. **सहानुभूति -** छात्र तथा अन्य व्यक्तियों की भावनाओं तथा अनुभवोंं की पूर्णरूप से सराहना करनी चाहिए। दूरस्थ शिक्षकों में यह गुण होते है तब वे इस शिक्षा प्रणाली की ओर छात्रों को आकर्षित करते है। परामर्शदाता चुनौतियों को सहर्ष स्वीकार करता है।

7.5.6.3 परामर्शदाता के कौशल

साधारणतः एक कुशल परामर्शदाता में प्रमुख तीन कौशल होते हैं - चयन करना, सुनना तथा स्वरूप विकसित करना।

i. **चयन करना-** इस अवस्था में किस प्रकार की अनुक्रिया की जाय, इनके चयन का कौशल होना आवश्यक होता है, जिससे समुचित ढंग से परामर्श दिया जा सके।
ii. **सुनना -** छात्र के व्यवहारों, अनुक्रियाओं तथा कथनों को ध्यान से सुनना चाहिए, जिससे छात्र में यह भावना विकसित होगी कि हमारी बात को कितने ध्यान से सुना जा रहा है। परामर्शदाता में विश्वास की भावना विकसित होगी तथा परामर्शदाता उसके कथनों के आधार पर समस्या का निदान भी कर सकता है।

iii. **स्वरूप विकसित करना-** सुनने के आधार पर कारणों को पहचान लेगा, निदान हेतु अपनी क्रियाओं का स्वरूप विकसित करेगा। समुचित प्रारूप विकसित करने पर ही समस्या का समाधान किया जा सकता है।

7.5.6.4 परामर्श का माध्यम

परामर्श देने की प्रक्रिया दूरस्थ छात्रों की भिन्न प्रकार की होगी, क्योंकि इसमें अपने प्रकार के माध्यमों का उपयोग किया जाता है। परामर्श के सम्बन्ध में तीन अवधारणायें है।

i. छात्र एवं परामर्शदाता के मध्य द्वि-मार्गीय प्रक्रिया है।
ii. परामर्श व्यक्तिगत रूप में दिया जाता है।
iii. परामर्श का स्वपक्रम या तो परामर्शदाता या छात्र द्वारा किया जाता है।

7.5.7 गृहकार्यों को जमा करना

छात्रों द्वारा गृहकार्यों को पूरा करके भेजने से यह जाहिर होता है कि वे अध्ययन में लगे रहते हैं। छात्र ने कितने गृहकार्य भेजे है, इससे उसके अध्ययन के घण्टों का आभास होता है। गृहकार्यों की सघनता छात्र के अध्ययन का परिचायक है तथा छात्र एवं शिक्षक का सम्पर्क भी अधिक होता है। छात्रों की निष्पत्ति में वृद्धि होती है। गृहकार्यों के माध्यम से छात्रों एवं शिक्षक के मध्य द्वि-मार्गीय सम्प्रेषण होता है। गृहकार्यों के जमा करने के अधोलिखित लाभ होते हैं।

क. छात्रों को अध्ययन हेतु प्रोत्साहन मिलता है।
ख. पाठ्यवस्तु की व्यवस्था भी समुचित ढंग से की जा सकती है।
ग. छात्र पाठ्यक्रम के प्रति तत्पर रहता है।
घ. छात्र का संस्था तथा शिक्षक से निकट का सम्बन्ध होता है।
ङ. छात्र को अपने अध्ययन में सुधार का अवसर तथा निर्देशन मिलता है।
च. छात्र को पुनर्बलन मिलता है।
छ. अध्ययन की समस्याओं एवं कठिनाइयों का समाधान मिलता है।
ज. पाठ्यक्रम सम्बन्धी महत्वपूर्ण प्रकरणों की जानकारी होती है।
झ. पाठ्यवस्तु को दुहराने अथवा अभ्यास का अवसर मिलता है, जिससे बोधगम्यता होती है।
ञ. गृहकार्यों को लिखने से प्रश्नों के उत्तर लिखने का अभ्यास होता है। छात्रों की लिखने की गति में वृद्धि भी होती है।

शिक्षक को दूरस्थ छात्र की आवश्यकताओं, समस्याओं तथा कठिनाईयों को ध्यान में रखना होता है। छात्रों को व्यक्तिगत रूप से अध्ययन हेतु प्रोत्साहित करना पड़ता है। दूरस्थ शिक्षक को अपने स्वयं के कार्यों द्वारा एक प्रभावी शिक्षक बनना होता है।

दूरस्थ शिक्षा संस्थायें छात्रों को व्यक्तिगत रूप से प्रोत्साहित करने के लिए सम्पर्क कार्यक्रम में अनुवर्ग शिक्षण की व्यवस्था करती है। अनुवर्ग शिक्षण में छात्रों की कठिनाईयों के अनुसार शिक्षण की व्यवस्था की जाती है। नियमित कक्षा शिक्षण से जो पाठ्यवस्तु छात्रों की समझ में नहीं आती है, उनके लिये अनुवर्ग शिक्षण की व्यवस्था उच्च शिक्षा में की जाती है, परन्तु दूरस्थ शिक्षा में जो अनुदेशन पाठ सामग्री छात्रों को अध्ययन हेतु भेजी जाती है। उसके समझने में छात्रों की जो कठिनाईयां होती हैं उसके लिए सम्पर्क कार्यक्रम मे अनुवर्ग शिक्षण की व्यवस्था की जाती है। अनुवर्ग शिक्षण की अनुदेशन पाठ सामग्री उपचारात्मक होती है। इसे व्यक्तिगत अनुदेशन भी कहते हैं। अनुवर्ग शिक्षण के लिए छात्रों की कठिनाईयों का निदान किया जाता है और उपचारात्मक अनुदेशन पाठ्य सामग्री भी तैयार की जाती है। अनुवर्ग शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए आवश्यक होता है।

i. छात्र तथा शिक्षक के मध्य व्यक्तिगत अन्तः प्रक्रिया अधिक हो,
ii. अध्ययन हेतु समुचित वातावरण उत्पन्न किया जाये। प्रत्येक प्रकार के छात्र को सीखना सुगम हो,
iii. छात्रों में आपस में तथा शिक्षक से निकट के सम्बन्ध विकसित हों।

अभ्यास प्रश्न

9. दूरस्थ शिक्षा की दो विकासात्मक समस्याएं लिखिए।
10. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम क्या हैं ?
11. अध्ययन केन्द्र दूरस्थ शिक्षा की सहायक प्रणाली का अंग नहीं है।(सत्य/असत्य)
12. अध्ययन केन्द्रों पर शिक्षण सामग्री तथा अन्य सुविधाओं की आवश्यकता होती है। (सत्य/असत्य)
13. दूरस्थ शिक्षा में पुस्तकालय सहायक क्रिया का हिस्सा नहीं है। (सत्य/असत्य)
14. परामर्शदाता के प्रमुख कौशल हैं।
    i. चयन करना
    ii. सुनना
    iii. स्वरूप विकसित करना
    iv. उपरोक्त तीनों

7.6 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान चुके हैं कि दूरस्थ शिक्षा वह शिक्षा व्यवस्था है जिसमें विद्यार्थी शिक्षकों से भौगोलिक दृष्टि से दूर रह कर मुद्रित सामग्रियों तथा संचार माध्यमों के प्रभावशाली सम्प्रेषण द्वारा शिक्षा प्राप्त करते हैं। दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों को शिक्षक के साथ जोड़ने में पाठयक्रम को सुचारू रूप से चलाने के लिए श्रव्य-दृश्य साधनों का प्रयोग होता है। दूरस्थ शिक्षा में क्रियात्मक अनुभव बहुत कम होता है।

दूरस्थ शिक्षा से विद्यार्थियों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कक्षीय वातावरण में शिक्षण अधिगम एवं कक्षीय वातावरण की समस्याएं सम्मिलित हैं। विद्यार्थी सहायक प्रणाली दूरस्थ शिक्षा में अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हुई है। दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों की समस्याओं के समाधान में विद्यार्थी सहायक प्रणाली सहायक सिद्ध हुई है।

7.7 शब्दावली

1. दूरस्थ शिक्षा: दूरस्थ शिक्षा अधिगम विधि की कुछ ऐसी विशेषताओं को प्रकट करती है जो उसे शिक्षा संस्थाओं की अधिगम विधि से अलग करती है।
2. विद्यार्थी: जो छात्र नियमित रूप से शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके
3. अनुवर्ग शिक्षण: व्यक्तिगत रूप में प्रोत्साहित करने के लिए सम्पर्क कार्यक्रम का आयोजन।

7.8 अभ्यास के प्रश्नों के उतर

1. दूरस्थ शिक्षा की निम्नलिखित विशेषताएं हैं:
   i. दूरस्थ शिक्षा शिक्षार्थी केन्द्रित होती है
   ii. दूरस्थ शिक्षा समय और सीमा से मुक्त है।
   iii. दूरस्थ शिक्षा अप्रत्यक्ष शिक्षा पद्धति है।
   iv. दूरस्थ शिक्षा पर खर्चा भी ज्यादा नहीं होता है। यह कम खर्चीली है।
2. दूरस्थ शिक्षा की निम्नलिखित प्रमुख समस्यायें हैं।:
   i. दूरस्थ शिक्षा में क्रियात्मक अनुभव कम होता है।
   ii. इस शिक्षा में अध्ययन केन्द्र व पुस्तक बैकों की व्यवस्था बहुत कम है।
   iii. अधिगम सामग्री कर मुद्रण अच्छे स्तर का नहीं होता है।
   iv. व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम कक्षाएं बहुत प्रभावशाली और उपयोगी सिद्ध नहीं होती हैं।
3. शिक्षक और शिक्षार्थी, अंन्तक्रिया
4. अप्रत्यक्ष
5. असत्य
6. सत्य
7. शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया त्रि-धुर्वीय प्रक्रिया है। अध्यापक व विषय सामग्री में सम्बन्ध रहता है। विद्यार्थी कक्षा में कई प्रकार की समस्याएं पैदा करता है। अध्यापक के व्यवहार व अनुदेशन सम्बन्धी समस्याएं रहती है। अध्यापक में ज्ञान का अभाव कक्षा में कई समस्याओं का कारण बनता है। अध्यापक का दुर्बल चरित्र पक्षपातपूर्ण व्यवहार कक्षा में समस्यादायक बन जाता है। कठोर व बोझिल पाठ्यक्रम कठोर समय सारणी शिक्षण संघ साधनों एवं विज्ञान उपकरणों की समस्या प्रमुख है।

8. अपर्याप्त प्रकाश एवं वायु संचार, कक्षीय प्रबन्ध की समस्या, अपर्याप्त फर्नीचर एवं बैठने की व्यवस्था के कारण कक्षीय समस्या उत्पन्न हो जाती है। संशोधन कार्य की समस्या, अनुशासनहीनता की समस्या व अनुपस्थिति की समस्या का शिक्षण पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
9. दूरस्थ शिक्षा की दो विकासात्मक समस्याएं
    a. शैक्षिक कार्यकता से सम्बन्धित समस्या।
    b. पुस्तकालय एवं अध्ययन केन्द्र से सम्बन्धित समस्या।
10. दूरस्थ शिक्षण में व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम सहायक प्रणाली का कार्य करता है। इस कार्यक्रम से शैक्षिक लाभ होता है। विद्यार्थियों की भावनाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।
11. असत्य
12. सत्य
13. असत्य
14. (iv)उपरोक्त तीनों

7.9 संदर्भ ग्रंथ

1. उपाध्याय, प्रतिभा (2003) भारतीय शिक्षा में उदीयमान प्रवृत्तियां, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
2. भाटिया, के॰ के॰ एवं अरोड़ा जे॰ एन॰ (1970) शिक्षण कला प्रकाश ब्रदर्स पुस्तक बाजार लुधियाना।
3. वालिया, जे॰ एस॰ (1998) आधुनिक भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं पाल पब्लिशर्स, जालन्धर शहर पंजाब।
4. शर्मा, आर॰ ए (2011) दूरस्थ शिक्षा, आर॰ लाल बुक डिपो मेरठ।

7.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. दूरस्थ शिक्षा की विशेषताएं एवं समस्याएं स्पष्ट करें।
2. दूरस्थ शिक्षा की मुख्य विशेषताओं का वर्णन किजिए।
3. निम्नलिखित पर संक्षिप्त में नोट लिखो।
    i. दूरस्थ शिक्षा एवं विद्यार्थी
    ii. शिक्षण अधिगम की समस्यायें।
    iii. कक्षीय प्रबन्ध की समस्यायें।
4. दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थी सहायक प्रणाली की संक्षिप्त में विवेचना कीजिए।
5. दूरस्थ शिक्षा में अध्ययन सामग्री के भण्डारण की कौन-कौन सी समस्याएं हैं?

6. व्यक्तिगत संम्पर्क कार्यक्रम का वर्णन करो।
7. दूरस्थ शिक्षा की विकासात्मक समस्याओं की विवेचना कीजिए।
8. संक्षिप्त में नोट लिखो।
   i. दूरस्थ शिक्षा में गृहकार्य
   ii. परामर्शदाता की विशेषताएं
9. दूरस्थ शिक्षा में अनुवर्ग शिक्षा से आप क्या समझते हैं? व्याख्या कीजिए।
10. दूरस्थ शिक्षा में विद्यार्थियों को किन-किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वर्णन कीजिए।